173

॥ ओ३म् ॥

सत्संग सुधा







स्वर्गीय श्री धर्मपाल बी० ए०, प्रभाकर

युगद्रष्टा, मानव जाति के उद्धारक आर्य समाज के संस्थापक



महर्षि दयानन्द सरस्वती

॥ ओ३म् ॥

सत्संग सुधा

सत्संग-सुधा का पान करो, ऊंचा जीवन निर्माण करो।
जन सेवा में तन-दान करो, मानवता का उत्थान करो ॥

रचयिता :
स्वर्गीय श्री धर्मपाल बी. ए., प्रभाकर

प्रकाशक एवं संकलनकर्त्ता
चन्द्र शेखर कपूर
74-गुजरा वाला टाऊन पार्ट II
जी० टी० रोड दिल्ली

षष्ट संस्करण : 1985

मूल्य : 5-50 लागत मात्र

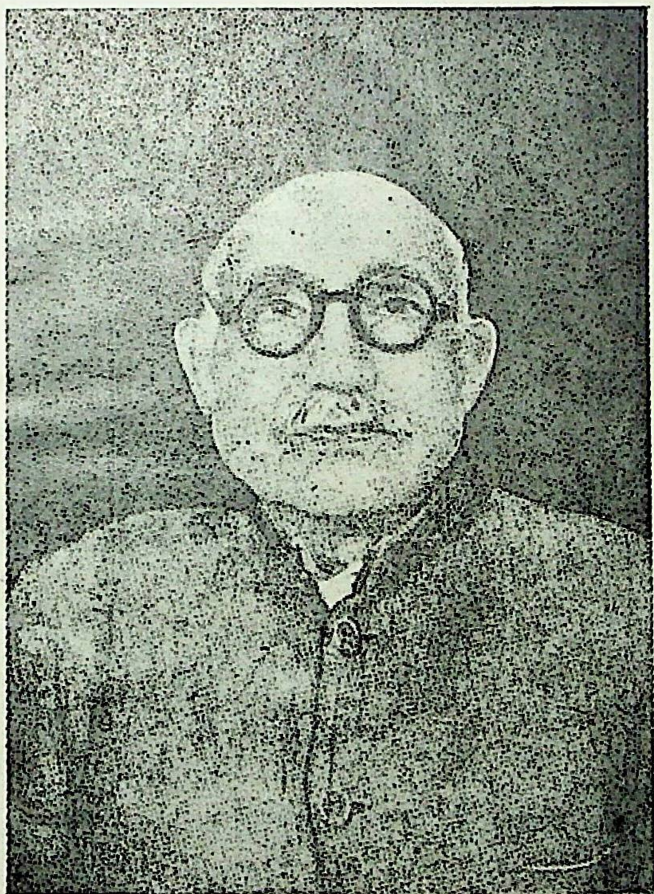
प्रकाशक :
चन्द्रशेखर कपूर
74, गुजरांवाला टाउन, पार्ट II,
दिल्ली-33
बाजार टोकरियाँ, अमृतसर

प्राप्ति स्थान :
आर्य समाज, 23 बी, गुजरां वाला टाऊन पार्ट II
देहली-33

मुद्रक :
संजय प्रिन्टर्स 1132 छत्ता मदन गोपाल,
मलीवाड़ा चाँदनी चौक, दिल्ली-110006

समर्पण

लेखक के पूज्य पिता

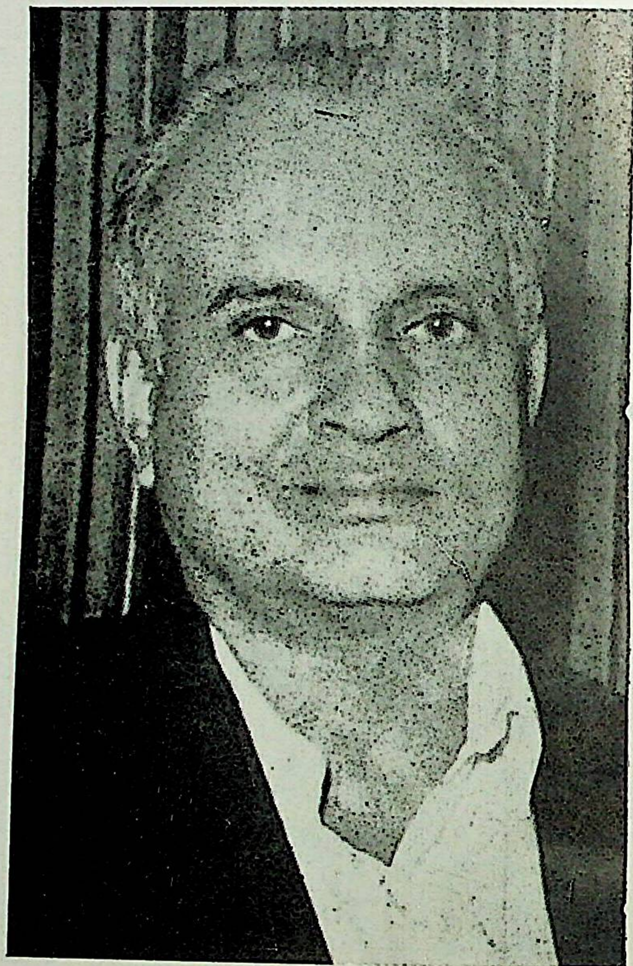


स्वर्गीय श्रीमान ला० रामदयाल जी कपूर

जन्म तिथि—आश्विन सुदी 9 संवत् 1944

देहावसान—24 मई 1967

लेखक



स्वर्गीय श्री धर्मपाल जी कपूर

जन्म—27-9-1913 देहावसान—17-11-1982

(भूतपूर्व प्रधान केन्द्रीय आर्य सभा, अमृतसर)

(भूतपूर्व उपप्रधान आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, पंजाब)

समर्पण



स्वर्गीय श्रीमती कैलाशवती कपूर

(प्रकाशक की पूज्यनीय माता जी)

जन्म—13-5-1916 **देहावसान—31-10-1972**

आशीर्वाद

गायत्री के जाप से, "पाल कटें दुःख पाप।
सावित्री की साधना, हरे सभी संताप॥

गायत्री का जाप जो, जीव जपे दिन रात।
दिव्य लोक मिलता उसे, मरने के पश्चात्॥

दुःख संकट में धैर्य से, जपना ईश्वर नाम।
सबसे रहना प्यार से, किसी किसी का काम॥

ओम् प्रेरणा का जिसे, मिल जाये वरदान।
जन्म सफल उस जीव का, हो जाये कल्याण॥

मांगू मैं जगदीश से, एक यही वरदान।
सुखी बसे कैलाश की, यह प्यारी संतान।

यही याचना आपसे, ईश्वर जगदाधार।
फूले फले कैलाश का, यह आर्य परिवार॥

यही कामना आज है, जगत्पिता भगवान्।
हो सुरभित कैलाश का, यह सुन्दर उद्यान॥

—धर्मपाल कपूर



समर्पण

आदर्श आर्य-ललना, दिवंगता पूज्य माता
श्रीमती कैलाशवती जी कपूर
(लेखक की धर्मपत्नी)
एवं
पूज्य पितामह श्री रामदयाल जी कपूर
(लेखक के पिता श्री)
की पावन स्मृति में
जिन्हें हम आजन्म भूल न पाएँगे

—चन्द्रशेखर कपूर

दो शब्द

आर्य्य समाजों के सत्संगों में व्यवहृत भजनों में प्रायः उर्दू शब्दों का बाहुल्य पाया जाता है, जिनसे प्रभु प्रेम की वह पुनीत भावना हृदय में नहीं आती, जो कि देववाणी संस्कृत के मधुर शब्दों से उत्पन्न होती है। दूसरे यह आक्षेप भी सुना जाता है, कि सत्संगों में वही पुराने भजन ही बार-वार दोहराये जाते हैं जनता चाहती है नूतनता। इन्हीं दो त्रुटियों के संपूत्यर्थ यह मेरा प्रथम प्रयास है। आर्य्य जनता ने इसके संक्षिप्त संस्करण (प्रथम भाग) को अपनाया जिससे समुत्साहित होकर यह दूसरा संस्करण परिवर्धित रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। आर्य्य समाज की यदि इससे अत्यल्प सेवा भी कर सका, तो अपना श्रम सफल समझूंगा।

अमृतसर
जून १९४४

धर्मपाल बी. ए.

कृपा करो करुणायतन, मेरा चित्त चकोर।
निश दिन आकर्षित रहे, भक्ति चन्द्र की ओर।
मनसा वाचा कर्मणा, रहूं, शुद्ध निष्पाप।
सायं प्रातः प्रेम से, करूं ओ३म् का जाप।
परधन वस्तु का कभी, करूं न मन में लोभ।
प्रभु चर्चा में चित्त रहे, पास न फटके क्षोभ ॥
जय जगदम्बे जय जनक, जय जय जगदाधार।
जय पुनीत पावन पिता, जय जय अपरम्पार ॥

पंचम संस्करण के सम्बन्ध में

"सत्संग-सुधा" का यह पाँचवाँ संस्करण गुणज्ञ पाठकों के कर-कमलों में प्रस्तुत है। चतुर्थ संस्करण समाप्त हुए बहुत देर हो चुकी थी। स्थानीय "वैदिक धर्म मिडल स्कूल" तथा "आर्य समाज, शक्ति-नगर" के सत्प्रयास से नये संस्करण के प्रकाशन के लिये कुछ आर्थिक व्यवस्था भी हो गई थी परन्तु "मनुआ के मन और है, विधना के मन और"। मेरी धर्मपत्नी श्रीमती कैलाशवती लगभग डेढ़ वर्ष से मुझे प्रेरित करती चली आ रही थीं कि "सत्संग-सुधा" का पाँचवाँ संस्करण शीघ्र प्रकाशित करो, पर उसे क्या पता था कि विधाता के विधान में इस नए संस्करण को उसी की स्मृति का संस्करण बनकर प्रकाशित होना है। इसलिये देर पर देर होती रही। अनेक सार्व-जनिक व्यस्तताओं के कारण प्रस्तुत संस्करण की पाँडुलिपि ही जुलाई सन् 1972 से पहले तैयार न हो पाई और जब यह अन्ततोगत्वा तैयार हुई तो तीन महीने प्रमादवश और बीत गये। दिनाँक 30 अक्तूबर, 1972 सोमवार को दृढ़ संकल्प किया कि अगले दिन प्रैस-कापी मुद्रणार्थ प्रैस में जरूर भेज दी जायेगी पर अगले दिन प्रातः 10½ बजे के लगभग रिक्शा और बस की दुर्घटना में उस पवित्र आर्य-ललना अर्धांगिनी का देहावसान हो गया। अब उस दिवंगता देवी की पावन प्रेरक स्मृति के रूप में ही इस संस्करण की मुद्रण-व्यवस्था की जा रही है।

प्रस्तुत संस्करण में पर्याप्त संशोधन किया गया है। पूर्व संस्करण के कुछ पुराने गीतों को निकालकर नये गीत सम्मिलित कर दिये गये हैं तथा गीतों की संख्या भी 100 के स्थान पर 131 कर दी है। संध्या

का भाग तो पूर्व संस्करण के समान ही है पर हवन मन्त्रों की क्रम-व्यवस्था में विधि तथा सुविधा की दृष्टि से कुछ परिवर्तन किया गया है। इन कारणों से चतुर्थ संस्करण की अपेक्षा इस संस्करण की पृष्ठ संख्या में भी वृद्धि हुई है। अन्यथा कागज एवं मुद्रण का व्यय भी बढ़ गया है पुनरपि इस प्रकाशन का प्रयोजन प्रचारमात्र ही होने से पुस्तक का मूल्य लागतमात्र ही रखा है।

आशा है इस परिवर्धित एवं संवर्द्धित कलेवर में "सत्संग सुधा" का यह प्रस्तुत संस्करण पाठकों को रुचिकर एवं उपयोगी प्रतीत होगा। वर्तमान युग में भौतिकता की बढ़ी हुई भूख से संत्रस्त प्राणी की प्रवृत्ति आध्यात्मिकता की ओर बढ़े, यही परम कारुणिक प्रभु से मेरी विनीत याचना है।

बाजार टोकरियाँ, अमृतसर,
ऋषि-बोध-दिवस,
दिनाँक 20-2-1974

धर्मपाल बी०ए०

छठा संस्करण

पूज्य पिताजी की तृतीय पुण्य तिथि (१७-११-८५) पर उनके बच्चों की ओर से स्मृति रूप 'सत्संग सुधा' का छठा संस्करण प्रस्तुत है। इससे पूर्व 'रसीले गायन', 'भक्ति शतक', 'सत्संग सुधा', 'गीत त्रावनी" 'पाल दोहावली', 'आध्यात्मिक गीत गंगा' आदि रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हैं। इन रचनाओं के रचयिता हमारे पूज्य पिताजी को बाल्यकाल से ही काव्य-रचना का चाव था। १३ वर्ष की अल्पायु में ही उन्होंने राष्ट्र-चेतना से ओत-प्रोत कविताएं लिखनी प्रारम्भ कर दी थी।

आपका जन्म २७-६-१६१३ को एक जागरूक एवं क्रांतिकारी विचारों के परिवार में हुआ। उनके पूज्य पितामह ला० ताराचन्द जी १३-४-१६१६ को जलियांवाला बाग गोली कांड में घटना-स्थल पर ही शहीद हो गए थे एवं इनके पूज्य पिताजी ला० रामदयाल जी कपूर इसी गोली कांड में गोली से गम्भीर रूप से घायल हुए थे। परन्तु सरकार द्वारा किसी भी क्षतिपूर्ति देने की पेशकश को इनके परिवार ने लेने से इन्कार कर दिया था। ऐसे राष्ट्र-प्रेमी परिवार के संस्कार-युक्त हमारे पूज्य पिताजी की प्रारम्भिक शिक्षा पं० परशुराम जी की छत्रछाया में हुई। जिनके प्रभाव एवं संस्कारों से इस परिवार में नव-चेतना एवं आर्य समाज के समाज सुधारों की ओर झुकाव हुआ। पूज्य पिताजी का यौवन जहाँ आर्य समाज की बौद्धिक चेतना के प्रचार-प्रसार में लीन हुआ, वहाँ इनका सम्पर्क महान् क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आजाद एवं सरदार भगतसिंह सरीखे, देश पर शहीद होने वाले परवानों से हुआ। उनकी गुप्त क्रांतिकारी गतिविधियों में सहयोगी रहे। इनका सारा जीवन मुख्य रूप से आर्यसमाज के लिए उत्सर्ग रहा।

राजनैतिक जीवन में इनका क्षेत्र प्रथम हिन्दू महासभा, तदुपरांत जनसंघ रहा। कैप्टन केशवचन्द्र जी, ज्ञानी पिंडीदास जी, महाशय रतनचन्द जी (मार्शल-ला-कैदी) इत्यादि महानुभाव इनसे राजनैतिक जीवन के मुख्य साथी थे।

इनका जीवन स्वाध्यायमय था—विभिन्न धर्मग्रन्थों वेद, रामायण, गीता, उपनिषद आदि ग्रन्थों पर गहरा स्वाध्याय किया और इन ग्रंथों पर इनकी प्रभावशाली एवं ओजपूर्ण अभिव्यक्ति इनके द्वारा दी गई विभिन्न स्थलों पर कथाओं से होती रहती थी। वाल्मीकि रामायण पर आधारित इनके खोजपूर्ण प्रवचनों के कुछ अंश हमें टेप करने का भी सुअवसर मिल गया था।

प्रस्तुत हैं पिताजी के आत्म-चरित्र के कुछ अंश—"छात्रावास से ही मैं देश और समाज सेवा के कार्यों में संलग्न रहा। सामाजिक क्षेत्र में मैं सन् १९३१ से ही आर्य-युवक समाज तथा आर्यसमाज की गति-विधियों में सक्रिय चला आ रहा हूँ। राजनैतिक क्षेत्र में मेरा सम्पर्क क्रांतिकारी आन्दोलन से रहा। सरदार भगतसिंह से सम्पर्क था, चन्द्रशेखर आजाद को एक रात अपने घर पर सुलाया भी था। क्रांति-कारी भावना के प्रचारार्थ उन दिनों कुछ गीत व नाटक भी लिखे। 'क्रांतिकारी भारत' तथा 'स्वदेश दर्शन' नामक दो नाटक (मेरे रचे हुए) गुप्त प्रचार का साधन भी रहे। केवल एक वर्ष जब चौधरी बुग्गामल प्रधान थे, मैं डिस्ट्रिक्ट कांग्रेस कमेटी (अमृतसर) का वर्किंग कमेटी का सदस्य रहा। 'नौजवान भारत सभा' का मैं सदस्य रहा तथा स्टूडेंट्स फेडरेशन का सैक्रेटरी रहा। स्वातंत्र्य वीर सावरकर का मैं हृदय से भक्त था और उन्हीं के कारण हिन्दू महासभा के क्षेत्र में आया। अमृतसर में हुए हिन्दू महासभा के सन् १९४२ के वार्षिक अधिवेशन की स्वागत-समिति का मैं आफिस सैक्रेट्ररी था। कानपुर, गोरखपुर, बिलासपुर, पूना इत्यादि स्थलों पर हुए हिन्दू महासभा के

वार्षिक अधिवेशनों में भाग लिया। सन् १९५७ में हुए हिन्दी रक्षा आन्दोलन के समय 'हिन्दी रक्षा समिति' का मैं प्रधान था। इस वर्ष मई से दिसम्बर तक मैंने इस आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण रोल अदा किया। अमृतसर में इस आन्दोलन में मेरी गिरफ्तारी सबसे पहली गिरफ्तारी थी। पीछे नजरबन्द करके मुझे नाभा जेल और बाद में पटियाला जेल में लगभग चार महीने बन्द रखा गया। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा का वर्षों सदस्य रहा हूँ। एक वर्ष इस सभा का उप-प्रधान भी रहा। केन्द्रीय आर्य सभा अमृतसर का वर्षों मंत्री तथा प्रधान रहा। सन् ५७ की नजरबंदी के दिनों में पर्याप्त चिन्तन के पश्चात् मैं इस निर्णय पर पहुँचा कि हिन्दू महासभा का मोह छोड़कर भारतीय जनसंघ को सशक्त करना चाहिए। जेल में ही मैंने अपने विचार कैप्टन केशवचन्द्र तथा ज्ञानी पिंडीदास के समक्ष रखे। केशव चन्द्र उस समय पंजाब प्रान्तीय हिन्दू महासभा के प्रधान थे। मेरे प्रति उनका कुछ विशेष ही स्नेह एवं विश्वास था। ज्ञानी पिंडीदास मेरे विचारों से सहमत न हो पाये। पर कैप्टन जी को मैं अपने विचारों से सहमत करने में सफल हुआ। जेल से रिहाई के पश्चात् कैप्टन केशवचन्द्र को जनसंघ में सक्रिय करने में मेरा ही विशेष प्रयास था। महाशय रतनचन्द जी से भी इसी सम्वन्ध में लगभग दो मास विचार-विनिमय होता रहा और अन्ततोगत्वा वह भी मुझसे सहमत हुए। पर कुछ कारणों से वह जनसंघ में सक्रिय नहीं हो पाए। प्रशंसक और पोषक के रूप में रहे। मई सन् १९५३ में मैं म्युनिसिपल कमेटी अमृतसर का सदस्य निर्वाचित हुआ और सन् १९६६ तक म्युनिसिपल कमिश्नर रहा। सन् १९६६ और १९६७ दो वर्ष अमृतसर इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट का ट्रस्टी भी रहा। अक्तूबर १९६७ में हुए पंजाब प्रान्तीय आर्य-वीर सम्मेलन की स्वागत समिति का प्रधान रहा तथा सितम्बर १९६८ में हुए प्रान्तीय आर्य सम्मेलन की स्वागत समिति का अध्यक्ष बना।

'सत्संग सुधा', 'रसीले गायन', 'भक्ति शत्तक', 'आर्य समाज' और 'राष्ट्रनिर्माण' तथा 'गीत बावनी' इत्यादि मेरी कुछ प्रकाशित रचनाएँ हैं।"

प्रस्तुत संस्करण में

जहाँ लेखक की विभिन्न रचनाओं से भजन संकलित किए गए हैं वहाँ लेखक के कई अप्रकाशित नवीन भजनों एवं ईश भक्ति से ओत-प्रोत गीतों का भी समावेश किया गया है। इसके साथ ही आर्यसमाज के सत्संगों एवं यज्ञादि अवसरों पर इसकी उपयोगिता सिद्धि के लिए इसके संकलित भाग में संध्या, हवन-मन्त्रों के साथ यज्ञ प्रार्थना आदि अंशों का भी समावेश किया गया है। यह संस्करण प्रभु भक्तों को ईश भक्ति एवं आत्मिक संतुष्टि में कुछ भी अभिवृद्धि कर सका एवं सच्चे आर्य बनने की सद्प्रेरणा दे सका तो अपना अहोभाग्य समझूंगा—

पितृ चरणों में सादर नमस्ते,—
जो थे कहते चलो ठीक रस्ते।
उनकी शिक्षा गहें, हम सुखी सब रहें, उनके जाये—
आज हैं ध्यान में पूज्य आए—
हम चिन्तन करें, मन में श्रद्धा भरें, गुनगुनायें—
आज हैं ध्यान में 'पापा जी' आए—

चन्द्रशेखर कपूर

कैलाश कुटीर
७४, गुजरांवाला टाऊन-II
देहली-३३
२१-६-१९८५

गीत संख्या

भक्ति दोहे

मंगलमय विभु, विघ्नहर, अखिल विश्व-आधार।
विघ्न दोष दल दूर हों, कृपा करो कर्त्तार॥

स्थावर जंगम जगत् के, निर्माता अखिलेश।
दया-वारि वृष्टि करो, कटें सभी दुख क्लेश॥

धन्य धन्य करुणानिधे, सुखद देव कर्त्तार।
करें नमस्ते नाथ हम, नत हो वारम्बार॥

देव दयालो दीन को, दया-दान दो नाथ।
करुणावरुणालय यही, विनय जोड़ कर हाथ॥

यही याचना नम्रता-सहित जोड़ कर हाथ।
परम पिता परमात्मन्, चरण शरण दो नाथ॥

महामहिम व्यापक विभु, विश्वम्भर परमेश।
अजर अमर अव्यय हरे, हरो दोष अघ क्लेश॥

परमब्रह्म परिभू पिता, स्वामी कृपानिधान।
देव दया कर दीजिए, दिव्य भक्ति वरदान॥

यही याचना ऽभ्यर्थना, दाता के दरबार।
भव्य भावना भक्ति की, बने जीवनाधार॥

विषय वासना विश्व में, विविध व्याधि आगार।
जीवन-रस सुख शान्ति का, ब्रह्मचर्य आधार॥

भक्ति साधकों को सदा, रहे निरन्तर ध्यान।
ब्रह्मचर्य इस मार्ग की, सर्व प्रथम सोपान॥

यौवन में प्रभु भजन कर, जो चाहे कल्याण।
यौवन में संयम किए, मिलें शीघ्र भगवान्॥



सत्संग–सुधा



गीत नं० १

तुझ को ध्यायें, जगदाधार—
निराधार निर्विकार ।
तुझ को ध्यायें, जगदाधार ।।
चरण—शरण जिसने लई, मिटे सकल संताप ।
करो कृपा काटो प्रभू, भव-बन्धन, दुःख पाप ।।
दिन रात तेरे ध्यान में अलमस्त मन मेरा रहे ।
हे ईश ! तेरे प्रेम की पावन यहां गंगा बहे ।।
हो "पाल" में भक्ति तेरी ।
तुझ को ध्यायें, जगदाधार ।



गीत नं० २

[तर्ज :—न किसी की आंख का नूर हूँ]

मेरे देवता सच्चे पिता, अपना पता कुछ तो बता ।
इसी जन्म में तुझे पा सकूं, दे दिखा मुझे तूं वह रास्ता। ।।
तुझे ढूँढा तीर्थ-स्थान में, गंगा व यमुना-स्नान में ।
गिरि, गहन बन, उद्यान में, फिर भी रहा तूं लापता ।।

जगी आज सात्विकी भावना, तूँ मुझे मिले यही कामना।
करूं हाथ जोड़ यह याचना, न वियोग-दुख से मुझे सता।
मेरी साधना की पुष्टि हो, मन में मधुर संतुष्टि हो।
दया-दृष्टि की कर वृष्टि, हो हे हरि, हरी आशा-लता ॥
तू महान् करुणा-निधान है, परिभू प्रभु भगवान् है।
तेरे ध्यान में कल्याण है, हो दूर भौगिक दासता।
हे कराल काल के अधिपति, कर 'पाल' की निर्मल मति।
बनूं संयमी सेवा-व्रती, न हो पाप से कुछ वासता ॥



गीत नं० ३

[तर्जः—गम दिये मुस्तकिल०]

जिसने पर्वत गगन, आग पानी पवन, सब बनाया—
हमने उस ईश में मन लगाया।
शव्द करती नदी बह रही है,
सनसनाती हवा कह रही है।
कैसी उन्मादनी, उस महादेव की, मधुर माया ॥
हमने उस ईश में मन लगाया ॥
सच्चिदानन्द व्यापक विधाता,
विश्व दिन रात गुण जिसके गाता।
भक्त-जन-तारिणी, मृत्यु-भय हारिणी, यस्य छाया ॥
हमने उस ईश में मन लगाया ॥
न्यायकारी निराकार स्वामी,
शम्भु शिव भक्तवत्सल नमामि।
भक्ति का रस पिये, मन में श्रद्धा लिये, गीत गाया।
हमने उस ईश में मन लगाया ॥

ध्यान-मुद्रा में रस मिल रहा है,
आत्मा का कमल खिल रहा है।
ओ३म् सुखकन्द है, आज आनन्द है 'पाल' पाया।
हमने उस ईश में मन लगाया।



गीत नं० ४

[तर्ज:—दयानन्द के वीर सैनिक बनेंगे]

यह ब्रह्माण्ड जिस देव ने है बनाया।
जो अणुमात्र में ईश्वर है समाया॥
निराकार अविकार आधार सब का।
बिना रूप रस के नहीं जिस की काया॥
बनाई यह पृथ्वी रचा अन्तरिक्ष।
है तारों से द्युलोक जिस ने सजाया॥
जिसे नेति नेति कहें शास्त्र सारे।
नहीं आज तक अन्त जिसका है पाया॥
जो बलदा तथा आत्मदा सर्वमाता।
है जिस ब्रह्म की अमृत छत्र-छाया॥
किया चन्द्र रवि को नियम-बद्ध जिसने।
यह ऋतुयें पवन जल सभी जिस की माया॥
मिले आत्मा में सुदर्शन है जिस का।
अगोचर जिसे वेद ने है बताया॥
समाधिस्थ योगी तपस्वी महर्षि।
मुनिवर्ग ने ध्यान जिसका लगाया॥
उपास्य वही, हम उपासक हैं उसके।
उसी का लगा ध्यान आनन्द पाया॥

गीत नं० ५

[तर्जः—विश्वपति के ध्यान में जिसने लगाई हो लगन]

जीवन-सुधार योजना प्यारो वनानी चाहिए।
अपनी विकास-साधना, आगे बढ़ानी चाहिए॥
मन का बिगाड़ बन्धुओं, दुःखों का मूल सर्वथा।
इस में भरी जो गंदगी, सारी मिटानी चाहिए॥
कल थे वहां व आज हम कितना हैं आगे बढ़ सके।
लेखा लगाना चाहिए, गिनती लगानी चाहिये॥
गंदे विचार पाप के, कारण विनाश का बनें।
इनकी पकड़ में आयें न, यह सावधानी चाहिए॥
जिसमें न भूख भोग की, आभा मगर हो ओज की।
संयम-सुधा से स्वस्थ हो, ऐसी जवानी चाहिए॥
खाया पिया व मर गये, ऐसी भला क्या जिंदगी।
मर कर भी याद जो रहे, जीवन-कहानी चाहिए॥
उग्र-गति से चल रहा, "पाल" कुचक्र काल का।
चलने से पूर्व छोड़नी, कुछ तो निशानी चाहिये॥



गीत नं० ६

[तर्जः—निर्बल के प्राण पुकार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे]

सत्संग-सुधा का पान करो, उन्नत जीवन निर्माण करो।
जन-सेवा में तन-दान करो, मानवता का उत्थान करो॥
प्रभु-भक्ति-सुधा का पी प्याला, ले ज्ञान-दीप का उजियाला।
फेरो सच्ची मन की माला, परब्रह्म विभु का ध्यान करो॥

भव-भौतिकता में चैन नहीं, क्षण भर मिलती न शान्ति कहीं।
सुख अन्दर है जा भक्त वहीं, अध्यात्म-नदी में स्नान करो ॥
सात्विक सारा संसार बने, हों दूर सकल संताप घने।
करलो उन्नत जीवन अपने, भौतिक सुख का वलिदान करो ॥
हो दूर विषमता नर नर में, सुख शान्ति विराजे घर घर में।
हम मग्न रहें भक्ति-सर में, भगवन् सवका कल्याण करो ॥
मन श्रेष्ठ बने शुभ कर्म किये, है धन्य मनुज पर हित जो जिये।
हे "पाल" हृदय-विश्वास लिये, सच्चे शिव का गुण-गान करो ॥



गीत नं० ७

[तर्ज:—गम दिये मुस्तमिल०]

मन को निर्मल बना, और मस्तक झुका, जगत् माता ॥
आज मैं ध्यान तेरा लगाता ॥
पत्ते पत्ते में तेरा पता है,
कौन कहता कि तू लापता है।
सच्चा साधक तुझे, ज्ञान के नेत्र से, देख पाता ॥
आज मैं ध्यान तेरा लगाता ॥
कैसा शीतल पवन बह रहा है,
भक्त के कान में कह रहा है।
जीव, कुछ होश कर, क्यों उसे भूल कर, कष्ट पाता ॥
आज मैं ध्यान तेरा लगाता ॥
वह विधाता, सकल सुख-प्रदाता,
क्यों तू उसकी शरण में न आता ?
भाग्यशाली है वो, पुण्य की पूंजी जो-है कमाता ॥
आज मैं ध्यान तेरा लगाता ॥

पाप-कर्मों से मन को हटा लो,
"पाल" व्यसनों से जीवन बचा लो।
कैसी अद्भुत अहा, प्रेरणा दे रहा, दिव्य दाता ॥
आज मैं ध्यान तेरा लगाता ॥



गीत नं० ८

[तर्जः—तू सब दुनिया का माली है]

हे नाथ, हमें मन-मन्दिर में अपना दर्शन दिखला दीजे।
हे करुणाकर, करुणा करके अपनी अनुभूति दिला दीजे ॥

मोहक माया ने काया को-है विषयागार बना डाला ॥
हे माया-स्वामिन्, माया का मोहक आवरण हटा दीजें ॥
मेरी जिज्ञासा प्रबल बड़ी, हे देव तुम्हारा दशन हो।
अपनी उपलब्धि के साधन का ज्ञान महान् दिला दीजे ॥

भौतिक भोगों का मोह मिटे, मैं आत्मरति अभ्यस्त बनूं ॥
दिन रात नशा उतरे न, मधुर मदिरा-अध्यात्म पिला दीजे ॥
मैं आत्म-समर्पण की इच्छा ले आया पास प्रभु तेरे।
हृत्तन्त्री को प्रेरित करके, मन के सब तार हिला दीजे ॥

ले भक्ति-भाव के पुष्पों को, सेवा में 'पाल' उपस्थित हैं।
दे दर्शन, देव, उपासक के मानस का कमल खिला दीजे ॥



गीत नं० ९

[तर्ज:—जय जय पिता परम आनन्द दाता]

हे नाथ, दाता, हमें भक्ति दीजे।
परमब्रह्म भगवान् हमें शुद्ध कीजे॥
कृपालो दयालो अगोचर दयामय।
सभी संकटों को, विभो, दूर कीजे॥

हम पाप—संताप घेरे हुए हैं।
स्व-सेवा में स्वामिन् हमें आप लीजे॥
प्रकाशित हमारी प्रभु बुद्धियें हों।
अनघ हों, सजग हों, कृपा ऐसी कीजे॥

सदा दूसरों की भलाई करें हम।
दुखी दीन को देख कर दिल पसीजे॥
यही 'पाल' की आप से याचना है।
हमें अपने कर्त्तव्य का ज्ञान दीजे॥



गीत नं० १०

[तर्ज :—नाथ फिर डूबते भारत को बचा लो अब तो]

हे पिता, प्रेम-सुधा हमको पिला दो अब तो।
नाथ, निज चरणों में भक्तों को लगा लो अब तो॥
तुम से जब दूर हुए घोर विपद्ग्रस्त हुए।
ईश्वर फिर से हमें पास बिठालो अब तो॥

आत्म-विश्वास नहीं, भूल चुके निज गौरव।
सुप्त हृत्तन्त्री हमारी को जगा दो अब तो॥

भूल बैठे हैं जो आदर्श सनातन अपने।
वेद-आलोक विभो हम को दिखा दो अब तो॥

हो चुका घोर पतन, हाय, हमारा जग में।
देव, फिर करके कृपा हम को उठा दो अब तो॥

दुःख विपद् क्लेश की घनघोर घटायें छाईं।
हे दया-सिन्धु दया-रवि प्रकटा दो अब तो॥

देश से चिन्ता मिटे और गरीबी न रहे।
शाँति-गंङ्गा को यहां फिर से बहा दो अब तो॥

'पाल' फिर देश में बल, शक्ति तथा ऐक्य बढ़े।
देश-भक्ति का नशा, नाथ पिला दो अब तो॥



गीत नं० ११

[तर्जः—क्या कहें क्या भक्त पाता है प्रभु के ध्यान में]

"ओम् स्मर" नर, "ओम् स्मर" नर, ओम् पालनहार है।
ओम् प्राणाधार है, कर्त्तार जगदाधार है॥
ऋषि मुनि योगी प्रणव-महिमा का वर्णन कर गये।
ओम् में जब मन रमे, खुल जाये मुक्ति-द्वार है॥
सृष्टि-नियमों का नियामक, सर्व-व्यापक ओम् है।
ओम् ने ही है रचाया, यह सकल संसार है॥
भव-भयानक सिन्धु में है डूबने का डर सदा।
ओम्-नौका पर चढ़ो, तो, भक्त, बेड़ा पार है॥
"ओम् भू" के जाप से, सब पाप होते लोप हैं।
भव्य भक्ति-भावना ही, भक्त का श्रृंगार है॥

झूठे देवी देवताओं का न आकर्षण मुझे।
"पाल" मन मन में बसा, बस ओम् ही का प्यार है ।।



गीत नं० १२

[तर्जः— शुद्ध बुद्ध भगवान्०]

महामूर्ख अज्ञानी, जो न ओम् जपे।
जल जाये वह वाणी, जो न ओम् जपे ।।

ओम्—ब्रह्म की अद्भुत माया,
जीव—भोग—हित विश्व रचाया।
बड़ा अभागा प्राणी, जो न ओम् जपे।
जल जाये वह वाणी जो, न ओम् जपे ।।

ओम्—जाप सब पाप मिटाये।
मानव—मन—को शुद्ध बनाये।
अधम अज्ञ अभिमानी, जो न ओम् जपे ।।
जल जाये वह वाणी, जो न ओम् जपे ।।

प्रातः का यह समय सुहाना,
ओम्—भक्ति का गाओ गाना।
होगी जीवन-हानि, जो न ओम् जपे ।।
जल जाये वह वाणी, जो न ओम् जपे ।।

यौवन में जो भजन करेगा।
निश्चय वह भव—सिन्धु तरेगा ।।
उसकी व्यर्थ जवानी, जो न ओम् जपे ।।
जल जाये वह बाणी, जो न ओम् जपे ।।

रोम रोम में ओम् बसा है,
मन में छाया भक्ति—नशा है।
जीवन दु:ख-कहानी, जो न ओम् जपे ॥
ज़ल जाये वह वाणी, जो न ओम् जपे ॥

"ओम् क्रतोस्मर" "ओम् क्रतोस्मर,"
"पाल" आत्मा अजर अमर, पर-
यह काया जल जानी, जो न ओम् जपे।
जल जाये वह बाणी, जो न ओम् जपे ॥



गीत नं० १३

[तर्ज:—शरण प्रभु की आओरे यही समय है प्यारे]

भक्ति प्रभु की कीजिये, निज जीवन सुधारो ॥
विषय विकार असार हैं सारे,
इन से रहना दूर ही प्यारे।
शरण प्रभु की लीजिये, निज जीवन सुधारो ॥
जिसने रचा यह विश्व निराला,
पीलो उसके प्रेम का प्याला।
मन श्रद्धायुत कीजिये, निज जीवन सुधारो ॥
अजर अमर विभु विश्व-विधायक,
गाओ गुण प्रभु सुख-प्रदायक ॥
भक्ति-सुधा-रस पीजिये, निज जीवन सुधारो ॥
सुन्दर मन्दिर मन को बनाओ,
निष्ठा से प्रभु महिमा गाओ।
छल कपट तज दीजिये, निज जीवन सुधार ॥

"पाल" अधर्म से बचना निशिदिन,
चिन्तन प्रभु का करना प्रति-दिन।
मुक्ति-पथ पा लीजिये, निज जीवन सुधारो ॥



गीत नं० १४

[तर्ज :— न किसी की आँख का नुर हूं०]

परब्रह्म को मैं ध्यांऊगा, उस के सदा गुण गांऊगा ।
मन की मलीनता दूर कर, मैं ज्ञान-दीप जलांऊगा ॥
मन में कभी जब पाप की जागेगी कोई कामना ।
मैं उस प्रभु काध्यान कर तत्काल पाप भगाऊँगा ॥
मुझ को प्रलोभन जगत् के खींचेंगे अपनी ओर तो-
मैं आँख मूंद, विवेक से इन से परे हट जाऊंगा ॥
यदि द्वेष, हिंसा, क्रोध के कुविचार जायेंगे कभी ।
प्रभु-प्यार की ले मधुरता मैं बैर-भाव मिटाऊंगा ॥
यदि दर्प-सर्प के डंक से मन में अकड़ आए कभी ।
कर ध्यान उस भगवान् का अभिमान से बच जाऊंगा ॥
सुख दुःख, हानि-लाभ में मैं जय-पराजय में तथा ।
रख कर सदा समता हृदय को द्वन्द्वहींन बनाऊंगा ॥
सात्विक बना आचार को, आहार, निज व्यवहार को ।
कर योग-साधन ईश की अनुभूति मन में लाऊंगा ॥
जब "पाल" प्राणी मात्र के दुःख से दुखेगा दिल मेरा ।
प्रभु-प्यार के अधिकार को संसार में तब पाऊंगा ॥



गीत नं० १५

[तर्ज :—प्रभु जी आपके गुण गाने वाले और ही होते हैं]

नमस्ते नाथ अविनाशी, तुम्हें मस्तक नवाते हैं।
तुम्हारे ध्यान चिन्तन में, सभी आनन्द पाते हैं॥

तुम्हीं सर्वेश स्वामी हो, तुम्हीं भूः हो भुवः स्वः हो।
हृदय के तार हिलते हैं, जभी तब गीत गाते हैं॥

तुम्हीं जल में तुम्हीं स्थल में, नभो मडल में व्यापक हो
तुम्हारे विरुद्ध वर्णन में, यह पक्षी चहचहाते हैं॥

मिलेगी आज अनुभूति हृदय में देव-दर्शन की।
अतः हम भक्ति-पुष्पों से हृदय-मन्दिर सजाते हैं॥

उन्हीं का आत्मिक व मानिसिक उत्थान होता है।
हटाकर ध्यान विषयों से जो ईश्वर में लगाते हैं॥

वही प्यारे नांरायण के जो नर-सेवा में रत रहते।
दुखी दुःख दूर करने में जो अपना घर लुटाते हैं॥

वही हैं धन्य नर नारी, उन्हीं पै ईश-अनुकम्पा॥
प्रलोभन देख कर भी जो न नैतिक स्तर गिराते हैं।

जिन्होंने पाप की गठरी उठाई वह दबे रहते।
सरल सच्चे सदाचारी सदा सुख "पाल" पाते हैं॥



गीत नं० १६

[तर्ज :—सारी दुनियां में दिन हिंद में रत है]

जिसने संसार है यह रचाया हुआ।
हम ने उस ईश से दिल लगाया हुआ॥

सर्वव्यापक निराकार परमेश वह।
इस निखिल विश्व में है समाया हुआ ।।
रात दिन ध्यान उस ईश्वर का करो।
जिसने यह खेल अद्भुत रचाया हुआ ।।
पाप कर्मों में मन अव न उलझेगा यह।
पतित पावन का मन्दिर बनाया हुआ ।।
सच्चिदानन्द की अर्चना मिल करो।
गान वेदों ने उसका ही गाया हुआ ।।
सम्पदा सब उसे मिल गई समझलो।
जिसने उसको हृदय में बसाया हुआ ।।
उस पिता का वही पुत्र प्यारा बने।
जिसने विषयों में मन ना फंसाया हुआ ।।
मिल गई शांति उस दम कि जब आ गया।
ईश चिन्तन में मन यह सताया हुआ ।।



गीत नं० १७

[तर्ज :—हर जगह मौजूद है पर यह नजर आता नहीं]

क्या कहें क्या भक्त पाता है प्रभु के ध्यान में।
कुछ अलौकिक रस मिले जब मन लगे भगवान् में ।।
ज्ञान के आलोक से तव जगमगाता है हृदय।
रंग बिरंगे फूल खिलते आत्मिक उद्यान में ।।
संशयों का नाश होता पाप के बन्धन कटें।
साधना का मार्ग मिलता आत्मिक उत्थान में ।।

विषय-विष से जान पड़ते वासना की प्यास ना।
तब न आकर्षण रहे कुछ काम मद अभिमान में ॥

यूं लगे सर्वत्र ही आनन्द वर्षा हो रही।
भक्त जब हो मग्न लगता ओं के गुणगान में ॥

"पाल" गूंगा किस तरह गुड़ की मधुरता कह सके।
मधुरता-अनुभूति रहती मगर उसके ज्ञान में ॥



गीत नं० १८

[तर्ज :—मन मन्दिर में गाफिला झाड़ू रोज लगाया कर[

जप लो उस जगदीश को जिसने जगत् बनाया है।
पर्वत जंगल बाग में सुन्दर साज सजाया है॥
धीरे-धीरे बहती नदियाँ उसकी महिमा गाती हैं।
कोयल मना कहीं सारिका उसका राग सुनाती हैं॥
कुंज २ में गूंज है, कहीं धूप कहीं छाया है।
जप लो उस जगदीश को० ॥ १ ॥

नौकर चाकर आगे पीछे फिरते, होती जी जी है।
खाने खाये महल बसाये, क्या कोई लंका जीती है ?
पगले, क्यों भ्रम जाल में अपना आप भुलाया है।
जप लो उस जगदीश को० ॥ २ ॥

तृष्णा बूढ़ी कभी न होती, हम ही बूढ़े होते हैं।
नहीं बीतता समय, बीतते हैं हम आखिर रोते हैं॥
पीछे तू पछतायगा, दिल जग में फंसाया है।
जप लो उस जगदीश को ०॥ ३ ॥

बड़े-बड़े बलवान् जिन्हों से दुनिया थर थर कांपी थी।
भीगी बिल्ली बने सभी जब आय मौत ने थापी दी ॥
बड़े बड़ों को मौत ने जाती दफा रुलाया है।
जप लो उस जगदीश को० ॥४॥

धर्म कर्म का मर्म यही है परम पिता के भक्त बनो।
देव भक्ति की शक्ति पाकर, आसक्ति तज शक्त बनो ॥
धर्म पाल लो "पाल" ने यह उपदेश सुनाया है।
जप लो उस जगदीश को० ॥५॥



गीत नं० १६

[तर्ज :—न किसी की आँख का नूर हूं]

तू अनन्त अमर है, सर्वाधार है कर्त्तार है।
निराकार तू निर्विकार है, हे पिता तुझे नमस्कार है ॥
रचा तूने यह संसार है, तेरी महिमा अपरम्पार है।
हुआ उसका बेड़ा पार है, किया जिसने तुझ से प्यार है ॥

मेरा मन जले संताप में, गया बीत जीवन-पाप में।
न लगी लगन प्रभु आप में, किया खूब विषय-विकार है ॥
कभी काम की रही कामना, कभी लोभ मोह की भावना।
कभी भी किया शुभ काम ना, धिक्कार है धिक्कार है ॥
तेरी आज शरण में आ गया, जब काल जीवन खा गया।
बचपन गया यौवन गया, रही जिंदगी दिन चार है ॥
अपराध मेरे क्षमा करो, दुख ताप अघ हे हरे हरो।
शुभ भद्र भाव विभो भरो, यही विनय बारम्बार है ॥

मेरी एक अब यही साधना, करूं 'पाल' तब आराधना।
बने मुझसे अब अपराध ना, इसमें मेरा निस्तार है ॥



गीत नं० २०

[तर्ज :—विश्वपति के ध्यान में०]

भगवद् भजन में मेरा मन श्रद्धा सहित लगा रहे।
परम पिता के प्रेम में आठों पहर पगा रहे ॥
अजर अमर महान् है, उसने रचा है विश्व को।
सूरज चन्द्र तारा गण, उसका पता बता रहे ॥
नदियां निदान कर रहीं, पक्षी हैं चहचहा रहे।
सुख स्वरूप देव का, सुन्दर राग गा रहे ॥
बादल की रंग बिरंगियां, पुष्पों की नव सुगन्धियां।
कैसे कमाल से प्रभु, अपनी छटा दिखा रहे ॥
सागर की गहराइयां, पर्वत की ऊंचाइयां।
'पाल' आनन्त ईश की भक्ति का गीत गा रहे ॥



गीत नं० २१

[तर्जः—हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन उसे कोई क्लेश लगा न रहा]

प्रभु शरण तुम्हारी आए हैं, उद्धार करो उद्धार करो।
कुछ पास नहीं मन भेंट करें, स्वीकार करो स्वीकार करो ॥
जीवन-नैया डगमग डोले, प्रतिकूल पवन बरसें ओले।
मन बेवस व्याकुल हो बोले, प्रभु पार करो-भव पार करो ॥

मन-बुद्धि मलीन है पापों से, संत्रस्त सभी संतापों से।
दुर्गुण पातक अभिशापों से निस्तार करो निस्तार करो ।।
तब प्यार-बसे प्रभु नस नस में, रहें मग्न सदा भक्तिरस में।
शुभ मद्र गुणों का मानस में, संचार करो संचार करो ।।
प्रभु दूर रहें अभिमानी से, कामी क्रोधी अज्ञानी से।
वेदाज्ञा है हर प्राणी से, तुम प्यार करो सब प्यार करो ।।
कर संग "पाल" प्रभु-प्यारों का, तज दे चिन्तन कुविचारों का।
तुम दीन हीन दुखियारों का, उपकार करो उपकार करो ।।



गीत नं० २२

[तर्ज :— प्रभु जी आपका गुण गाने वाले और ही होते हैं]

दयामय अव दया करके, स्व चरणों में लगा लीजे।
पतित पावन पिता परमेश, भक्त अपना बना लीजे ।।

न लौकिक भोग की इच्छा, न धन की कामना हम को।
सिरफ पाना तुम्हें चाहें, पिता अपना पता दीजे ।।
हृदय में आप की ज्योति, प्रभु जी, जगमगाती हो।
विभो ! अपनी दया की, शुभ सुधा-वर्षा सदा कीजे ।।
नहीं समझे अभी तक हम, कि हम हैं कौन, क्यों आये ?
किधर जाते हैं, क्यों जाते ? यही हम को सुझा दीजे ।।
न मिट जाये कहीं जीवन, भटकते, ढूंढ़ते तुम को।
तुम्हें इक बार तो पा लें, भले ही फिर मिटा दीजे ।।
तुम्हें पाये बिना मन दीन, जल-बिन मीनवत् तड़पे।
दयालो प्रेम-भक्ति की, विमल गंगा बहा दीजे ।।



गीत नं० २३

दयालो ! ज्ञान की ज्योति जगा दो।
कृपालो ! मोह-तिमिर को मिटा दो ।।

डगमग डोले नाथ भंवर में—
नैया पार लगा दो ।। दयालो० ।। १ ।।

दीन दुखी हूं दास हूं तेरा—
दिव्य दया दिखला दो ।। दयालो० । २ ।

नीरस जीवन, ऊब गया मन—
प्रेम-सुधा वरसा दो ।। दयालो० ।। ३ ।।

माया ममता मग्न भया मन—
सीधा मार्ग सुझा दो ।। दयालो० ।। ४ ।।

जीवन-धन हों निर्धन के तुम—
भगवान् आस बंधा दो ।। दयाल० । ५ ।

"पाल" पुकारे परम पिता से—
भक्ति दान दिला दो ।। दयालो० ।। ६ ।।



गीत नं० २४

मैं दुखिया करूँ पुकार, नाथ उद्धार करो मेरा।
मैं दीन हीन असहाय, विकट संकट ने आ घेरा ।।

घन घोर घटा घिर आई,
प्रतिकूल पवन दुखदाई ।
है डगमग डोले बीच भंवर के पार करो बेड़ा ।।
मैं दुखिया करूं पुकार, नाथ उद्धार करो मेरा ।।

छल कपट कुटिलता छोड़ूं ।
मैं विषयों से मुख मोड़ूं ।
कर कृपा जगा दो ज्ञान-दीप, मिट जाये अंधेरा ॥
मैं दुखिया करूं पुकार, नाथ उद्धार करो मेरा ॥

मैं सदा रहूं, मुसकाता,
तेरे गुण गौरव गाता ।
दिन रात जपूं मैं ओम् ओम्, हो निर्मल मन मेरा ।
मैं दुखिया करूं पुकार, नाथ उद्धार करो मेरा ॥

यूं जीवन सफल बनाऊं
पापों से चित्त हटाऊं ।
मैं चलूं हंसता अन्त समय, जब कूच करूं डेरा ॥
मैं दुखिया करूं पुकार, नाथ उद्धार करो मेरा ॥

पर-सेवा व्रती बनूं मैं,
कर संयम यती बनूं मैं ।
दुख सुख में एक समान सदा मन "पाल" रहे मेरा ॥
मैं दुखिया करूं पुकार, नाथ उद्धार करो मेरा ॥



गीत नं० २५

[तर्जः—सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तान हमारा]

देवाधिदेव भगवन्, अपनी दया दिखा दो ।
कर्त्तव्य ज्ञान देकर जीवन सफल बना दो ॥

पथ-भ्रष्ट हो चुकी है, निद्रा में सो चुकी है ।
दे वेद-ज्ञान फिर से इस जाति को जगा दो ॥

पूजा उपासना के भूले सुकर्म सारे ।
फंसे हैं रूढ़ियों में अब सत्य-पथ सुझा दो ।।

फिर वर्ण आश्रमों की हो ठीक सब व्यवस्था ।
ऐ नाथ ! वह पुरातन आदर्श फिर दिखा दो ।।

पैंदा यहां हों फिर से गौतम कणाद जैसे ।
अध्यात्म-ज्ञान गंगा को फिर यहां बहा दो ।।

राजर्षि जनक जैसे हों तत्ववेत्ता हम में ।
नर वीर भीम अर्जुन जैसे हमें बना दो ।।

सीता समान विदुषी हों नारियें यहाँ की ।
अबला न अब कहायें सबला इन्हें बना दो ।।

"सर्वे भवन्तु सुखिनः" गूंजे ध्वनि सदा यह ।
ऐ देव, देश भारत फिर स्वर्ग सा बना दो ।।



गीत नं० २६

[तर्जः—जगत की जननी जगत की माता नमस्ते पहुंचे तुम्हें हम ।२।]

अजर अमर देव दीनबन्धु,
जगन्नियन्ता प्रणाम तुम को ।।
स्वभक्त-पालक व दुष्ट-घालक
जगन्नियन्ता प्रणाम तुम को ।
कहीं गिरि-वर्ग धूप सहता,
कहीं सुशीतल समीर वहता ।।
वि मुग्ध हो मन सदा यह कहता,
जगन्नियन्ता प्रणाम तुम को ।

कहीं घटा टोप मेघ आये,
मयूर नाचे व कूक छाये।
कहीं सुपिकवृन्द गीत गाये,
जगन्नियन्ता प्रणाम तुम को।
नियम में रवि-चन्द्र को चलाया,
धरा को सौंदर्य से सजाया।
महा अलौकिक तुम्हारी माया,
जगन्नियन्ता प्रणाम तुम को ।।
तुम्हारा वेदों ने गान गाया,
अलिप्त व्यापक तुम्हें वताया।
बताई अमृत तुम्हारी छाया,
जगन्नियन्ता प्रणाम तुम को ।।
विशुद्ध व्यापक विभु विधाता,
दयानिधे दिव्य देव दाता।
अतुल्य इन्द्रिय-अतीत त्राता,
जगन्नियन्ता प्रणाम तुम को ।।
गगन यह विहगों का रव सुनाये,
पवन की सनसन से शब्द आये ।।
नदी बहे यह निनाद गाये,
जगन्नियन्ता प्रमाण तुम को ।।
फलों में तूने ही रस भरा है,
धरा पै सब द्रव्य को धरा है ।।
तुम्हारा भगवान् आसरा है।
जगन्नियन्ता प्रणाम तुम को ।।



गीत नं० २७

[तर्ज:—ईश्वर फकत तुम्हीं हो दुःख के मिटाने वाले]

दुनिया के बन्धनों से हम को बचाना भगवन् ।
सद्ज्ञान रूप अमृत हमको पिलाना भगवन् ॥
दुनिया के झंझटों में फंसे बुरी तरह हैं ।
विषयों से मुक्त सत्वर हमको कराना भगवन् ॥
अज्ञान में पड़े हैं निर्गुण महा दरिद्री ।
आलोक ज्ञान का अब हमको दिखाना भगवन् ॥
भक्ति रही न शक्ति भुक्ति ने आन घेरा ।
निज भक्ति कर कृपा अब हमको दिलाना भगवन् ।
मद मोह मान मत्सर में मन उलझ चुका है ॥
पतितों को दे सहारा ऊपर उठाना भगवन् ॥
निर्बल है मन हमारा संकट विकट हैं सर पर ।
निर्भय बनें वह शक्ति हमको दिलाना भगवन् ॥



गीत नं० २८

[तर्ज:—प्रभुजी आपके गुण गाने वाले और ही होते हैं]

प्रभु के ध्यान में रहने का मन अभ्यास करता जा ।
निरन्तर साधना से श्रेय पथ पै "पाल" बढ़ता जा ॥
बहुत भटका है बाहर के जगत् में नाच भी नाचे ।
जरा अब देख अन्दर और बाहर से सिकुड़ता जा ॥
मिटा दे भोग की लिप्सा, बड़ा कड़वा है फल इसका ।
लगा वृत्ति समाधि में तूं अन्दर से सुधरता जा ॥

दबा देता है मन बुद्धि को कुत्सित पाप का बोझा।
बनाना है अगर परलोक तो पापों से डरता जा॥

बुराई में गई है बीत आयु दिन बचे थोड़े।
स्वजीवन में भलाई का कोई तो काम करता जा॥

कुटिलता छोड़कर जीवन सरल सच्चा बना ले तूं।
दुरित दुर्व्यसन दुर्गुण दोष दल से सतत लड़ता जा॥

बिफलता विघ्न से डर मत कद्म आगे बढ़ाये जा।
पिता परमेश का करुणा भरा आंचल पकड़ता जा॥



गीत नं० २९

(तर्जः—सारी दुनिया में दिन, हिन्द में रात है)

ईश भक्ति में मन लो लगा बन्धुओ।
सद् गुणों से हृदय लो सजा बन्धुओ॥

खोल कर ज्ञान चक्षु निखिल विश्व में।
देख लो उस पिता की छटा बन्धुओ॥

दिव्य दर्शन प्रभु का अगर चाहते।
ज्ञान ज्योति जरा लो जगा बन्धुओ॥

आत्म-संयम तथा आत्म-चिन्तन करो।
विषय भोगों से मन लो हटा बन्धुओ॥

सुख तथा शांति पाना अगर चाहते।
सुखनिधि को समझ लो सखा बन्धुओ॥

उस अभय रूप भगवान् से नम्र हो।
तुम अभयदान मांगो सदा बन्धुओ॥

"पाल" परमात्मा को तभी पाओगे ।
शुद्ध होगी जभी आत्मा बन्धुओ ।।



गीत न० ३०

तर्ज—हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन उसे कोई कलेश लगा नरहा

मन भक्ति भरे कर बांध करें, नतमस्तक होके नमस्ते तुम्हें ।
प्रेरो चलना शुभ रस्ते हमें, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हें ।।
कहीं हरियाली फल फूल फले, कहीं धूप तपे कहीं पवन चले ।
तव महिमा का नहीं अन्त मिले, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हें ।।
इस ओर नदी द्रुत वेग बहे, इस ओर खड़ा नग गगन गहे ।
मन मुग्ध हुआ सानन्द कहे, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हें ।।
खुद धूप सहें छाया देते, फल देते वृक्ष न कुछ लेते ।
उपकार करो शिक्षा देते, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हें ।।
निर्मल नभ में कलरव करते, पक्षी उड़ते पशु दल चरते ।
तव दृश्य मनोहर मन हरते, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हें ।।
घट घट वासी अन्तर्यामी, हम "पाल" पतित कपटी कामी ।
उद्धार करो तुम हे स्वामी, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हें ।।



गीत न० ३१

तर्ज—अजब हैरान हूं भगवन तुझे कैसे रिझाऊं मैं

प्रभु की शरण में आओ, अगर सुख चाहते प्यारो ।
रहो निश दिन मगन उसमें अगर सुख चाहते प्यारो ।।

प्रभु के प्रेम की सच्ची, करो दिल में लगन पैदा।
उसी के ध्यान में रहना, अगर सुख चाहते प्यारो॥

रमा है ईश अणु अणु में, नहीं उसके बिना कुछ भी।
करो यह धारणा पक्की, अगर सुख चाहते प्यारो॥

कमल जल में रहे लेकिन, नहीं जल का असर उस पैं।
बनाओ तुम भी जीवन यूं, अगर सुख चाहते प्यारो॥

कभी सोचा करो मन में, कि तुम हो कौन क्यों आये ?
करो तुम आत्म-चिन्तन यूं, अगर सुख चाहते प्यारो।

करो वेदाध्ययन खुद फिर, पढ़ाओ दूसरों को भी।
करो उपकारमय जीवन, अगर सुख चाहते प्यारो॥

कुपथ छोड़ो सुपथ पकड़ो, वृथा मत गर्व से अकड़ो।
बचो सब पाप कर्मों से, अगर सुख चाहते प्यारो॥

मिला तुमको यह नर चोला, न खोना "पाल" यूं इसको।
जपो सब ओम् श्रद्धा से, अगर सुख चाहते प्यारो॥



गीत न० ३२

तर्ज—प्रभु जी आप के गुण गाने वाले और होते हैं

बचालो हे पिता हम को हमें दुख जाल घेरे हैं।
शरण में आ गए भगवन् सभी हम दास तेरे हैं॥

जभी अपने कुकर्मों को प्रभो हम याद करते हैं।
हृदय है कांपता, पातक किए हम ने घनेरे हैं॥

रहे हैं टूट चारों ओर से पर्वत विपत्ति के।
सहारा दो बड़े दुर्भाग्य के खाये थपेड़े हैं॥

निराशा की घटायें छा रहीं चारों तरफ अब तो।
बड़ी मझधार में फँसे हमारे आज बेड़े हैं॥
नहीं दर और इस जग में जहां शान्ति मिले हम को।
अतः तेरे द्वारे ही दिये अब डाल डेरे हैं॥
कृपालो ! अब कृपा करके, हमें चरणों में रख लीजे।
बुरे हैं "पाल" फिर भी तुम्हारे नाथ चेरे हैं॥



गीत न० ३३

तर्ज—विश्वपति के ध्यान में जिसने लगाई हो लगन

सार्थक उसी का जन्म है, भक्ति प्रभु की जो करे।
सच्चा है भाग्यवान् वह, पापों से जो सदा डरे॥
पापों का रोग जब बढ़े, साथ विषय-विष भी बढ़े।
भक्ति की भूख न जगे, जबतक न वासना मरे॥
कर्म तो पाप के किये, पुण्यों का फल कहाँ मिले।
यहतो अखण्ड है नियम जैसा करे वैसा भरे॥
घर को तजा तो क्या तजा, तृष्णा का त्याग त्याग है।
भोगे जो भोग त्याग से, भव-सिन्धु वहो तरे॥
जब तक मलीन मन कभी, पास प्रभु न आएंगे।
पाना उन्हें है तो सदा, पापों से रह परे परे॥
पावन मार्ग पै चले, मन में शिथिलता आए तो।
"पाल" पुकार प्यार से, ओम् ओम हे हरे॥



गीत नं० ३४

तर्ज :— आज मिल सब गीत गाओ उस प्रभु का धन्यवाद

धन्य है तेरी दया ऐ भक्त-वत्सल ईश्वर।
प्रेम से गुण गा रहे तेरे सभी जगदीश्वर ।।
स्थल, अनल, जल, अनिल में व्यापक पिता सर्वत्र हो।
शुद्ध हो, निर्लिप्त हो, निर्भय अजर, दाता, अमर ।।
शैल-शिखरों, उपवनों, नभ में छटा छाई तेरी।
पार पा सकता नहीं तेरा कोई सर्वेश्वर ।।

पुष्प कलिकाएं खिलीं आह्वान तेरा कर रहीं।
मधुर स्वर में विहग दल गुण गा रहा परमेश्वर ।।

प्रेम से मिल आज मंगल गान हैं सब गा रहे।
नाथ अनुकम्पा करो, सब दुख हरो, अखिलेश्वर ।।

सम्पदा सुख प्राप्त हो, हों पूर्ण सब शुभ कामना।
दूर हों दुर्गुण सभी कर दो दया देवेश्वर ।।

गीत नं० ३५

[तर्ज :—ईश्वर फकत तुम्हीं हो दुःख के मिटाने वाले]

करुणानिधान ईश्वर, सच्चा सखा हमारा।
दुःख ताप हरने वाला, सब का वही सहारा ।।

वह विराट् रूप उसकी कितनी विशाल रचना।
है कौन पा सके जो इसका कहीं किनारा ।।

सब पाप ताप उसके तत्काल लोप होते।
हो भक्ति मग्न जिसने उस देव को पुकारा ।।

मारा इसे उसे तो है कौन तीर मारा।
जब तक कुमार्गगामी मदमस्त मन न मारा ।।

है भाग्यवान सच्चा, जीवन सफल भी उसका।
जिसने चरित्र अपना सत्संग से सुधारा ॥

दुविधा में बह न रहता, मन में प्रकाश पाता।
हो ध्यान मग्न जिसने है ओम् ओम् उचारा ॥

करकें पवित्र मन को श्रद्धा की भावना से।
जिसने उसे पुकारा उसने उसे उबारा ॥

कर शुद्ध मन का दर्पण कर दे प्रभु के अर्पण।
ऐ "पाल" बस इसी में, उद्धार है तुम्हारा ॥

□□□

गीत नं० ३६

तर्ज : हर जगह मौजूद है पर वह वह नजर आता नहीं

ओम् ओम् भजो सदा तुम ओम् ओम् भजो सदा।
भजन कर लो क्या पता है काल आ जाए कदा।

ओम् है निज नाम उस जगदीश का, परमेश का।
इसलिए बस ओम् भज लो तुम मिले अवसर यदा।।

नित्य संध्या हवन करके ओम् का तुम जप करो।
बन्धुओ है ईश की भक्ति सदा ही सुख-प्रदा ॥

भक्त बन जाओ प्रभु के प्रेम में होकर मगन।
प्रभु भजन का फल मिलेगा ज्ञान सुख, प्रतिभा, प्रभा ॥

आर्य्य जीवन हो हमारा वेदपथगामी बनें।
देव अनुकम्पा करो सब दूर हों दुःख-आपदा ॥

अभय हो जाओ प्रभु से जोड़ कर संपर्क सब।
"पाल" मांगो उस पिता से प्राप्त हो सुख सम्पदा ॥

गीत नं० ३७

तर्ज—मुझें धर्म वेद से ऐ पिता सदा इस तरह का प्यार दे

हे दयानिधे हे जगत्पते, हमें मानसिक बल दीजिए।
दृढ़ता सभी को प्राप्त हो, प्रभु भीरुता हर लीजिये।।
हमको सुपथ पर ले चलो, सब भद्रगुण उपलब्ध हों।
हम कुटिल पापों से बचें, ऐ नाथ करुणा कीजिये।।
मेरी आत्मा के गगन में, विभु सत्य-सूर्य उदय करो।
संशय के बादल दूर हों, अज्ञान-तम हर लीजिए।।
मम नेत्र, कान व वाक् शुभ देखें, सुनें, बोलें सदा।
मन में मनन संयम तथा शुचिता की शक्ति दीजिए।।
मैं इन्द्र हूँ मेरी इन्द्रियें वश में रहें मेरे सदा।
मैं परास्त हो सकता नहीं, विश्वास यह भर दीजिए।।
झोली पसारे आपके दर पर उपस्थित हैं सभी।
हम भक्ति-भिक्षा मांगते अब रीझिये प्रभु रीझिये।।
कहे "पाल" प्रभु-भक्तो सुनों, ब्रह्मार्थ स्व अर्पण करो।
हो शुद्ध निर्मल शान्त पावन प्रेम का रस पीजिये।

□□□

गीत नं० ३८

तर्ज :—प्रभु जी आप के गुण गाने वाले और होते हैं

प्रभो रक्षा करो हम तो फकत तेरे सहारे हैं।
पिताजी गर बुरे भी हैं मगर आखिर तुम्हारे हैं।
भलाया आपको जब से विकट संकट उमड़ आये।
घिरे अभिमान, अंघ, मद, मोह से अब मन हमारे हैं।।
हैं हम सन्तान ऋषियों की, तपस्वी, योगी मुनियों की।
बने भोगी, हुए रोगी, बुरे किसमत के मारे हैं।।

पतितपावन, पतित पामर पकड़ बैठे हैं दर अब तो।
उठा लो नाथ तुम ने तो कई पापी सुधारे हैं ।।
यही वर आपसे मांगें प्रभो करबद्ध होकर के।
बुराई से बचें बन जायं तेरे भक्त सारे हैं ।।
सुखद, सर्वज्ञ, स्वामिन् बस यही आशा करो पूरी।
लगे जातीय सेवा में प्रभो अब मन हमारे हैं ।।

□□□

गीत नं० ३९

तर्ज :– विश्वपति के ध्यान में जिसने लगाई हो लगन

सत्य विशुद्ध ज्ञान का मन में जला ले तू दिया।
भक्त सुधा का पान कर कर ले पुनीत तू हिया ।।
जीता है वह जो मर चुका स्वधर्म देश के लिए।
मरना भला उस जीव का अपने लिए ही जो जिया ।।
चलना पड़ेगा एक दिन, भोले-न भूल तू इसे।
सोच ले धर्म-कर्म क्या, जीवन-काल में किया ।।
त्रस्त हो भोग रोग से अब पछताना किस लिए।
माया में मूढ़ मन बता, काया को क्यों फंसा लिया ।।
पापों में फंस कर भला, तूने बला बुला ली क्यों ?
अगर भला था चाहता, ईश को क्यों भुला दिया ?
"पाल" कराल काल के कोप से बस बचा वही।
जिसने दीन दयालु का पावन प्रेम-रस पिया ।।

□□□

गीत नं० ४०

तर्ज :—प्रभु जी आपके गुण गाने वाले और होते हैं

प्रभु जी तेरे चिन्तन में मैं मन अपना लगाता हूँ।
हटा कर ध्यान विषयों से मैं तव चरणों में आता हूँ॥
सरल जीवन बनाने को रहूँगा दूर पापों से।
सुपथ पथ पर ले चलो मेरे पिता मैं पास आता हूँ॥
रहूँगा दूर दोषों से, कपट, छल, राग-द्वेषों से।
मिटा कर बासना की मैल मन निर्मल बनाता हूँ।
मुझे निर्भीक बनना है, हृदय में धीरता लानी।
तुम्हारी याचना से मानसिक बल मैं वढ़ाता हूं॥
बनूं प्यारा सभी का मैं, मधुर भाषी, सदाचारी,
दुखी-दुख दूर करने को, मैं तन मन धन लगाता हूँ।
यही वरदान दो भगवन्: सफल हो साधना मेरी।
मुझे आशीष दो स्वामिन, तुम्हें मस्तक झुकाता हूँ॥

□□□

गीत नं० ४१

(तर्ज : तेरा नुर सबमें समाया हुआ है)

प्रभु, धर्म की भाएना मन में भर दो।
स्वभक्ति के आलोक का नाथ वर दो॥
धृति, दम, क्षमा, शौच, अक्रोध, विद्या।
सुधी, सत्य, अस्तेय के भाव भर दो॥
दिखा दिव्य सद्ज्ञान की ज्योति भगवन्।
महा घोर अज्ञान का तिमिर हर दो॥
विकल वासना की विविध व्याधि से हूँ।
विपुल वेनना है, विभो दूर कर दो॥

दुखद दानवी दोष-दल दनदनाते ।
दिखा दो दया, देव, दुर्गुण दबा दो ।।
महा मोह माया में मन मग्न मेरा ।
मिटा मान, मद, मल, विमल नाथ कर दो ।
बुरा हाल, विकराल दुःख जाल फैला ।
प्रणत-पाल, नत 'पाल' पै करुणा कर दो ।।



गीत नं० ४२

तर्ज—अजब हैरान हूं भगवान तुझे कैसे रिझाऊं मैं

प्रभु-भक्ति में मन अपना लगाना चाहिए हर दम ।
मगन हो ओम् ही बस ओम् गाना चाहिए हरदम ।।

बचो दुनिया के विषयों से, लगाओ ध्यान ईश्वर में ।
हमें मद मोह से मन को बचाना चाहिए हर दम ।।

करो सत्संग श्रद्धा से, भरो विश्वास से मन को ।
हमें वेदों के अमृत में नहाना चाहिए हर दम ।।

नियम-यम पालना निशिदिन, सदा ब्रह्मचर्य से रहना ।
यह वेदों का कथन सुनना सुनाना चाहिए हर दम ।।

भला मैं कौन हूँ किस वास्ते आया हूँ दुनिया में ।
यह पेचीदा प्रश्न मन मन में उठाना चाहिए हर दम ।।

करो कर्त्तव्य पालन बस यही है तथ्य जीवन का ।
"धर्म" धर्माचरण में मन लगाना चाहिए हर दम ।।



गीत न० ४३

(तर्ज :— ईश्वर फकत तुम्हीं हो दुःख को मिटाने वाले)

बन्दे विचार गन्दे, दिल से निकाल सारे ।
दे छोड़ कुटिल धन्धे, सुविचार के सहारे ।।

यदि भद्र सुनना चाहें और भद्र देखना भी ।
कर शुद्ध भावना को पावन पवित्र प्यारे ।।

कुविचार धी बिगाड़े, मन को करे असंयत ।
हैं जीत मन के जीते और हार मन के हारे ।।

वह आत्म-उन्नति के पथ का पथिक बनेगा ।
व्यवहार शुद्ध रक्खे, आचार जो सुधारे ।।

जब पाप-पंक मन को कलुषित कभी बनाये ।
तो भक्त कांप जाए, भगवान् को पुकारे ।।
संतोष-कोष मन में: निर्दोष आचरण में '
तज रोष तोष मिलता, मीठे बचन उचारे ।।
ऐ "पाल" सम्पदा सब सुविचार में समाई ।
गन्दे विचार करके क्यों भाग्य को बिगाड़े ?



गीत न० ४४

(तर्ज :— क शरणागत-प्रतिपाल- "पाल" को प्रभु अपना लीजे)

मैं चेरा तेरा देव दया कर चरण-शरण दीजे ।
(ऐ शरणागत-प्रतिपाल, 'पाल' को प्रभु अपना लीजे ।)
ऐ शरणागत प्रतिपाल प्रभु हमको अपना लीथे ।।
मैं भटक भटक कर हारा,
प्रभु मिला न कहीं सहारा ।

अब पकड़ा तेरा द्वार नाथ मुझ पै करुणा कीजै ।
मैं चेरा तेरा देव दया कर चरण शरण दीजे ।।2।।

मन मोह, मार भरमाया,
चिन्ता ने सतत सताया
अभिमान छुड़ा कर मान-ज्ञान-वरदान पिता दीजे ।
मैं चेरा तेरा देव दया कर चरण-शरण दीजे ।।3।:

न बुद्धि, प्रेम, न भक्ति,
है विषयों से आसक्ति ।
न शक्ति, विरक्त पिता तेरा हूँ सुपथ सुझा दीजे ।
मैं चेरा तेरा देव दया कर चरण शरण दीजे ।।4।।

कर जोड़ करूं मैं विनती,
प्रभु भक्तों में हो गिनती ।
तब प्रेममग्न मन रहे अहर्निश देव दया कीजे ।।
मैं चेरा तेरा देव दया कर चरण-शरण दीजे ।।5।।

□□□

गीत न० ४५

[तर्ज—हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन उसे कोई क्लेश लगा न रहा]

आनन्द स्वरूप अनूप पिता पातक दुख दुर्गण दूर करो ।
हम भक्त तुम्हारे हैं भगवन्, भक्ति से हमें भरपूर करो ।।
नि:स्वार्थ तथा निष्काम रहें, हित मित भाषी गंभीर वनें ।
हममें सबके प्रति प्यार भरो छल कपट रहित अक्रूर करो ।।

हम काम क्रोध से दूर रहें, हो राग-द्वेष से मुक्त सदा ।
निर्लोभ बनें निर्मोह रहें, अभिमान हमारा चूर करो ।।

संकट में धैर्य नहीं छोड़े, कायरता पास न आये कभी ।
निर्भीक रहें, हे देव हमें तुम वीर साहसी शूर करो ॥
पापी कपटी और दुष्टों की संगत से दूर सदा भागें ।
पर सेवा-व्रती सदाचारी, निज भक्तों में मशहूर करो ॥



गीत न० ४६

[तर्ज :—प्रभु जी आप के गुण गाने वाले और होते हैं]

कृपा-सिंधो, कृपा करना दया सागर दया करना ।
हमें ए कष्ट-हर, अब सर्वकष्टों से रिहा करना ॥
प्रभो, परमात्मन् हम दीन हैं, आए शरण तेरी ।
न अपनी नाथ शक्ति से हमें हरगिज जुदा करना ॥
नहीं संतुष्ट मन मेरा तड़पता हूं बिलखता हूं ।
निराशा से छुड़ा आशा मेरे मन में सदा भरना ॥
रहूं मैं मस्त अपने में गमी में भी खुशी समझूं ।
मुझे जिंदादिली ऐसी पिता मेरे अता करना ॥
सताया हूँ मैं दुनियां से सभी दुश्मन बनें मेरे ।
तुम्हीं हो नाथ अब रक्षक, विपद्-दुःख 'पाल' सब हरना ॥



गीत नं० ४७

[तर्ज —नाथ फिर डूबते भारत को बचालो अब तो]

प्रेम भक्ति से प्रभु नाम है जिसने गाया ।
कोई दुःख रोग कभी पास न उसके आया ॥

सच्चिदानन्द प्रभु सुखद सुमंगलकारी।
भक्त लोगों के लिए उसकी है अमृत छाया ॥

दिव्य गुण-पुञ्ज प्रभु सुखद सुमंगलकारी।
अनास्क्त रहा देख प्रलोभन माया ॥

धन्य नर नारी वही, अपने प्रभु के सम्मुख।
शुद्ध मन अपना समर्पण के लिए जो लाया ॥

काम, मद, मोह, महा शत्रु भयंकर भारी।
जो मनुज इनसे बचा उसने महापद पाया ॥

जो मनुज जन्म मिला है यह अनोखा हीरा।
'पाल' प्रभु-प्रेम बिना कर न कलंकित काया ॥



गीत नं० ४८

हे विभो प्रभो परमात्मन् हमें एक यह वरदान दो।
कि स्वधर्म रक्षा हित पिता सर्वस्व ही बलिदान हो ॥

न कोई प्रलीभन गिरा सके, न कोई विपद् भी हटा सके।
हमें ऐसा अपने धर्म के कर्तव्य का सद्ज्ञान हो ॥

यह वीर जाति भड़क उठे, फिर क्षात्र तेज फड़क उठे।
बन वीर विचरें देश में, भारत का पुनरुत्थान हो ॥

फिर व्यास सम विद्वान् हों, यहां भीम सम बलवान् हों।
गुणवान् हों धनवान हों, अभिमन्यु सम सन्तान हो ॥

यहां दूध की नदियें बहें, सर्वत्र सब सुख से रहें।
इस देश के अणुमात्र में, मंगल तथा कल्याण हो ॥

इस आर्य्य भूमि में पुनः वेदोक्त यज्ञ-विधान हो।
हर रूप में यह जगद्गुरु प्रिय आर्य्यावर्त महान् हो ॥

मिटे ऊंच नीच की भावना समता की जागे धारणा ।
इस जाति के हर प्राणि में समवेदना सम्मान हो ।।

अज्ञान से अभिभूत सब कुप्रथा कुरीति मिटे प्रभो ।
फिर 'पाल' वैदिक-धर्म वर विज्ञानमय अभिराम हो ।।



गीत न० ४६

तर्ज —हमने कीहै फकत इस तुम्हारी शरण हेपिता और कोई सहारानहीं

सच्चिदानन्द सर्वेश तुम हे पिता,
सर्व व्यापक निराकार अविकार हो ।

हम तो तेरे हैं तेरे ही परमात्मन,
शरण में आगए नाथ उद्धार हो ।

देव हम से बने कोई अपराध ना,
तेरी करते रहें ईश आराधना ।

आत्मदर्शन मिले हो सफल साधना,
अपने भक्तों पै तेरा यह उपकार हो ।।

पाप की कालिमा दोष दुर्गुण मिटें,
मोह बन्धन कटें दुष्टता से हटें ।

आएं संकट सदा साहसी बन डठें,
शुद्ध आचार आहार व्यवहार हो ।।

दीन दुखियों का दिल न दुखायें कभी,
स्वार्थ की भावना को मिटायें सभी ।

विषमता दूर हो प्यार भरपूर हो,
सुख तथा शांति संयुक्त संसार हो।

सत्य का आचरण धर्म धारण करें,
दूर हों ताप संसार-सागर तरें।

विश्व में आत्मिक ज्ञान गरिमा भरें,
वेद विद्या का सर्वत्र विस्तार हो॥

पाठ भक्ति का अपनी पढ़ाओ हमें,
श्रेय का मार्ग सीधा दिखाओ हमें।

आसुरी वृत्तियों से बचाओ हमें,
भद्र भावों का सर्वत्र संचार हो॥

"पाल" की याचना नाथ स्वीकार हो,
सारी बसुधा बने अपना परिवार हो।

द्वेष छोड़ें हृदय में भरा प्यार हो,
आप का ही सदा देव आधार हो॥



गीत नं० ५०

[तर्ज—हुआ ध्यानमें ईश्वरके जो मगन उसे कोई क्लेश लगा न रहा]

सब ध्यान करो उस ईश्वर का,
जिसने है किया उत्पन्न तुम को।

धन्यवाद करो परमेश्वर का,
खाने को दिया जिस अन्न-तुम को॥

तुम पापी हो अपराधी हो,
जो ध्यान नहीं उसका करते॥

वह दयालु है, उसने है दिया,
तन-भी मन भी और धन तुम को ॥
वह माता पिता है दाता है,
त्राता है सारे जीवों का ॥
हम ध्यान करें उस स्वामी का,
चाहिए करना यह प्रण तुम को ॥
निज जीवन को करना चाहो,
जो सफल जगत् में ए मित्रो ॥
तो प्रातः उठकर श्रद्धा से,
चाहिए गाना प्रभु-गुण तुमको
गर पामर पतित भी चाहे हो,
आओ तुम शरण में ईश्वर की ॥
वह शरणागत प्रतिपालक हैं,
प्रभु कर देंगे पावन तुम को ॥
ऐ "पाल" पुकारो प्रेम सहित,
सब, परम पिता उस प्रभुवर को ॥
सुन पुत्रों के इस क्रन्दन को,
आ पकड़ेंगे भगवन तुम को ॥



गीत नं० ५१

(तर्ज—जय जय पिता परम आनन्द दाता)

नमस्ते, नमस्ते, नमस्ते विधाता ।
महादेव ईश्वर सकल सुख प्रदाता ॥
सखा बन्धु सर्वस्व तुम नाथ मेरे ।
अखिल विश्व के तुम पिता और माता ॥

निराकार अविकार आधार सब के ।
सदा शुद्ध निर्लेप हे सर्व ज्ञाता ॥

उबारो दयालो महा नीच हूं मैं ।
कुकर्मों को कर याद आँसू बहता ॥

विपत्ति के बादल घिरे नाव डोले ।
विभो दो सहारा न मन चैन पाता ॥

मैं झोली पसारे खड़ा द्वार भगवन् ।
विनय और श्रद्धा से सर हूँ झुकाता ॥

मुझे भक्ति-भिक्षा दिलादो पिता जी ॥
तुमारी स्तुति के रहूं गीत गाता ॥

तिमिर को मिटा ज्ञान ज्योति जगा दो ।
तुम्हें पा सकूँ "पाल" आनन्द दाता ॥



गीत नं० ५२

वेद-विद्या

बिना वेद विद्या न कल्याण होगा
न शुख शांति होगी न उत्थान होगा ।

नहीं प्राप्त होगो सुमेधा सुप्रज्ञा
न वेदों का जब तक हमें ज्ञान होगा ।

परम ब्रह्म की पावनी वेद वाणी
पढ़ो वेद तो ब्रह्म का ज्ञान होगा ।

नहीं धर्म के तत्व को पा सकेगा
जो वेदों का वेत्ता व विद्वान होगा।

वहां नीचता नास्तिकता बढ़ेगी।
जहां वेद विद्या का अपमान होगा।

जटिलतम हुई विश्व जीवन समस्या
न विज्ञान से कुछ समाधान होगा।

न विज्ञान मानव को उंचा उठाए
मनुर्भव की शिक्षा से उत्थान होगा।

धरा स्वर्ग का फिर नमूना बनेगी
यदि वेद विद्या का सम्मान होगा ॥

ऋषि स्वपन पूरा तभी 'पाल' होगा
जो घर-घर में वेदों का गुणगान होगा।



गीत नं० ५३

कर दूर दुरित जब भद्रगुणों को पास बुलाओगे।
मन-मन्दिर में सत्संग लगा, प्रभु-दर्शन पायोगे ॥

दुर्गन्ध भरा यह मन्दिर,
अति मैल जमी है अन्दर ॥

ऐसे गंदे मन्दिर में क्या भगवान् बुलाओगे ?
मन-मन्दिर में. सत्संग लगा, प्रभु-दर्शन पाओगे ॥

कहीं राग द्वेष का डेरा,
पापों का घोर अन्धेरा ।

यह तिमिर मिटे जब शुद्ध ज्ञान का दीप जलाओगे ?
मन-मन्दिर में सत्संग लगा, प्रभु-दर्शन पाओगे ।।
हो शांत काम की ज्वाला,
लो ओम् नाम की माला ।
भव-सागर पार तभी उतरोगे मोह मिटाओगे ।।
मन-मन्दिर में सत्संग लगा, प्रभु-दर्शन पाओगे ।।
प्रभु, वेद हमें बतलावें,
पापी के पास न आवें ।
अनुभूति स्वतः होगी जब मन निष्पाप बनाओगे ।।
मन-मन्दिर में सत्संग लगा, प्रभु-दर्शन पाओगे ।।
दुर्गम पग सुगम बनेगा,
तब अन्तर्ज्ञान जगेगा ।
जब शुद्ध बुद्ध भगवान्-ध्यान में चित्त लगाओगे ।।
मन-मन्दिर में सत्संग लगा, प्रभु-दर्शन पाओगे ।।
श्रद्धा—सामग्री लेकर,
भक्ति-घृत-आहुति देकर,
ऐ "पाल" स्व जीवन.यज्ञ करो सच्चा सुख पाओगे ।।
मन-मदिन्र में सत्संग लगा, प्रभु-दर्शन पाओगे ।।

□□□

गीत नं० ५४

"जगा दो प्रभु"

जगा दो प्रभु भाग्य भारत का ऐसा
कि जन्में यहां फिर दयानन्द जैसा ।।
जो जाति में जीवन का संचार कर दे
प्रभु भेज दो कोई श्रीराम जैसा ।।

जिसे देखा अरिदल में भूकम्प आए
भेजो कोई वीर हनुमान जैसा ।

जिसे याद कर गर्व से सिर उठावें
हमें चाहिए कोई श्री कृष्ण जैसा ।

जो नीति के बल से चमत्कार कर दे
वह नीतिज्ञ भेज दो चाणक्य जैसा ।

जरूरत बड़ी देश को आज भगवन्
कोई भेज दो वीर शिवाजी जैसा ।

मिलने को मिलते हैं नेता हजारों
मगर नेता मिलता न नेताजी जैसा ।

चढ़ा देश भक्त का जिसको नशा हो
प्रभु फिर से भेजो भगतसिंह जैसा ।

जो बलि वेदी पर हंसता आहूति दे—
खुदीराम बिस्मिल व आजाद जैसा ।

यही 'पाल' अब कामना राष्ट्र की है
कि आए कोई लाजपतराय जैसा ।



गीत नं० ५५

[तर्ज—नाथ फिर डूबते भारत को बचाने आओ ।]

योग—साधन से समाधि की अवस्था आये ।
आत्मानन्द मिले मग्न हृदय हो जाये ॥

राग द्वेषों की जलन मन से मिटे मोह हटे।
ज्ञान की गंगा वहे मैल सभी धुल जाये।।

ब्रह्म—जिज्ञासा उपासक के हृदय में जागे।
भक्ति का पुष्प खिले मन से सुगन्धि आये।।

चित्तकी वृत्ति जो अन्दर को उपासक करले।
शक्ति का केन्द्र बने ज्योति उदय हो जाये।।

ध्यान की मुद्रा में एकाग्र उपासक बैठा।।
ओम् का जाप करे वेद—ऋचायें गाये।।

ब्रह्म—अनुभूति का आनन्द कहूं मैं कैसे।
मूक बन जाये गिरा, मस्ती निराली छाये।।

मन बने शान्त, मिटे ताप न तृष्णा भी रहे।
आसुरी भाव मिटे "पाल" प्रभु को पाये।।

□□□

गीत नं० ५६

(तर्जः हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन उसे कोई क्लेश लगा न रहा।)

सच्चा ईश्वर विश्वास यही, निर्भीक रहो निर्भीक रहो।
हो निकट विकट संकट तो भी, निर्भीक रहो निर्भीक रहो।।

आलोक—पुंज द्युलोक तथा यह अन्तरिक्ष व भू माता।।
भय हीन यथा हैं तुम भी तथा निर्भीक रहो निर्भीक रहो।।

सागर सरिता पर्वत वायु, रवि चन्द्र तथा तारे सारे।
निर्भय जैसे तुम भी वैसे निर्भीक रहो निर्भीक रहो।।

अधिकाधिक तो बस मृत्यु है, पर इसका आना निश्चित है।
अनिवार्य है यह फिर डर कैसा, निर्भीक रहो निर्भीक रहो।।

दैवी सम्पद् में सर्व प्रथम है स्थान अभय का गीता में।
श्रीकृष्ण दिया उपदेश यही, निर्भीक रहो निर्भीक रहो ॥
भय संस्कार है पापों का, निष्पाप बने साहस मिलता।
जो जीवन सफल बनाना है, निर्भीक बनो निर्भीक बनो ॥

□□□

गीत नं० ५७

(तर्जः—शरण प्रभु की आओ रे यही समय है प्यारे)

ओ३म् प्रभु का नाम है, वही रक्षक हमारा ॥

अणोरणीयान् महतोमहीयान्,
सकलेश्वर महादेव दयावान्।

अजर अमर सुख धाम है, वही रक्षक हमारा ॥
ओ३म् प्रभु का नाम है वही रक्षक हमारा ॥

घट घट वासी अन्तर्यामी,
दुःख-विनाशक, शंकर, स्वामी।

उसे हमारा प्रणाम है, वही रक्षक हमारा ॥
ओ३म् प्रभु का नाम है, वही रक्षक हमारा ॥

अद्भुत यह ब्रह्माण्ड रचाया,
नभ मण्डल में रवि चमकाया।

लीला बड़ी अभिराम है, वही रक्षक हमारा ॥
ओ३म् प्रभु का नाम है, वही रक्षक हमारा ॥

भक्त वही जो प्रभु विश्वासी,
सेवा-व्रती व योगाभ्यासी ।

कर्म करे निष्काम है, वही रक्षक हमारा ॥
ओ३म् प्रभु का नाम है, वही रक्षक हमारा ॥
जो ईश्वर आनन्द-सरोवर
'पास' उसी का गीत मनोहर।
गाता सुबह और शाम है, वही रक्षक हमारा ॥
ओ३म् प्रभु का नाम है, वही रक्षक हमारा ॥



गीत नं० ५८

[तर्ज : मन मन्दिर में गाफिला झाड़ू रोज लगाया कर]

परमेश्वर के ध्यान में जिस ने चित्त लगाया है।
भाग्यवान् उस भक्त ने जीवव सफल बनाया है ॥

यम नियमों के पालन द्वारा जिसने योगाभ्यास किया।
काम क्रोध को कभी न जिसने आने अपने पास दिया।
विषय-वासना में नहीं अपने आप गिराया है।
भाग्यवान् उस भक्त ने जीवन सफल बनाया है।

मैल मिटाकर अन्दर की जिस मन मन्दिर को शुद्ध किया।
ज्ञान-दीपसे तिमिर मिटाकर अपना आप प्रवृद्ध किया।
ब्रह्म-ज्योति-आलोक की अनुभूति को पाया है।
भाग्यवान् उस भक्त ने जीवन सफल बनाया है ॥

अपने जीवन में न जिसने कभी कुटिल व्यवहार किया।
कष्ट उठा करके भी जिसने औरों का उपकार किया।
जन-सेवा - व्रत ही सदा जीवन-लक्ष्य बनाया है।
भाग्यवान् उस भक्त ने जीवन संफल बनाया है ॥

संध्या हवन जाप नियमों का कभी न जिसने भंग किया।
सदा संयमी रहते जिसने सत्पुरुषों का संग किया।
दुष्ट जनों के संग में किसे नहीं रस आया है।
भाग्यवान् उस भक्त ने जीवन सफल बनाया है ॥

निरासक्त हो सब द्रव्यों का जिसने है उपयोग किया।
लोलुपता के आकर्षण से बचने का उद्योग किया ॥
भौतिक तृष्णा ने नहीं जिसको नाच नचाया है।
भाग्यवान् उस भक्त ने जीवन सफल बनाया है।

नहीं बुराई करे किसी की सब की करे भलाई है।
लाख मुसीबत आए लेकिन छोड़े नहीं सचाई है ॥
"पाल" शुद्ध व्यवहार में जिस ने नाम कमाया है।
भाग्यवान् उस भक्त ने जीवन सफल बनाया है।



गीत नं० ५६

(तर्ज:—सारी दुनिया में दिन हिन्द में रात है।)

नाथ चरणों में अपने लगा लीजिये।
भक्त को अपनी भक्ति का वर दीजिये ॥

भोग भोगे, न तृष्णा मिटी पुनरपि—
काम की कामना कम पिता कीजिये ॥

पाप-चिन्तन में दिन रात मन लिप्त है।
विरत हो वृत्तियें प्रेरणा दीजिये ॥

लोभ की लालसा मोह ममता मिटे।
दानवी दोष दुर्गुण दबा दीजिये ॥

परम पावन प्रणव जाप करता रहूं।
सात्विकी भावना हो कृपा कीजिये ॥
शुद्ध आचार आहार व्यवहार हो।
आत्म-चिन्तन की ज्योति जगा दीजिए ॥
"पाल" परमार्थ-साधन का व्रत ले रहा।
दीनबन्धु, सफल साधना कीजिये ॥



गीत नं ६०

(तर्ज :—अजब हैरान हूं भगवान् तुम्हें कैसे रिझाऊं मैं)

भजन भगवान् का करलो; दयामय पतित पावन का।
यही है तथ्य जीवन का, यही है लक्ष्य नर तन का ॥

हृदय हो शुद्ध तो होती उदय अनुभूति ईश्वर की।
प्रभु का प्यार पाना तो मिटा दो मैल सब मन का ॥

बुरे के संग से आती बुराई मूल पापों की।
अगर अपना भला चाहो, करो सत्संग सज्जन का ॥

क्षणिक सौंदर्य है संसार का क्यों मान करता है।
उतर जाएगा दो दिन में नशा यह रूप यौवन का ॥

प्रभु भक्ति परम शक्ति, यही है सच्ची सम्पत्ति।
विपत्ति में फसोगे जो करोगे लोभ तुम धन का ॥

जहाँ भगवद् भजन होता, वहीं सब तीर्थ बन जाते।
बना लो घर में ही वातावरण प्यारो तपोवन का ॥

समाध-योग की सिद्धि यदि है इष्ट तो प्यारो।
प्रथम यम नियम को पालो, चरा अभ्यास आसन का ॥

वचा थोड़ा है जीवन अब भजन भगवान् का कर लो।
भरोसा "पाल" अब कुछ भी नहीं हैं एक भी क्षण का ॥



गीत न० ६१

(तर्ज-हमने लीहै फकत इक तुम्हारी शरण हे पिता और कोई सहारा नहीं)

मूढ़ मन, किस लिए मुझको भटका रहा,
देव-चरणों में क्यों नीच आता नहीं ।
पतन की ओर खींचे लिए जा रहा,
ईश-चिन्तन तुझे क्यों सुहाता नहीं ॥
तन मिला था यह आराधना के लिए,
देव बनने की शुभ साधना के लिए ।
तूने मानव से दानव बनाया मुझे,
दुर्दशा पै तुझे रुदन आता नहीं ॥
रात दिन भोग-लिप्सा में तूं लिप्त है,
कौन विषयों से बतला हुआ तृप्त है ।
गंदगी है मजा ले रहा पर तुझे,
ब्रह्म-भक्ति का आनन्द आता नहीं ॥
चार दिन की उछल कूद में रम रहा,
मौज मेले में अलमस्त हर दम रहा ।
भुल भुलैयां में उलझाया इतना मुझे,
लक्ष्य अपना कहीं नजर आता नहीं ॥
तेरी शक्ति में अदभुत चमत्कार है,
भद्रपथ पै चलाए तो उद्धार है ।
तूं तो उल्टा मुझे पाप में ले गया,
क्यों तूं करणी पै आंसू बहाता नहीं ॥

चपलता छोड़, कर सात्विक भावना,
तज बुरी वासना, पाप की कामना ।
"पाल" जीवन विफल जाएगा अब अगर,
सच्चिदानन्द के गीत गाता नहीं ॥



गीत नं ६२

शुद्ध बुद्ध भगवान् तेरी जय होवे,
जय होवे भगवान् तेरी जय होवे ॥
परम ब्रह्म परमेश्वर स्वामी, घट घट वासी अन्तर्यामी ।
दाता दया-निधान, तेरी जय होवे ॥
जय होवे भगवान् तेरी जय होवे ।
कैसी अद्भुत तेरी सृष्टि, अन्त न पावे मानव-दृष्टि
महिमा महा महान्, तेरी जय होवे ॥
जय होवे भगवान् तेरी जय होवे ॥
करुण-सागर पिता हमारे, काटो संकट पातक सारे ।
करो नाथ कल्याण, तेरी जय होवे ॥
जय होवे भगवान् तेरी जय होवे ॥
भक्ति-भाव से मिल गुण गावें, "पाल" कामना है हम पावें
ईश्वर का वरदान, तेरी जय होवे ॥
जय होवे भगवान् तेरी जय होवे ।



गीत नं० ६३

तर्ज :—गम दिये मुस्तकिल०

ओ३म सुख कन्द से, सच्चिदानन्द से, याचना है—
श्रेय पथ पै चलूं कामना है ।।

कृत कुकर्मों की जब याद आती,
आंख है अश्रु-धारा बहाती ।
मन में संताप की, घोर अनुताप की, वेदना है—
श्रेय पथ पै चलूं कामना है ।।

पाया नर-तन न पर साधना की,
कुछ भी न ईश-आराधना की ।
मन में तृष्णा भरी, काम मद लोभ की—वासना है ।।
श्रेय पथ पै चलूं कामना है ।

भक्त-जन की सुनो करुण कविता,
विश्व दुरितों को हे देव, सविता ।।
दूर कर दीजिए, भद्र भर दीजिए, भावना है ।।*
श्रेय पथ पै चलूं कामना है ।।

"स्वस्तिपंथामनुचरेम" मघवन् !
"सूर्याचन्द्र" के तुल्य भगवन् ।
दान दूं ज्ञान लूं, अध्नता बन रहूं, प्रार्थना है ।।*
श्रेय पथ पै चलूं कामना है ।।

*"विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद् भद्रं तन्न आसुव" 'का छायानुवाद' ।। *"स्वस्तिपंथामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव । पुनर्ददताध्नता जानता संगमेमहि ।।'

ले चलो सुपथ पै सर्व ज्ञाता,
कुटिल अघ से बचूं सिर नवाता ।
"पाल" दो आत्म-बल, जिस से होवे सफल साधना है ।।
श्रेय पथ पै चलूं कामना है ।।



गीत नं० ६४

(तर्ज :—मै ध्यान करूं पल २ छिन २, भगवान् तुम्हारे चरणों का)

है चाह करूं सत्संग सदा, भगवान् तुम्हारे भक्तों का ।
करूं मान तुम्हारे भक्तों का ।।

श्रद्धा का भाव लिए मन में,
तल्लीन समाधि-साधन में ।
अनुकरण करूंगा जीवन में, भगवान् तुम्हारे भक्तों का ।।
करूं मान तुम्हारे भक्तों का ।।

मन अपना शुद्ध बनाऊंगा,
भक्ति का रंग जमाऊंगा ।
मैं प्यारा बन दिखलाऊंगा, भगवान् तुम्हारे भक्तों का ।
करूं मान तुम्हारे भक्तों का ।।

हो चाल चलन अपना निर्मल,
तो "पाल" समझ है जन्म सफल ।
आदर्श समक्ष रहे उज्ज्वल, भगवान् तुम्हारे भक्तों का ।।
करूं मान तुम्हारे भक्तों का ।।



गीत नं० ६५

[तर्ज़:—है जिसने सारे विश्व को धारण किया हुआ।]

कल्याणमय भगवान् के गुण गान गाइये।
पावन पिता के ध्यान में आनन्द पाइये ॥
पर ब्रह्म से मिलाप की सच्ची जो कामना ॥
अष्टांग योग—साधना में मन लगाइये ॥
करके एकाग्र वृत्तियें कर शुद्ध भावना ।
अन्त.करण में ब्रह्म की ज्योति जगाइये ॥
ऐ साधको जो साध्य को पाना अभीष्ट है।
अज्ञान के आवरण को पहले मिटाइये ॥
चाहो विषय विकार की धुल जाये कालिमा।
आराध्य की आराधना में मन लगाइये ।
जो आत्मा परमात्मा का भेद जानना ।
यमराज से योगी जनों के पास जाइये ॥
"किं कारणं ब्रह्म" का चिन्तन किया करो।
इस साधना से ब्रह्म को ऐ "पाल" पाइये ॥



गीत नं० ६६

[तर्ज़:—सारी दुनिया में दिन हिन्द में रात है।]

प्रेम भक्ति से जो ईश गुण गायेगा।
क्या बतायें कि वह भक्त क्या पायेगा ॥
दूर हो जायेगी पाप की कालिमा ।
दुर्गुणों का सभी मैल धुल जायेगा ॥
दग्ध हो जाएगी भोग की लालसा।
काम का रोग मन को न तड़पायेगा ॥

शुद्ध श्रद्धा की शक्ति से मन सबल हो—
संशयों में न गोते कभी खायेगा ।।
जाग जाएगी ज्योति परम पावनी ।
दिव्य-दर्शन हृदय-लोक चमकायेगा ।।



गीत नं० ६७

इस जग का चिक्र विचित्र बड़ा, कोई आता है कोई जाता है।
अद्‌भुत रचना जगदीश्वर की, कोई अन्त न इसका पाता है।
जीवन मृत्यु आगे पीछे, संसार स्थली में घूम रहे।
कहीं नव अंकुर है फूट रहा, कहीं पक कर फल गिर जाता है।
कहीं आग बरसती अम्बर से जलकण को तरसती धरती है।
कहीं उमड़ घुमड़ करके बारिश, शीतल जल को बरसाता है।
कहीं मुट्ठी भर दानों के लिए मानवता हाहाकार करे।
कहीं व्यसन विलास विनोद विविध रूपों में रूप दिखाता है।
कहीं चड़क भड़क आडम्बर हैं कहीं नीरवता बेबसता है।
कहीं बजती है शहनाई, कोई आंखों में नीर बहाता है।
कोई निष्ठुर नीच नृशंस सदा पर सुख में अंगार लगाता है।
कोई दीन दुःखी के घावों पर सेवा की मरहम लगाता है।



गीत नं० ६८

[तर्जः—तेरा नूर सबमें समाया हुआ हैं ।]

अगर चाहते आर्य-जीवन बनाना ।
महादेव-भक्ति में मन निज लगाना ।

कपट-ईर्ष्या-द्वेष से दूर रहना।
विमल प्रेम की धार मन में बहाना ॥
सदाचार, निष्कामना-भावना से।
सदा देश-सेवा में तन मन लगाना ॥
बना वेद-आदर्शमय अपना जीवन।
तृषित विश्व को वेद-अमृत पिलाना ॥
सदा मन वचन कर्म से एक रहना।
महा उच्च आदर्श है यह निभाना ॥
जो जाति में अज्ञानवश दोष आये।
स्व उद्योग से वह सभी तुम मिटाना ॥
सदा लक्ष्य उपकारमय अपना रखना।
गिरों को उठाना उठों को बढ़ाना ॥
परख सत् असत् की करो तर्क से तुम।
न श्रद्धा रहित पर हृदय को बनाना ॥
न केवल सुनाते ही कहते चलो तुम।
जो कहते हो खुद भी वह करके दिखाना ॥
दयानन्द ने जो जगाई थी ज्योति।
उसे 'पाल' तुम विश्व भर में फैलाना ॥



गीत नं० ६९

[तर्जः—हमने लीहैं फकत इक तुम्हारी शरण]

भक्तवत्सल, शरण आ पड़े आपकी।
नाथ चरणों में अपने लगा लीजिए ॥

सब व्यसन दुर्गणों को दयामय पिता।
दिव्य शक्ति से सत्वर भगा दीजिए ॥
देश जाति का भीषण पतन हो चुका।
आज भारत स्वगौरव सभी खो चुका ॥
देश सदियों से उन्माद में सो चुका ॥
देव, अब तो इसे फिर जगा दीजिए ॥१॥
भक्तवत्सल, शरण आ पड़े आपकी…॥
सारे देशों में भारत यह सरदार था।
ज्ञान विज्ञान विद्या का भण्डार था ॥
सर झुकाता इसे सकल संसार था।
नाथ वह दृश्य फिरसे दिखा दीजिये ॥२॥
भक्तवत्सल, शरण आ पड़े आपकी…॥
विश्व कहता था सोने की चिड़िया जिसे,
आज रोटी की दिन रात चिन्ता उसे ॥
हाय दुख की कहानी सुनायें किसे।
डूबते हैं, प्रभो आसरा दीजिए ॥३॥
भक्तवत्सल शरण आ पड़े आपकी…॥
एक चिंता नहीं, दो नहीं, दस नहीं।
सतत चिंतित रहें सुख न मिलता कहीं ॥
क्या है जीवन हमें सूझता कुछ नहीं।
पार नैया हमारी लगा दीजिए ॥ ४ ॥
भक्तवत्सल, शरण आ पड़े आपकी…॥
नाथ करुणा करो, प्रेम सरिता बहे।

देश ऐ देव, फिर से स्वगौरव गहे ॥
रोग दुःख फिक्र का लेश भी न रहे।
ऐ दयामय, दुःखी हैं दया कीजिए ॥५॥
भक्तवत्सल शरण आ पड़े आपकी···॥
नाथ, चरणों में अपने लगा लीजिए ॥



गीत नं० ७०

रे मन काहे उधर को जाए-रे मन काहे उधर को जाए-रे मन।
उस घाटी में जो पग राखे, उस घाटी में जो पग राखे।
वो पीछे पछताये-रे मन वो पीछे पछताये रे मन-काहे
उधर को जाए-रे मन।

सच्चा सुख है अपने अन्दर-सच्चा सुख है अपने अन्दर।
अन्दर ही रस आए-रे मन अन्दर ही रस आए-रे मन-काहे।
उधर को जाए रे-मन।

बाहर की दुनिया में भटके, बाहर की दुनिया में भटके।
कोई नहीं सुख पाये-रे मन कोई नहीं सुख पाये रे मन काहे।
उधर को जाए-रे मन।

भोगों में कुछ सार नहीं है, भोगों में कुछ सार नहीं है।
क्यों विरथा ललचाए रे मन-क्यों विरथा ललचाए-रे मन काहे
उधर को जाए-रे मन ॥

विषयों के चिंतन का विषधर-विषयों के चिंतन का विषधर।
गहरा डंक लगाए-रे मन गहरा डंक लगाए रे मन काहे।
उधर को जाए-रे मन ॥

शान्ति सुधा की वृष्टि होती-शान्ति सुधा की वृष्टि होती।
प्रभु का ध्यान लगाए रे मन प्रभु का ध्यान लगाए-रे मन काहे
उधर को जाए-रे मन ॥
'पाल' उसे सच्चा सुख मिलता-पाल उसे सच्चा सुख मिलता।
जो ईश्वर गुण गाए रे मन जो ईश्वर गुण गाए रे मन काहे
उधर को जाए-रे-मन ॥



गीत नं० ७१

दुरित दुर्गुण दुर्व्यसन, दुर्भावनाओं से बचो,
मान-ममता मोह माया, जाल से प्यारो बचो।
वासना-मन को कुकर्मों, के प्रति प्रेरित करे,
भोग भोगो तुम भले, पर वासनाओं से बचो।
कमल जल में ज्यों रहे तुम, उस तरह जग में रहो,
मिथ्या रोना छोड़ दो, संसर्ग दोषों से बचो।
विश्व में सौन्दर्य है, मन को लुभावे जो सदा,
देख सुन्दरता सराहो, लालसा से पर बचो।
विश्व में या देश में, परिवार में सुख चाहते,
वैर भावों को त्यागो, और राग द्वेषों से बचो।
अगर सच्चे ईश्वर के, दर्शनों की चाह है,
अन्ध-विश्वासों तथा पाखण्डों, से हरदम बचो।
अगर चाहो पाप की सब, कालिमा धुल जाए तो,

लो रुचि सत्संग में, दुर्जन की संगत से बचो।
भूल जाएँ और बातें, पर न भूलो बात तुम,
धर्म पालो 'पाल' अपना, और कुकर्मों से बचो।



गीत नं० ७२

प्यारे बोलो नमः ईश्वराय सारे बोलो नमः ईश्वराय
रात बीती हुआ है सबेरा-मैं प्रभु का प्रभु इष्ट मेरा।
बाल बांका कोई कर सके न, जिसका है ईश्वर सहाय।
प्यारे बोलो नमः ईश्वराय, सारे बोलो नमः ईश्वराय।
सब सुखों का है आधार भक्ति, भक्ति से ही मिले परम शक्ति।
आत्म-कल्याण का और कोई, विश्व भर में नहीं है उपाय।
प्यारे बोलो नमः ईश्वराय, सारे बोलो नमः ईश्वराय।
वो निराकार अविकार दाता-सर्वव्यापक विभु फल प्रदाता।
'पाल' मेरा उपास्य वही है ओ३म् परमात्मा जो इकाय।
प्यारो बोलो नमः ईश्वराय, सारे बोलो नमः ईश्वराय।



गीत नं० ७३

सुन ओ मना भगवान भरोसे, रहना बड़ा सुखदाई।
सुख दुःख में भगवान भरोसे, रहना सदा सुखदाई॥
सुख दुःख जीवन में आता ही रहता टाल सका न कोई।
पर जो नर भगवान भरोसे जागेगी तकदीर सोई॥

कर्म किया पर मिले न सफलता, तो भी रहो मुस्कराते।
जो नर रहे भगवान भरोसे, वो न कभी दुःख पाते ।।
सारे जगत की प्रभु को है चिंता, मेरी फिकर भी उसी को।
दुनिया में फिर क्यों दिखाऊ मैं अपना रोता हुआ मुँह किसी को ।।
चाह मिटे चिन्ता मिट जाए, चाह बढ़ाओ न मन में।
मोह तजो ममता मिट जाए, मोक्ष मिले जीवन में ।।
ईश्वर के विश्वास सहारे, जीवन नइया चलाओ ।
चाह मिटाओ सदा दुर-विचारों से मन को बचाओ ।।
ईश्वर का ही भरोसा है सच्चा, और भरोसे हैं झूठे।
ईश्वर भरोसे ही अन्तःकरण में, फूल खिलेंगे अनूठे ।।
अरबों व खरबों विपुल सितारे, जिस ईश्वर ने बनाये।
उसको भुलाए सदा दुःख आये, शान्ति न कोई पाये ।।
आए अकेले अकेले ही जाना, साथ किसी ने न जाना।
केवल करी है जो पुण्य कमाई, साथ उसी ने है जाना ।।
अपने पिता के पास ही जाना, मौत से क्यों घबराना।
भगवद् भजन की करे जा कमाई, ज्यादा से ज्यादा कमाना ।।
विश्व बने चाहे सारा विरोधी, चिंता नहीं मेरे मन को।
रखूंगा मैं भगवान भरोसे, भक्ति भरा जीवन को ।।
देख बुरे दिन रोता है मूर्ख, भाग्य को बिरथा ही कोसे।
लेकिन रहूंगा सदा मुस्कराता, 'पाल' प्रभु के भरोसे ।।



गीत नं० ७४

[तर्ज :—प्रेम भक्ति से प्रभु गीत है जिसने गाया]

सच्चिदानन्द प्रभु ध्यान लगाऊं तेरा ।
"ओम् भूः ओम् भुवः" गीत यह गाऊं तेरा ॥

पाप की वृत्ति मुझे, दूर हटाती तुम से ।
किस तरह, देव, बता दर्शन पाऊं तेरा ।

तेरे गुण-ग्रहण स्वजीवन में, पिता करता रहूं ।
ऐसा अधिकार मिले, पुत्र कहाऊं तेरा ॥

प्राकृतिक भोग की मृग-तृष्णा में मन उलझ गया ।
वासना, मोह पिटे, प्यार बड़ाऊं तेरा ॥

प्रेरणा, नाथ, मेरे मन में जगा दो ऐसी ।
सच्चे अर्थों में पिता भक्त कहाऊं तेरा ॥

मेरा मन मस्त रहे, भोग सतायें न मुझे ।
ऐसा भक्ति का, विभु, रंग चढ़ाऊं तेरा ॥

वेद-माता के प्रति, देव मुझे श्रद्धा रहे ।
दिव्य संदेश सदा, सब को सुनाऊं तेरा ॥

"पाल" अज्ञान का आवरण हटा दो भगवन् ।
आत्मांगन में, प्रभु, दीप जलाऊं तेरा ॥



गीत नं० ७५

[तर्ज :—विश्वपति के ध्यान में जिसने लगाई है लगन]

अपना स्वरूप जान कर, कर लो प्रभु आराधना।
यही महान् लक्ष्य है, यही है दिव्य साधना ॥
जाने बिना स्व आत्मा, मिलता नहीं परमात्मा।
बाहर तलाश कर उसे, कर तूं समय बरबाद ना ॥
अपना स्वरूप भूल क्यों, माया में मन लगा लिया।
विषयों के खेल खेल कर, पापों का बोझ लादना ॥
श्रद्धा भरी ले भावना, कर आध्यात्म साधना।
दामन पकड़ कुतर्क का, कर तूं वितंडावाद ना ॥
कितना कृतघ्न, जीव, तूं—तेरा पतन महान् है।
सच्चे पिता को प्यार से, कभी किया जो याद ना ॥
जैसे करेगा कर्म तूं, वैसा मिलेगा फल तुझे।
जीवन के "पाल" खेत में, पापों की डाल खाद ना ॥



गीत नं० ७६

[तर्ज : हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन उसे कोई कलेश न रहा]

हम श्रद्धा से कर-बद्ध करें, नतमस्तक होके नमस्ते तुम्हें।
प्रेरो चलना शुभ रस्ते हमें, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हें ॥
कहीं हरयाली फल फूल फले, कहीं धूप तपे कहीं पवन चले।
तब महिमा का नहीं अन्त मिले, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हें ॥

इस ओर नदी द्रुत वेग बहे, उस ओर खड़ा नग गगन गहे।
मन मुग्ध हुआ सानन्द कहे, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हें ॥
खुद धूप सहें छाया देते, फल देते वृक्ष न कुछ लेते।
उपकार करो शिक्षा देते, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हें ॥
निर्मल नभ में कलरव करते, पक्षी उड़ते पशु दल चरते।
तब दृश्य मनोरथ मन हरते, महादेव नमस्ते नमस्ते तुम्हे ॥
घट घट वासो अन्तर्यामी, हम "पाल" पतित कपटी कामी।
उद्धार करो तुम हे स्वामी, महादेव नमस्टे नमस्ते तुम्हें ॥



गीत नं० ७७

[तर्ज :—हर जगह मौजूद है पर यह नजर आता नहीं]

दीन बन्धु हे दयामय, देव रक्षा कीजिये।
पतित-पावन हे पिता, उद्धार अब तो कीजिये ॥
'मैं' भाव ने मुझ को गिराया बुद्धि पै परदा पड़ा
ऐ पिता करके कृपा 'मैं' भाव को हर लीजिए ॥
भ्रष्ट बुद्धि भ्रष्ट मन आचार से भी पतित हूँ।
ऐ प्रभो परमेश्वर मति शुद्ध मेरी कीजिए ॥
नाथ इक यह आप से है याचना इस दीन की।
शुद्ध हो मन और मेध बान् मुझको कीजिये ॥
आत्मा दुर्बल है मेरा मन तथा चञ्चल अति।
नाथ, मन मन आत्माको सवल अब कर दीजिये ॥

हे दयालो, आप के शुभ द्वार का याचक कभी ।
हो निराश गया नहीं अब "पाल" की सुधि लीजिये ।।



गीत नं० ७८

ध्यान लगाऊं तेरा

सच्चिदानन्द पिता ध्यान लगाऊं तेरा ।
ओम् भूः ओम् भुवः गीत यह गाऊं तेरा ।।

पाप की वृत्ति मुझे दूर हटाती तुम से ।
किस तरह देव बता दर्शन पाऊं तेरा ।।

तेरे गुण ग्रहण स्वजीवन में पिता करता रहूं ।
ऐसा अधिकार मिले पुत्र कहाऊं तेरा ।।

प्राकृतिक भोग की मृग-तृष्णा में मन उलझ गया ।।
वासना मोह मिटे, प्यार बढ़ाऊं तेरा ।।

मन मेरा मस्त रहे, भोग सतायें नमुझे ।
ऐसा भक्ति का प्रभु, रंग चढ़ाऊं तेरा ।।

"पाल" अज्ञान का आवरण हटा दो भगवन् ।
आत्मांगण में विभो ज्ञान जगाऊं तेरा ।।



गीत नं० ७९

[तर्ज:—ओं तराना, बड़ा सुहाना, मीठे स्वर से गाना]

1. धर्म कमाना, ज्ञान बढ़ाना, सच्चा यही खजाना। धर्मकमाना।
मन-वृत्ति एकाग्र बना के, ईश्वर के गुण गाना॥
2. अपने मन-मन्दिर की पहले, खूब सफाई कर लेना॥
भक्ति भावना, श्रद्धा निष्ठा की फिर धूप जला लेना॥
वातावरण सुगन्धित होगा, फिर तुम ध्यान लगा लेना। धर्म०।
धर्म कमाना, ज्ञान बढ़ाना सच्चा यही खजाना॥
3. माया ममता के पाशों से, मन को मुक्त बना लेना।
निर्मल मन में ज्ञान ध्यान की, उज्जवल ज्योति जगा लेना॥
बुरी बासनाओं से बचना, अगर मुक्ति-पथ पाना॥ धर्मकमाना
धर्म कमाना, ज्ञान बढ़ाना, सच्चा यही खजाना॥
4. जब तक तेरी स्वस्थ इन्द्रियें, कर ले नेक कमाई तूं।
जब तक तन नीरोग, किये जा, सब की सदा भलाई तूं॥
हाड़ मांस की इस काया ने, मिट्टी में मिल जाना। धर्म०।
धर्म कमाना, ज्ञान बढ़ाना, सच्चा यही खजाना। ,, ।
5. सद्ग्रन्थों में ऋषि मुनियों के जीवन-अनुभव अंकित हैं।
देते हैं आलोक उन्हें ये, जिनके मानस शंकित हैं।
ईश्वर का उपदेश वेद है, पढ़ना और पढ़ाना। धर्मकमाना।
धमकमाना ज्ञान बढ़ाना, सच्चा यही खजाना। ,, ।
6. योग-साधना की सिद्ध ही, चरम लक्ष्य है जीवन का।
इसके द्वारा धुल जायेगा, "पाल" मैल तेरे मन का॥
यम नियमों का पालन करके, ज़ीवन उच्च वनाना। धर्मकमाना
धर्म कमाना, ज्ञान बढ़ाना, सच्चा यही खजाना। ,, ।



गीत नं० ८०

[तर्जः—धन्य है तुझ को ऐ ऋषि, तूने हमें जगा दिया]

बन्धन कुवासनाओं के, जब तक न छूट जायेंगे।
पावन प्रभु को सधको, तब तक कभी न पायेंगे ॥
जीवन-विकास में गति, तब तक न आयेगी कभी।
जब तक किये कुकर्म पर, आंसू नहीं बहायेंगे ॥
हाथ मलेंगे, रोयेंगे, आयेगा अन्त काल जब।
जीवन में पूंजी धर्म की, जब तक हम न बढ़ायेंगे ॥
जिह्वा से मृत्यु-काल में, निकले न नाम ओम् का।
यौवन में दिव्य देव के गीत अगर न गायेंगे ॥
मानव का तन तो साधना-के ही लिए हमें मिला।
करनी की पूछ होगी जब, ईश्वर को क्या बकायेंगे ॥
निश्चय प्रभु-उपासना, में मन रमेगा "पाल" जो-
पाप की कामनाओं को, मन से अगर भुलायेंगे ॥



गीत नं० ८१

(तर्ज :- मेरे मन की बीन बजा)

मन पगले, प्रभु गुण गा।
मन पगले, प्रभु गुण गा ॥
गुण गा, सुख पा,
मुक्ति-मार्ग पै जा।
मन पगले, प्रभु गुण गा ॥
पता न जानूं, कैसे पाऊं ?
भक्ति बिना गुण कैसे गाऊं ?

कैसे उसमें मन रमाऊं ?
कोई यह दे समझा-
मन पगले प्रभु गुण गा ।।

नहीं बताया जा सकता है, उसका ठौर ठिकाना।
रंग लो मन को "पाल" भक्ति से, ईश्वर को गर पाना ।।

प्रभु-प्रेम का रंग चढ़ा।
मन पगले, प्रभु-गुण गा ।।



गीत नं. ८२

(तर्ज—निर्बल के प्राण पुकार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे)

हे विश्व-नियामक, हे व्यापक, उद्धार करो भव-पार करो।
हे पतितों के परित्राता, तुम-उपकार करो, सद्भाव भरो ।।

श्रद्धा भक्ति का भाव लिए, चरणों में आज उपस्थित हूं।
मैं पुत्र तुम्हारा हूं भगवन्, हे पूज्य पिताजी प्यार करो ।।

सौभाग्य उदय तब होता है, जब तेरी दया की वर्षा हो।
"शन्नो देवी०" का मन्त्र पढ़ूं, सुख-सागर, सुख-संचार करो ।।

भोगों का रोग बढ़ा जग में, मानवता हाहाकार करे।
हे रुद्र, दया कर दग्ध सभी, अब हिंसा अत्याचार करो ।।

मानव मानव का मित्र बने, सब वैर-विरोध विचार मिटें।
सद्बुद्धि, स्नेह-सुधा सिंचित, हे नाथ सकल संसार करो ।।

अध्यात्म-रुचि बढ़ती जाये, जीवन प्रगति-पथ अपनाये।
हम सब को पावन "पाल" सदा, आचार तथा व्यवहार करो ।।



गीत नं ८३

(तर्ज—धन्य है तुझ को ऐ ऋषि, तूने हमें जगा दिया)

हे मन, तुझे धिक्कार है, तूने मुझे सुला दिया।
भोगों की भूख को बढ़ा, धर्म करम भुला दिया ।।

ईश्वर-कृपा से था मिला, नर-तन, कि साधना करूं।
तू ने कुमार्ग पै चला, मिट्टी में सब मिला दिया ।।

सोचा था वेद-ज्ञान का, अमृत करूंगा पान मैं।
तूने अनर्थ क्या किया, पापों का विष पिला दिया ।।

योगी ऋषि ने विश्व में, किया प्रकाश ज्ञान का।
योगी के मार्ग से हटा, भोगी मुझे बना दिया ।।

मेरी थी कामना कि मैं, ऊंचा उडूंगा गगन में।
गंदे विचार-गर्त में, क्यों कर मुझे गिरा दिया ।।

मेरा महान् लक्ष्य था, जीवन में साधना करूं।
माया के मोह से लुभा, "पाल" का दिल ढुला दिया ।।



अध्यात्म गीत—गंगा

गीत नं० ८४

अध्यात्म - गंगा

अध्यात्म की गंगा बहती है, सब साधक इस में स्नान करो।
तन मन की मैल मिटा करके, जीवन का नव निर्माण करो।।

निर्मल शीतल जल बहता है, जो अन्तःकरण-मल हरता है।
सब पाप तथा संताप मिटें, प्यारो अपना उत्थान करो ।।

है वातावरण पवित्र यहां, मन मुग्ध हुआ प्रभु-चिन्तन में ।
सात्विकता का संवर्धण हो, जो वेद-सुधा का पान करो ॥
अभ्युदय तथा निःश्रेयस् की सिद्धि सद्धर्म का लक्षण है ।[1]
इहलोक तथा परलोक बनें, जो सत्कर्मानुष्ठान करो ॥
रवि और शशि के तुल्य बनो, सब स्वस्ति-पंथ के अनुयायी ।[2]
पग पृथ्वी पर मन गगन छुए, ऐसा निज लक्ष्य महान् करो ॥
समिधा बन आहुति दो अपनी, जीवन का याग सफल होगा ।
जन-सेवा, परहित-साधन में, तन मन धन सब बलिदान करो ॥

□□□

शुद्ध जीवन

गीत नं० ८५

मानव, शुद्ध बनाले जीवन ।
भोगों की तृष्णा को मिटा दे, अन्तःकरण कर पावन ॥ मानव० ।
जीवन-अवधि बीत रही है, क्षीण हुआ तन क्षण क्षण ।
अब भी न संभला, कब संभलेगा ? बीत गया तब यौवन । मानव० ।
बड़े बड़े उपदेश सुने, पर—हुआ न कुछ परिवर्तन ।
किये अनेकों ज्ञान-गपौड़े, हुआ न पर निर्मल मन ॥ मानव० ।
इन्द्रिय-जय है जिस जीवन में, वह तन तो है तपोवन ।
सब भूमण्डल उस ने जीता, जीत लिया जिस ने मन । मानव० ।
श्रद्धा, भक्ति, सेवा, संयम, है सच्चा जीवन-धन ।
स्वार्थ, कपट, भोगों की लिप्सा, ये हैं मृत्यु-निमन्त्रण ॥ मानव० ।

---

[1] "यतोऽभ्युदय निश्रेयस्सिद्धि : स धर्म"

[2] "स्वस्तिपंथामनुचरेम सूर्याचन्द्रामसाविव ।"
(ऋग्वेद मंडल 5, सूक्त 51, मन्त्र 15)

मानवता का मान बढ़ाओ, करो नहीं पर-पीड़न ।
स्वर्ग बनेगा, लक्ष्य हों ऊंचे, उच्च तथा हों साधन ।। मानव० ।
त्याग तपस्या से ही होगा, सुरभित जीवन-कानन ।
"पाल" समाधि के साधन से, होगा ईश्वर-दर्शन ।। मानव० ।



गीत न० ८६

भगवान् हमें सद्बुद्धि दो

हम तेरे उपासक मांग रहें, भगवान् हमें सद्बुद्धि दो ।
हे सविता, मेघा प्रज्ञा दो, भगवान् हमें सद्बुद्धि दो ।।

बुद्धि-बल से ही मानव का, उत्कर्ष यथावत् सम्भव है ।
गायत्री मंत्र में माँगा है, भगवान् हमें सद्बुद्धि दो ।।

"को ऽसि कतमो ऽसि कस्यासि को नामासि"[1] का विवेचन दो ।
अध्यात्म-विषय के चिन्तन की, भगवान् हमें सद्बुद्धि दो ।।

हे देव उपास्य, उपासक के सब पाप दुरित दुख दूर करो ।
हम भद्र कहें और भद्र सुनें, भगवान् हमें सद्बुद्धि दो ।।

हम भौतिक भोग न मांग रहे, जितने हैं मिले पर्याप्त हैं वे ।
जो अन्तःकरण-तम हरण करे, भगवान् हमें सद्बुद्धि दो ।।

सद्ज्ञान, विवेक, समृद्धि दो, तन धन को मन की शुद्धि दो ।
सब ऋद्धि वृद्धि सिद्धि दो, भगवान् हमें सद्बुद्धि दो ।।

जीवन क्या है ? मृत्यु क्या है ? क्यों आये मानव-योनि में ।
इन गूढ़ रहस्यों को समझें, भगवान् हमें सद्बुद्धि दो ।।

इस पावन बेला में मिल कर, हम यही याचना "पाल" करें ।
भव-सागर पार उतरने को, भगवान् हमें सद्बुद्धि दो ।।

---

[1]यजुर्वेद अ० 7, मंत्र 29

गीत नं० ८७

महा वन्दनीय विभो !

तेरा ध्यान लगाया है, महा वन्दनीय विभो !
हृदय-मन्दिर सजाया है, महा वन्दनीय विभो !!
ध्यान की मुद्रा में आसन लगाया !
मन-वृत्तियों को एकाग्र बनाया !!
आत्मानन्द पाया है, महा वन्दनीय विभो !
तेरा ध्यान लगाया है, महा वन्दनीय विभो !!
करोड़ों रवि तारे नभ में चमकते !
नदियें बहें और बादल गरजते !!
तेरी अद्भुत माया है, महा वन्दनीय विभो !
तेरा ध्यान लगाया है, महा वन्दनीय विभो !!
परम कारुणिक देव, ब्रह्माण्ड-शासक !
उपास्य तूं मेरा, मैं तेरा उपासक !!
विश्व तू ने रचाया है, महा वन्दनीय विभो !
तेरा ध्यान लगाया है, महा वन्दनीय विभो !!
श्रद्धा के पुष्पों को लेकर मैं आया !
भक्ति भरी भावना को जगाया !!
तुझे मन में बसाया है, महा वन्दनीय विभो !
तेरा ध्यान लगाया है, महा वन्दनीय विभो !!
कैसे कहूं क्या अवस्था है मन की !
होश नहीं आज भौतिक तन की !!

आत्मा जगमगाया है, महा वन्दनीय विभो !
तेरा ध्यान लगाया है, महा वन्दनीय विभो ! !

कठिन साधना, पर मैं हिम्मत न हारूं !
अन्तर्मुखी हो प्रभु को पुकारूं ! !

त्याग दी मोह माया है, महा वन्दनीय विभो !
तेरा ध्यान लगाया है, महा वन्दनीय विभो ! !

मांगूं नहीं कोई भौतिक वस्तु ।
"तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ! !"[1]

याचना गीत गाया है, महा वन्दनीय विभो !
तेरा ध्यान लगाया है, महा वन्दनीय विभो ! !

ज्योति जगी आत्मा में विभुकी !
अनुभूति है आज पाई प्रभु की ! !
"पाल" आनन्द आया है, महा वन्दनीय विभो !
तेरा ध्यान लगाया है, महा वन्दनीय विभो ! !



गीत नं० ८८

आत्म-समर्पण

मैं अपना आप करूं अर्पण, भगवान् मुझे स्वीकार करो ।
अच्छा व बुरा हूं तुम्हारा हूं, भगवान् मुझे स्वीकार करो ।।

जीवन में भूलें नाथ हुईं, कर याद उन्हें पछताता हूं ।
अल्पज्ञ हूं हे सर्वज्ञ पिता, ऊंचा मेरा आचार करो ।।

---

1 यजुर्वेद अ० ३४ मन्त्र १ से ६

तेरी माया ने मोह लिया, मैं लिप्त हुआ बरबाद हुआ।
हे मायापति, माया-बन्धन से मुक्त बना उद्धार करो॥
डगमग डोले जीवन-नैया, भगवान् भरोसा है तेरा।
कर जोड़ विनय मैं करता हूं, भव-सागर से प्रभु पार करो॥
जीवन-बगिया में पुष्प खिलें, हरयावल और सुगन्धि हो।
मम अन्तःकरण सुवासित हो, सेवक का देव सुधार करो॥
श्रद्धा भक्ति के सुमन लिए, सेवा में "पाल" उपस्थित्त है।
मैं आत्म-समर्पण करता हूं. स्वीकार व अंगीकार करो॥



गीत नं० ८९

तूं कहाँ, तूं कहाँ ?

हे पिता तूं पता दे बता, है कहां ?
तूं कहां, तूं कहां, तूं कहां, तूं कहां !!
गंगा यमुना की धारा में ढूंढा तुझे,
ऊंचे पर्वत, वनों में देखा तुझे।
मन्दिर मसजिद में जाकर पूजा तुझे,
मक्का और मदीना में पूछा तुझे॥

तुझे ढूंढते छाना है सारा जहाँ,[1]
तूं कहां, तूं कहां, तूं कहां तूं कहां !!
गिरजाघर में गया तेरा घर न मिला,
गुरुद्वारा गया तेरा दर न मिला।
नीचे ऊपर इधर तूं उधर न मिला;
मठ तीर्थ भी छाने तूं पर न मिला॥

---
[1] जहां=संसार।

मथुरा काशी गया, न मिला तूं वहां।
तूं कहाँ, तूं कहाँ, तूं कहाँ, तूं कहाँ !!

कोई कहता कि तूं कैलाश रहे,
क्षीर सागर में रहता कोई कहे।
चौथे आसमां[1] का कोई दाबा करे,
कोई सातवें आसमां की बात कहे !!

किस की मानूं कि तूं रहता है कहां।
तूं कहां, तूं कहां, तूं कहां, तूं कहां !!

देखे ऋषि महर्षि अनेकों गुणी,
नेति नेति तुम्हें सब कहते मुनि।
तुझे जाने न कोई गृहस्थी बनी[2],
तेरा पता बताये न कोई धनी ॥

मन में घोर निराशा छाई यहाँ।
तूं कहां तूं कहां तूं कहां तूं कहां !!

(इस निराशा की स्थिति में अन्तरात्मा में एक ध्वनि उठती है—)

तभी ध्वनित हुई मेरी अन्तरात्मा,
जैसे—बोल रहे प्रभु परमात्मा।
"मुझे पाना तो पाप का कर खात्मा,[3]
मेरा वास-स्थान है शुद्ध आत्मा ॥

श्रद्धा भक्ति का वातावरण है जहां,
मैं वहां, मैं वहां, मैं वहाँ, मैं वहां ॥"

"शुद्ध निर्मल पवित्र बना आत्मा,
मुख भोग से मोड़ बन धर्मात्मा।
निष्ठावान् तथा बन पुण्यात्मा,
स्वयं तुझ से कहेंगे फिर परमात्मा ॥

आसमां[1]=आकाश बनी[2]=वानप्रस्थी खात्मा[3]=समाप्ति

भक्त ढूंढता फिरता मुझे तूं कहां ?
मैं वहां तूं जहां, तूं जहाँ, मैं वहां ॥"

सुनी ध्वनि तो नेत्रों को बन्द किया,
ध्यान—मुद्रा में दिव्यानन्द लिया।
एक ज्योति जगी, जगमगाया हिया,
मेरे अन्दर ही बैठा था मेरा पिया ॥

"पाल" धन्य हुआ, प्रभु रहता यहां।
वह यहां, वह यहां, वह यहां, वह यहां ॥



गीत नं० ६०

मेरा उपास्यदेव

मेरे हृदय में तो बसा, मेरा उपास्य देव है।
अन्तःकरण को प्रेरता, मेरा उपास्य देव है ॥

देता गति वह विश्वको, स्वयं गति से दूर है।[1]
अणु अणु में रम रहा, मेरा उपास्य देव है ॥

नभ में जो चांद चांदनी देता, निशा का तम हरे।
उसे प्रकाश दे रहा, मेरा उपास्य देव है ॥

कल कल निनाद कर नदी सागर की ओर जा रही।
मेरा भी लक्ष्य-सिन्धु वह, मेरा उपास्य देव है ॥

---

1 "तदेजति तन्नैजति" (यजुर्वेद अ० ४, मंत्र ४)

कोटि करोड़ सूर्य ग्रह, नियमित गति में घूमते ।
सारी व्यवस्था का पति, मेरा उपास्य देव है ।।

व्यापक वह सूर्य इन्द्र में, धरा गगन व सिंधु में ।
सलिल के बिन्दु बिन्दु में मेरा उपास्य देव है ।।

जगत्पिता महान् जो, अमर अकाय ओम् है ।
दिव्य दयालु ब्रह्म वह, मेरा उपास्य देव है ।।

आज है आत्म-लोक में ज्योति प्रकाश दे रही ।
ज्योति-स्वरूप "पाल" वह, मेरा उपास्य देव है ।



गीत न० ६१

जगदीश-भक्ति

जगदीश्वर की भक्ति-सुधा से मन पवित्र जो नहीं किया, तो—
मानव, तेरा भाग्य समुज्ज्वल सदा सदा को सो जाएगा ।।

न जाने कितनी योनि में—
भटक भटक नर योनि मिली है ।
और सभी धन तो झूठे हैं,
नर तन ही सोने की डली* है ।।
इस योनि में दिव्य साधना—
के सब साधन समुपस्थित हैं ।
यही अलौकिक शक्ति-केन्द्र है,
जिसे देख सुर भी विस्मित हैं ।।

*डली=टुकड़ा

समय रहे जो अरे अभागे, इस का न उपयोग किया, तो—
नर तन का यह रत्न गन्दगी की ढेरी में खो जाएगा ॥
मानव, तेरा भाग्य समुज्ज्वल सदा सदा को सो जाएगा ॥

पशु, पक्षी, व जलचर नभचर,
भोग-योनि में भटक रहे हैं ।
उड़ न सकें यह सूर्य-दिशा को,
अन्तरिक्ष में लटक रहे हैं ॥
पर अपनी यह मौन गिरा में
यही सदा संदेश सुनाते ।
"तुम ईश्वर के श्रेष्ठ खिलौने",
यह कह कर वह तुझे जगाते ॥

बुझते जीवन के दीपक को नहीं भक्ति का तेल दिया, तो—
घोर तिमिर में तेरा जीवन-दीपक लुप्त ही हो जाएगा ॥
मानव, तेरा भाग्य समुज्ज्वल सदा सदा को सो जाएगा ॥

अभी समय है दिव्य साधना—
के पथ का राही बन प्यारे—
संयम से चल श्रेय मार्ग पै—
जिस पै चले ऋषि मुनि सारे ॥
तेरे अन्दर तेरा साजन—
तुझ को अपनी ओर बुलावे ।
पर पापों की घोर घटा में
उसे अभागा देख न पावे ॥

उस को ही भगवान् मिलेगा, मोक्ष मार्ग का द्वार मिलेगा—
ज्ञान-नीर से जो जीवन में, पाप-कालिमा धो जाएगा ॥
मानव, तेरा भाग्य समुज्ज्वल सदा सदा को सो जाएगा ॥

कोई कहता ढूंढा वह न—
अत्र मिला न तत्र मिला ।
पर उपास्य मेरा तो मुझ को—
अत्र तत्र सर्वत्र मिला ॥
वह तो है "सूपायन", पर वह*—
मात्र पात्र को मिलता है ।
नर-योनि के हृदय-सरोवर—
में प्रभु—पंकज खिलता है ॥

"पाल" पिता परमेश्वर उस को निश्चय ही मिल जाए, जो—
विश्वपति की विरह-व्यथा में व्याकुल मन से रो पाएगा ॥
मानव, तेरा भाग्य समुज्ज्वल, सदा सदा को सो जाएगा ॥

□□□

गीत नं० ९२

ईशोपलब्धि

ईश अनादि, योग-समाधि द्वारा जो उपलब्ध किया, तो—
भव-बन्धन सब कट जायेंगे, महानन्द-अनुभूति मिलेगी ॥

विषयों का अनुराग बुरा है,
भोग रोग का घर है प्यारे ।
मन को जीते जीत, और है—

*सूपायन—सुविधा से प्राप्त हो सकने वाला,
"स नः पितेव सूनवे ऽग्ने सूपायनो भव ।"
(ऋग्वेद मंडल १, सूक्त १, मंत्र ९)

हार हमारी मन से हारे ।।
"अहमिन्द्रो न पराजिष्ये" का—
शुभ संकल्प सदा दोहराओ ।
क्रोध, अनैतिक लोभ, मोह, मद
और पाप के पास न जाओ ।।
विषय वासना के पाशों से मानव. मन को मुक्त किया, तो—
लोक तथा परलोक बनेगा, और भाग्य की कली खिलेगी ।।
भव-बन्धन सब कट जायेंगे, महानन्द-अनुभूति मिलेगी ।।
ज्ञान-गिरा-गोतीत पिता की—
गोद पुत्र को सदा बुलाये ।
पाप-पंक में लिप्त पुत्र पर
शोक. उधर जाने न पाये ।।
पिता पुत्र का मेल है सम्भव,
जीव श्रेय-पथ जो अपनाये ।
महा मनोहर भक्ति-सरोवर—
में मन नित अपना नहलाये ।।
शुद्ध चित्त की वृत्ति बना जो तन्मयता से ओम् जपो, तो—
दिव्य देव की ज्योति जगेगी और हृदय की तार हिलेगी ।।
भव-बन्धन सब कट जायेंगे, महानन्द—अनुभूति मिलेगी ।।
मन्द भाग्य है जीव जो कहता—
ईश नहीं चिन्तन में आया ।
भुवनपति का सुमन समन में,
मैंने तो दर्शन है पाया ।।
धरा गगन में, सिन्धु-सदन में,
व्यापक परमेश्वर की माया ।

वेद मन्त्र में कही गई है—
अमृत उस ईश्वर की छाया ।।

*"अग्ने नय सुपथा" कह कर जो नम्र याचना जीव करे, तो—
देव दर्शनों को पाने की दिव्य दृष्टि है "पाल" मिलेगी ।।
भव-बन्धन सब कट जायेंगे, महानन्द—अनुभूति मिलेगी ।।



गीत नं० ९३

ब्रह्म-दर्शन-जिज्ञासा

ब्रह्म-दर्शनों की जिज्ञासा निश्चय पूरी होगी, अगर तुम—
जीवन अपना शुद्ध बनाओ और साधना में जुट जाओ ।।

पहले, हे जिज्ञासु मन की
कुटिल कामना दूर हटा दो ।
भोगों की आसक्ति त्याग कर
विषय-वासना, मोह मिटादो ।।

चंचलता को छोड़, वृत्तियें
ध्यान लगा एकाग्र बना लो ।
योगसिद्धि की पूर्व भूमिका
की सामग्री सभी जुटा लो ।।

---

*"यस्यच्छायाऽमृतं" (यजुर्वेद अ० २५-मंत्र १३)
*"अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्" (यजुर्वेद अ० ४०, मंत्र १६)

विरह-व्यथा में जैसे प्रेमी तड़पे वैसे विकल बनो, तो—
निश्चय समझो हृदयासन में तुम अपने प्रीतम को पाओ ।।
जीवन अपना शुद्ध बनाओ और साधना में जुट जाओ ।।

जो यह सम्मुख नभ नग सागर—
शस्य श्यामला शुभ्र मही है ।।
इन में देख ध्यान मग्न हो—
शोभा किस की व्याप रही है ।।
कल कल करती बहती सरिता
कहती "आज्ञा मुझे यही है ।"
शीतल पवन कहे "प्रभु जी की
है शीतलता, मेरी नहीं है" ।।

व्योम-बिहारी विहग-मंडली के कलरव में यही ध्वनि है—
"हे दर्शन-अभिलाषी, मेरे स्वर में स्वर दे प्रभु-गुण गाओ ।।"
जीवन अपना शुद्ध बनाओ और साधना में जुट जाओ ।।

देख गगन में तारा मंडल
प्रभु-आभा से दमक रहा है ।
ज्योति-पुंज से ज्योति लेकर
सूर्य चन्द्र भी चमक रहा है ।।
व्यापक विभु का सुमन सुमन में
सौंदर्य दिखलाई देता ।
प्रभु-प्रेरित हो पुष्प सुगन्धि
देकर सब का मन हर लेता ।।

जगन्नियन्ता की सत्ता का पत्ता पत्ता परिचय देता ।
दर्शन होगा दृष्टि अपनी हे साधक यदि सूक्ष्म बनाओ ।।
जीवन अपना शुद्ध बनाओ और साधना में जुट जाओ ।।

दाने दाने की रचना में*
किस की कारीगरी भरी है।
लाल लाल मोती की मोहक
किस ने सुन्दर लड़ी जड़ी है॥
तुच्छ बीज से किस सत्ता ने
इतना ऊंचा वृक्ष बनाया।
एक बीज से बने वृक्ष पै
लाखों बीजों को उपजाया॥

यह सब जिस के ऋत का फल है, वह देखो वह दीख रहा है।
देखोगे, तुम खुद को उस की, अगर दया का पात्र बनाओ॥*
जीवन अपना शुद्ध बनाओ और साधना में जुट जाओ॥

कौन प्रेरणा देकर तुम को
पाप-पुण्य का फल दरसाता।
अन्तःकरण कभी भय पूरित
कभी वहाँ उल्लास समाता॥
आततायी भी अन्तकाल में
जिस की आज्ञा में झुक जाता।
जिस की बनी व्यवस्था के वश
कोई जाता कोई आता॥

---

*कन्धारी अनार के दानों को देख कर कवि कहता है।
*"नायमात्मा प्रवचनेन न लभ्यो मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैषवृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनूं स्वां॥"
(कठोपनिषद् द्वितीया वल्ली, श्लोक २३)

विश्व-व्यवस्था कहे, मानवो, कोई व्यवस्थापक है इस का—
भले उसे भगवान् कहो, या ओम् ब्रह्म परमेंश बताओ ।।
जीवन अपना शुद्ध बनाओ और साधना में जुट जाओ ।।

तुम सुषुप्ति में जब सोते हो,
कौन तुम्हारे प्राण चलाता ?
मातृ-गर्भ की कारा में है—
कौन शिशु के प्राण बचाता ?
ऋतु-परिवर्तन, प्रत्यावर्तन
किस शक्ति ने चक्र चलाया ?
किस सत्ता ने कोटि सूर्य की—
गति-परिधि का नियम बनाया ??

चर्म-चक्षु से नहीं दीखता, ज्ञान-नेत्र से दर्शन होते—
"पाल" प्रभु को पाना सम्भव यदि साधना-पथ अपनाओ ।।
जीवन अपना शुद्ध बनाओ और साधना में जुट जाओ ।।



गीत न० ६४

जीवात्मा परमात्मा

जीवात्मा परमात्मा के पास आ गया।
आनन्द—सिन्धु—स्रोत में साधक समा गया ।।
जागा विवेक, वासना—सम्पर्क लुप्त है।
जीवन—रहस्य—साधना को जीव पा गया ।।
चेतन की चेतना जगी, तम—तोम मिट गया।
अन्तःकरण में ब्रह्म का आनन्द छा गया ।।

सौभाग्य का उदय हुआ, है पुण्य-फल मिला।
भगवान् को स्वभक्त है जो आज भा गया।।
मैं क्या कहूं वह कौन था जो गुन गुना गया।
मेरे हृदय में प्रेरणा के गीत गा गया।।
मैं भक्ति भाव से करू उसकी उपासना।
जो दिव्य देव कर दया दर्शन दिखा गया।।
तू धन्य है, तू धन्य है, ऐ मेरे देवता।
अन्तःकरण में ज्ञान की गंगा बहा गया।।
ऐ "पाल" आज ब्रह्म की मुझ पै कृपा हुई।
अज्ञान का, अविवेक का परदा हटा गया।।



गीत नं० ९५

समिधा बनूंगा

मैं समिधा बनूंगा, सुसमिधा बनूंगा।
यह व्रत ले लिया है, सुसमिधा बनूंगा।।
मुझे ध्यान वेदोक्त संदेश का है,
मेरा आत्मा इध्म परमेश का है।।[1]
न चिन्तन मुझे ईर्ष्या द्वेष का है,
नहीं भय मुझे मृत्यु के क्लेश का है।।
मेरा ध्येय ऊंचा, मैं ऊंचा चढूंगा।
मैं समिधा बनूंगा, सुसमिधा बनूंगा।।

---

१. "अयन्त इध्म आतमा" (आश्वलायन गृह्सूत्र १-१०-१२)

"अहं जन्मना अग्नि" यह रूप मेरा,
उदय अग्नि होते ही, भागे अन्धेरा।
सभी भोग अघ हैं, निशा का बखेड़ा,
निशा—नाश—उपरान्त होता सवेरा।।

हुआ है सवेरा, मैं आगे बढ़ूंगा।
मैं समिधा बनूंगा सुसमिधा बनूंगा।।

पड़े सो रहे जो मनुज, वह अभागे—
बिना साधना के नहीं भाग जागे।
मेरा लक्ष्य समिधा से भी दूर आगे,
सुसमिधा बने, जो सभी स्वार्थ त्यागे।।

सुसमिधार्थं पहले मैं समिधा बनूंगा।
मैं समिधा बनूंगा, सुसमिधा बनूंगा।।

"चरैवैति" का आचरण मुझको प्यारा[1],
कभी विघ्न-बाधाओं से मैं न हारा।
मेरी कामना, जा गहूं गगन—तारा,
मुझे मात्र परमेश्वर का सहारा।।

विकट संकटों से न किंचित् डरूंगा।
मैं समिधा बनूंगा, सुसमिधा बनूंगा।।



२. "चरैवैति चरैवैति"=आगे बढ़ते चलो, आगे बढ़ते चलो।
(यह एक उपनिषद्—वाक्य है)

गीत नं० ६६

प्रणव महिमा

परमेश्वर का नाम ओम् है, श्रद्धा से जो इसे जपो, तो—
ओम् नाम की नैया, भैया, भव सागर से पार उतारे ।।

ओम् ब्रह्म का आदि नाम है,
ऋषि मुनियों ने यही बताया।
उपनिषदों में ओम् नाम की,
महिमा का ही वर्णन आया ।।
इसी नाम से योगिजनों ने—
जगदीश्वर का ध्यान लगाया।
यही नाम जप प्रभु-भक्तों ने
परमानन्द हृदय में पाया ।।

[1]देवपुरी इस नर काया में माया से मन दूर हटा कर—
ओम् नाम के नित्य जाप से जीव पहुंचता मुक्ति द्वारे ।।
ओम् नाम की नैया, भैया. भव—सागर से पार उतारे ।।

[2]"ओ३म् क्रतोस्मर" "ओम्प्रतिष्ठ"
"ओ३म् खं ब्रह्म" वेद वचन हैं।

---

१. "अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या" (वेद मन्त्र)
२. वायुरनिलममृतमयेदं भस्मान्त " शरीरम्
ओ३म् क्रतो स्मर क्लिबे स्मर कृत " स्मरे" ।। (यजु० अ० ४० मंत्र १५)

ब्राह्मण-ग्रन्थों में भी ऐसे—
ओम्-विषय में कई कथन हैं ।।

"ओमित्येवं ध्यायथ" कह—
मुंडक मुनि ने उपदेश दिया था ।
मांडूक्य, छांदोग्य, प्रश्न में
यही विषय ऋषियों ने लिया था ।।

तैत्तिरीय, कठ, श्वेताश्वेतर, ऐतरेय उपनिषदों में भी—
कहा "मिलेगा ब्रह्मलोक पद, ओंकार के जाप सहारे ।।
ओम् नाम की नैया, भैया, भव-सागर से पार उतारे ।।

मनु, महर्षि याज्ञबल्क्य ने—
ओम्-महत्ता को दरसाया ।
"तस्य वाचकः प्रणवः" ऐसा—
सूत्र योगदर्शन में आया ।।
ओम् नाम ले राम सदा थे—
जप संध्या का नियम निभाते ।
"ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म"
गीता में यूं केशव समझाते ।।

जन धर्म व बौद्ध धर्म में ओम्—महत्ता मान्य हुई है ।
"ओंकार सतनाम" शब्द में सिख धर्म भी है स्वीकारे ।।
ओम् नाम की नैया, भैया, भव-सागर से पार उतारे ।

अ उ म् का मेल ओम् है,
इसमें ओ प्लुत बोला जाये ।
ओंकार उद्गीथ मन्त्र है,
एक ऋषि ऐसा बतलाये ।।

ओम् सूत्र संक्षिप्त यद्यपि
"अ उ म्" में महा मर्म है।
तीन मात्राओं में अंकित—
किया जीव का आत्म-धर्म है ॥

गागर में सागर सम इसमें परम ब्रह्म का भेद समाया।
शुद्ध भाव से ओम् ओम् का कर उच्चारण मन में प्यारे ॥
ओम् नाम की नैया, भैया, भव-सागर से पार उतारे ॥

"अ" परमेश्वर का वाचक है,
"म्" माया जड़ का द्योतक है।
और उकार मध्य का वासी—
जीव—आत्मा का बोधक है ॥
"उ" मुख रहे "अकार" ओर तो—
निश्चय "उ" उन्नत पद पावे।[1]
पर "मकार का ओर गये "उ"
पैरों तले दबाया जावे ॥[2]

ब्रह्म आत्मा तथा प्रकृति का रोचक रूपक है इसमें
इस रहस्य का भेद समझ कर जीवन अपना जीव सुधारें ॥
ओम् नाम की नैया, भैया, भव-सागर से पार उतारे ॥

ब्रह्मा से जैमिनि मुनि तक—
सब ने ओम्—विरुद है गाया।
हृदय-भवन में भव्य भाव से
ओम् भक्ति का दीप जलाया ॥

---

१. अ+उ=ओ २. म्+उ=मु

"परम ब्रह्म का नाम ओम् है"
दयानन्द ने भी दरसाया ।।
प्रणव—प्रतिष्ठा, सच्ची निष्ठा—
से करना कर्तव्य बताया ।।
अन्तर्मुख, हो सात्विकता से, चित्तवृत्ति एकाग्र बनाकर
"पाल" ओम् का ध्यान लगाये बैठ मनोरम नदी किनारे[३] ।।
ओम् नाम की नैया, भैया, भव-सागर से पार उतारे ।।*



गीत नं ९७

ईश्वर भजन

सुख में दुख में रोग में, ईश्वर भजन किया करो।
जगनियन्ता ओम् का, नाम सदा लिया करो ।।
ध्यान लगाओ ईश का मन में मिठास आएगी।
परम पिता की भक्ति का, अमृत सदा पिया करो ।।
प्रातः उठो पवित्र हो, स्नान से निवृत्त हो ।
श्रद्धा से मन एकाग्र कर, संध्या हवन किया करो ।।
प्यार सहानुभूति से, करो विनष्ट द्वेष को ।
वैर विरोध से फटे, दिलों को तुम सिया करो ।।
दुःख पराया देख कर, जो कुछ कर सको करो।
देना महान् धर्म है, कुछ न कुछ दिया करो ।।
बादल घिरें विपत्ति के, मन में कभी न भय करो।
विश्वपति महान् की, छाया तले जिया करो ।

* नदी=गंगा (यह गीत ता० १.३.७० को हरिद्वार में गंगा-तट पर बैठे हुए रचा गया था।)

उसको भुलाये, पाप के-मन में विचार आयेंगे ।
अपने कुकर्म याद कर, कभी तो रो लिया करो ।।

पाप न पास आयेंगे, संकट नहीं सतायेंगे ।
पाप-निवृत्ति के लिए, योग की क्रिया करो ।।

भोगों का फल बुरा सदा, व्याधि जरा का घर हैं ये ।
योवन बना रहेगा जो, इन्हें घृणा किया करो ।।

"पाल" प्रभु न दूर हैं, पाना उन्हें सुगम, अगर—
अपना विशुद्ध भाव से, भक्ति भरा हिया करो ।।



गीत नं० ९८

प्रभो, मार्ग-दर्शन करो

किस लिए जन्म पाया है ? प्रभो, मार्ग-दर्शन करो ।
जीव जग में क्यों आया है ? प्रभो, मार्ग-दर्शन करो ।।

"कस्त्वा युनक्ति, स त्वा युनक्ति ।
कस्मै त्वा युनक्ति, तस्मै त्वा युनक्ति ।।"*

मंत्र में क्या बताया है ? प्रभो, मार्ग-दर्शन करो ।
किस लिये जन्म पाया है ? प्रभो, मार्ग-दर्शन करो ।।

"कि कारणं ब्रह्म" का मर्म क्या है ?*
मेरा लक्ष्य क्या है, मेरा धर्म क्या है ??

---

*यजुर्वेद अ० १ मन्त्र ६
*श्वेताश्वेतरोपनिषद् का प्रारम्भिक पाठ

कुछ समझ में न आया है, प्रभो, मार्ग-दर्शन करो।
किस लिए जन्म पाया है ? प्रभो, मार्ग-दर्शन करो ॥

नचिकेता से योग के साधकों ने।
दयानन्द से ईश—आराधकों ने ॥

कैसे जीवन बनाया है ? प्रभो, मार्ग-दर्शन करो।
किस लिए जन्म पाया है ? प्रभो, मार्ग—दर्शन करो ॥

सभी भोग हैं रोग का घर भयानक।
सुने हैं विषय-विष के भीषण कथानक ॥

फिर भी क्यों मन लुभाया है ? प्रभो, मार्ग-दर्शन करो।
किस लिये जन्म पाया है ? प्रभो, मार्ग-दर्शन करो ॥

"भोगाः न भुक्ताः वयमेव भुक्ताः,
तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः।
तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः,
कालो न यातो वयमेव याताः ॥"

फिर भी क्यों मन लुभाया है, प्रभो. मार्ग—दर्शन करो।
किस लिये जन्म पाया है ? प्रभो, मार्ग – दर्शन करो ॥

मैं हूं इन्द्र, है इन्द्रियें मेरी नौकर।
मगर पाप के पंक में लिप्त होकर—

की कलंकित यह काया है, प्रभो, मार्ग-दर्शन करो।
किस लिए जन्म पाया है ? प्रभो, मार्ग—दर्शन करो।

कहां से मैं आया, किधर जा रहा हूं ?
न कोई समस्या का हल पा रहा हूं ॥

सोच ने दिल दुखाया है, प्रभो, मार्ग-दर्शन करो।
किस लिये जन्म पाया है ? प्रभो, मार्ग-दर्शन करो ॥

"भयानां भयं भीषणं भीषणानां,
गतिः प्राणिनां पावनं पावनानां ।"
सकल विश्व का है नियामक पिता जो—
परम भक्ति की भावना से उसी को—
"पाल" मस्तक झुकाया है, प्रभो, मार्ग-दर्शन करो ।
किस लिए जन्म पाया ? प्रभो, मार्ग-दर्शन करो ।।



गीत नं० ६६

सत् जीवन मेरा बन जाये

है वन्दनीय, है विनय यही, सत् जीवन मेरा बन जाये ।
प्रभु, प्रेरित कर दो मन ऐसा, विषयों में इसे न रस आये ।।

जीवन में भूलें बहुत हुईं, जिन से तन मन बरबाद हुआ ।
कर याद उन्हें हे परमेश्वर, मन आज बहुत ही पछताये ।।

भोगों से तृप्त न कोई हुआ, बतलाती ययाति की गाथा ।
है ज्ञात विषय विषधर काले, फिर क्यों भौतिकता ललचाये ।।

मैं मुख से राम की जय कहता, श्री कृष्ण के गुण हर दम गाता ।
पर रावण कंस के कर्म करूं, मुझ से मानवता शरमाये ।।

तन भी गन्दा, मन भी गन्दा, मैं मद में हाय हुआ अन्धा ।
यह घोर पतन की देख दशा, मन मेरा चैन नहीं पाये ।।

है शोक कि अब तक इस तन से, परमार्थ-साधना हो न सकी ।
जो बीता बीत गया आगे, मन श्रेय-मार्ग पै लग जाये ।

कब फूल खिलेंगे जीवन की, बगिया में देव बता देना ।
भक्ति की सुगन्धि से मेरे, मन में मस्ती सी छा जाये ।।

हे करुणाकर करुणा कर के, याचक की 'पाल' पुकार सुनो।
अध्यात्म-ज्ञान की भिक्षा दो, जो जीवन मेरा चमकाये ॥



गीत नं० १००

कमाल किया है

यौवन में संयम अपनाये, उस ने 'पाल' कमाल किया है।
देख प्रलोभन जो बच जाये, उसने 'पाल' कमाल किया है॥*

धन, वैभव का मद हैं गन्दा,
मानव को कर देता अन्धा।
पा प्रभुता जो न इतराये, उसने पाल' कमाल किया है॥*
यौवन में संयम अपनाये, उस ने 'पाल' कमाल किया है॥

सम्मुख मुग्धा उर्वशी नारी,
करती बातें मीठी प्यारी।
अर्जुन-तुल्य विकार न लाये, उसने 'पाल' कमाल किया है॥
यौवन में संयम अपनाये, उस ने 'पाल' कमाल किया है॥

राजमहल के सब आकर्षण,
चरणों पै है राज्य-सिंहासन।
राम समान न जो ललचाये, उसने 'पाल' कमाल किया है।
यौवन में संयम अपनाये, उस ने पाल कमाल किया है॥

---

*"विकार हेतौ सति विक्रियन्ते,
येषां न चेतांसि त एव धीराः" (कालिदास)
*"प्रभुता पाइ काहि मद नांही" (तुलसीदास)

खड्ग लिये जल्लाद खड़ा है।
जिद पै मुल्ला नीच अड़ा है।
जौ न हकीकत सम घबराये, उसने 'पाल' कमाल किया है।
यौवन में संयम अपनाये, उस ने 'पाल' कमाल किया है ।।
पत्थर खाकर भी मुसकाये,
जो आनन्द दया बरसाये।
विष-दाता के प्राण बचाये, उस ने 'पाल' कमाल किया है।
यौवन में सयम अपनाये, उस ने 'पाल' कमाल किया है ।।
वाणी नहीं, करनी से बोले।
दुख में नहीं जिस का मन डोले।
परम पवित्र चरित्र बनाये, उस ने 'पाल' कमाल किया है।
यौवन से संयम अपनाये, उस ने 'पाल' कमाल किया है ।।



गीत नं० १०१

नर न बनाना

विश्व-विधाता, हे परित्राता, जगत्पिता, माता, फलदाता !
आगामी जीवन में मुझ को, नर न बनाना नर न बनाना ।।
इस चोले में मानव बन कर—
मानवता को देख लिया है।
शैशव, यौवन, जरा सभी में—
कटुतम अनुभव प्राप्त किया है ।।
मानवता में श्रेष्ठपने की—
कोई बात मैंने न पाई।

न जाने कवियों ने इतनी,
नर तन की क्यों महिमा गाई ॥*

मानव बड़ा भयानक दानव, हाथ जोड़ यह विनय करूं मैं—
परमेश्वर जो चाहे बनाना, पर अब आगे नर न बनाना ॥
आगामी जीवन में मुझ को, नर न बनाना नर न बनाना ॥

मानव में बुद्धि-प्रयोग की
है विशेषता मानी जाती ।
पर, बुद्धि की कोई बात भी—
मुझे न नर में है दिख पाती ।
बुद्धि का ले नाम आज जो—
मानव है इतना इतराता ।
उसके दैत्यपने की गाथा—
हिरोशिमा का कण कण गाता ॥

एटम बम से मरे करोड़ों, अगर यही फल है बुद्धि का—
तो भगवन् ऐसी बुद्धि को कर करुणा तुम दूर भगाना ॥
आगामी जीवन में मुझको, नर न बनाना नर न बनाना ॥

*१. "सर्व प्राणिषु नरा: श्रेष्ठा:" (मनु)
२. 'न हि मनुष्याच्छ्रेष्टतरं हि किंचित्" (महाभारत)
३. "महती देवता ह्येषा नर रूपेण तिष्ठति" (यक्ष युधिष्ठिर संवाद)
४. "जन्तूनां नर जन्म दुर्लभम् ।"
५. "Man is the best creation of God."

मानव जाति की करनी की—
रोमांचक है क्रूर—कहानी ।
नहीं भूलता हमें आज तक—
सीता के नयनों का पानी ।।
नर-नृशसता, कामुकता के—
कारण जली पद्मनी रानी ।
दिल रोता है याद करें जब—
हत्याकांड वह पाकिस्तानी ।

मानव पै मानव ने जैसा अत्याचार किया है—ऐसा
नर से भिन्न किसी योनि में उदाहरण कोई बतलाना ।।
आगामी जीवन में मुझको, नर न बनाना नर न बनाना ।।

नर ने ही सुकरात सन्त को ।
विष करदे के था मरवाया ।
नर ने ही था दयानन्द को—
हाय, हलाहल घोर पिलाया ।।
नर नृशंस ने जोन आर्क को—[1]
जीवित अग्नि में जलवाया ।
मनुज क्रूरता के कारण ही—
अंग अंग बन्दा कटवाया[1] ।।

हृदय-विदारक इन काली करतूतों को करके भी, मगर है—
अभी नहीं मानव ने सीखा, अपनी भूलों पर शरमाना ।।
आगामी जीवन में मुझको, नर न बनाना नर न बनाना ।।

---

१. फ्रांस की John of Arc

मूख मिटाता एक पशु को—
मार सिंह, हिंसक कहलाता ।
लाखों मूक प्राणियों का—
घातक नर पर है श्रेष्ठ कहाता ।।
स्वाद की खातिर पशु पक्षी सब—
नर के कबरिस्तान पड़े हैं ।
सांपों से इतने न मरे नर—
जितने नर से सांप मरे हैं ।।

पशु पक्षी सब यही याचना, मूक गिरा में करें प्रभु से—
"बड़ा भयानक है नर प्राणी, त्राहि त्राहि भगवान् बचाना ।।"
आगामी जीवन में मुझको, नर न बनाना नर न बनाना ।।

कितने उलटे पुलटे रीति
और रिवाज चलाए नर ने ।
जिससे आकर तंग युवतियें—
चल देती हैं घर से मरने ।।
दूषित हुई व्यवस्था सारी,
रोतीं आज दिशायें चारों ।
कुछ अजीर्ण से मरें इधर, तो
उधर भूख से मरें हजारों ।।

धन लोभी, भोगों के भूखे सदा मचायें खून खराबा—
आततायी हत्यारे नर में आकर्षण क्या है बतलाना ।।
आगामी जीवन में मुझको, नर न बनाना नर न बनाना ।।

१. बन्दा वीर वैरागी

बुद्धि-हीन हम कहें जिन्हें, वह
पक्षी लें स्वच्छन्द उड़ाने ।
युद्ध नहीं, न कोई समस्या,
'पाल' सुनायें मधुर तराने ।।
दूर गगन में चील उड़े—
मस्ती से नभ में चक्र लगावे ।
मधुर ध्वनि से धरा वासियों—
को वह अपनी ओर बुलावे ।।

नभचर, जलचर, कीट, पतंगा, जो चाहो तुम वही बनाना ।
जगदीश्वर मैं करूँ याचना, मगर नीच नर नहीं बनाना ।।
आगामी जीवन में मुझको, नर न बनाना नर न बनाना ।



गीत नं० ८५

"नर न बनाना" का उत्तर

मलयगिरि की मूर्ख भीलनी, चन्दन-मूल्य न जाने जैसे—
नर-तन का तूं कुछ महत्त्व न अभी समझ पाया है अभागे ।।

दुरुपयोग का दोष, वस्तु का—
दोष समझ, तूं है भरमाया ।
भ्रान्त धारणा धार हृदय में
गूढ़ तत्त्व तूं समझ न पाया ।।
जो जो उदाहरण देकर तूं—
नर-योनि को बुरा बताये ।
पगले, दोष न नर-योनि के—
व्यर्थ ही तूं मन में पछताये ।।

नर-योनि अनमोल रत्न है, उच्च साधना का साधन है।
इसका आज तत्त्व बतलाऊं, जिससे तेरी शंका भागे ।।
नर तन का तूं कुछ महत्त्व न अभी समझ पाया है अभोग ।।

मानव को दानव तूं समझें,
यह अविवेक कहां से आया।
दानव की करनी से मानव—
रूप मान, तूं है भरमारा ।।
पशु-वृत्ति ही दानवता का
रूप धरे उत्पात मचाती ।
मानवता तो दिव्य भावना,
विश्व-प्रेम जो है सिखलाती ।।

नर तन तो इस हेतु मिला है, दानव भी मानव बन जाये।
भद्र गुणों का हो विकास जिससे दुर्गुण पातकता भागे ।।
नर तन का तूं कुछ महत्त्व न अभी समझ पाया है अभोगे ।।

रावण कंस तथा दुर्योधन—
नर मत मान, नराधम थे वे।
उनके पाप कुकर्म के कारण,
आदर से कोई नाम न लेवे ।।
नाम अमर सुकरात कर गया,
विष-दाता धिक्कारा जाता ।।
दयानन्द तो देव हो गया
पाचक नीच पुकारा जाता ।।

नर-योनि का दुरुपयोग कर पाप-पक में जो रत रहते—
ऐसे नर मर कर फिर निश्चय नर योनि पाते नहीं आगे ।।
नर तन का तूं कुछ महत्व न अभी समझ पाया है अभोगे ।।

नर थे हरिश्चन्द्र से दानी,
राम भरत लक्ष्मण से भ्राता।
कपिल, कणाद, जैमिनी, गौतम,
व्यास, वसिष्ठ, विदुर सम ज्ञाता॥
भीष्म पितामह, कृष्ण, युधिष्ठिर,
बुद्ध, कुमारिल, शंकर, नानक।
वीर प्रताप, शिवाजी, बंदा—
इन के प्रेरक पढ़ो कथानक॥

वीर सुभाष, भक्तसिंह, बिस्मिल, खुदीराम, चाफेकरबन्धु—
राष्ट्र-वेदि में जिन वीरों ने, अपने प्राण हंसते त्यागे॥
नर तन का तूं कुछ महत्व न अभी समझ पाया है अभोगे॥

नर-योनि में ही सम्भव है—
तत्व-चेतना, दिव्य साधना।
ब्रह्म-प्राप्ति की इसी योनि में
कर सकता है जीव कामना॥
सत्संगों में इसी योनि के
जीव बैठ ब्रह्म-चर्चा करते।
निश्रेयस् अभ्युदय उभय की
सिद्धि-साधना में रत रहते॥

कभी कथाओं, सभ्य सभाओं में पशु पक्षी भी क्या जाते?
भोग योनियें ये हैं प्यारे, सभी तुच्छ नर-योनि आगे॥
नर तन का तूं कुछ महत्व न अभी समझ पाया है अभोगे॥

पक्षी पर से उड़ते, लेकिन—
नर बिन पर के भी उड़ जाता।
बुद्धि-बल के चमत्कार से
चन्द्रलोक में ध्वज फहराता॥

पशु पक्षी में कृष्ण सुदामा—
सी न मित्रता कभी सुनी है।
त्याग दधीचि सा न मिला है,
दयानन्द सा नहीं गुणी है ।।

पूर्व पुण्य से नर तन पाया, क्यों नीचे फिर जाना चाहे ?
राज महल को त्याग, सोचता कुटिया-वास मिले, रे अभागे ।।
नर तन का तूं कुछ महत्व न अभी समझ पाया है अभोगे ।।

नर-योनि की परम साधना—
जीवन को यथार्थ बनाओ ।
त्याग भाव से भोग करो, तुम—[1]
निरासक्त हो स्वार्थ मिटाओ ।।
इतना जो तुम करो मनुष्यो,
यह भूतल फिर स्वर्ग बनेगा ।
सुख-सौरभ से सदा सुवासित,
अपना जीवन-कमल खिलेगा ।।

स्वार्थ मूल है उत्पातों का, युद्ध तथा अत्याचारों का—
शान्ति कभी उपलब्ध न होती, जब तक स्वार्थ नहीं नर त्यागे ।।
नर तन का तूं कुछ महत्व न अभी समझ पाया है अभोगे ।।

दिया विधाता ने नर चोला
यह तुम पर उपकार किया है ।

१. "तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृध : कस्य स्विद्धनम् ।।"
(यजुर्वेद अ० ४०-मंत्र १)

"स्वस्तिपंथामनुचरेम" का[1]
वेद दिव्य संदेश दिया है ॥
भद्र-भावना से भूषित हो[2]
आत्म-विकास-मार्ग अपना लो ।
"अहमिन्द्रो न पराजिग्ये" कह—
अपना जीवन सफल बना लो ॥

कर्म-योनि में कर्म करोगे, तभी 'पाल' भव-सिन्धु तरोगे ।[3]
जब तक न पुरुषार्थ करे नर, तब तक भाग्य कभी न जागे ॥
नर तन का तूं कुछ महत्व न अभी समझ पाया है अभोगे ॥



१. "स्वस्तिपथामनुचरेमसूर्याचन्द्रमसाविव"
(ऋग्वेद मं० ५, सूक्त ५१, मंत्र १५)
२ "आनो भद्रा : ऋतवो यन्तु विश्वत:"
"भद्रं कर्णेभिः श्रणुयाम देवा:" ।
"कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजिविषेच्छत ्ँ समा: ।"
(यजु० अ० ४०, मंत्र २)

गीत नं० १०३

गुण-गान गा रहा

मैं ओम् ओम् ओम् का गुण गान गा रहा ।
पावन प्रणव के ध्यान का वरदान पा रहा ।।
जो भूः भुवः स्वरोम् की मुख से ध्वनि उठी ।[1]
मानस से घोर पाप का दानव है जा रहा ।

परमेश के प्रकाश का भानु उदय हुआ ।
है आत्म-लोक दिव्यता से जगमगा रहा ।।
अन्तर्मुखी जो आज मेरी वृत्तियें हुईं ।
प्रज्ञा जगी, अध्यात्म का आनन्द आ रहा ।।

भगवद् भजन में मग्न हूं, जीवन सफल हुआ ।
अंन्तःकरण में आत्मा यूं गुन गुना रहा ।।
परमात्मा में आत्मा तन्मय हुआ, नशा—
भक्ति की भव्य भावना का आज छा रहा ।।

ध्यानस्थ हूं, सुसिद्धियें उपलब्ध हो रहीं ।
पावन प्रशस्त साधना का पथ लुभा रहा ।।
भगवान् की दया से हुआ भाग्यवान् मैं—
आत्मोन्नति की ओर हूं जो "पाल" जा रहा ।।

१. "आपो ज्योतिरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् स्वाहा ।।"

गीत नं० १०४

नमामि नमामि

नमस्ते नमस्ते निराकार स्वामी ।
वरुण मातरिश्वा नमामि नमामि ।।

१. विश्वेश, व्यापक, विभु, वन्दनीय,
अभय, अखिल-आधार, अभिवन्दनीय ।
दयामय, दुरित-दल-दमन, दर्शनीय,
परमब्रह्म, पावन, प्रभु, पूजनीय ।।
महादेव, विष्णु, अमर, वहुल, नामी ।
वरुण मातरिश्वा नमामि नमामि ।।

२. सदा एक रस, सच्चिदानन्द, दाता,
परममित्र, भ्राता, पिता और माता ।
नियामक, निराकार, निखिलेश, त्राता,
विकट संकटों से बचाओ विधाता ।।
महा मांगलिक, ओममर,* सर्वगामी ।
वरुण मातरिश्वा नमामि नमामि ।।

३. स्वमस्तक झुकायें, करें ध्यान तेरा,
प्रकाशित करो मन, महाराज, मेरा ।
निराशा-निशा का मिटादो अंधेरा,
विकासोन्मुखी वृत्ति का हो सवेरा ।।
परमकारुणिक, ब्रह्म, स्वामी, अकामी ।
वरुण मातरिश्वा नमामि नमामि ।।

---

*ओममर=ओम्+अमर

गीत नं. १०५

विराट्-पूजा

अव्यक्त ओम् विराट् की पूजा हृदय में कीजिये ।
ध्यानस्थ हो परब्रह्म के आनन्द का रस लीजिये ॥
परमात्मा में आत्मा को लीन कर, निर्लेप हो ।
ब्रह्मानुभूति का सुशीतल दिव्य अमृत पीजिये ॥
तुम "स्वस्तिपंथामनुचरेम" के भाव का चिन्तन करो ।
रवि चन्द्र इस पथ के पथिक, अनुकरण इन का कीजिये ॥*
"स नः पिता इव सूनवे" फिर भय मुझे क्या विश्व में ।
पितुरंक में निर्भीक हो बैठा हूं, अनुभव कीजिये ॥
मैं शुद्ध मन लेकर विभो आया हूं तेरे द्वार पर ।
कर बद्ध हो अनुनय करूं, भगवान् दर्शन दीजिये ॥
हे ईशभक्तो, भोग— भुक्तों का कुजीवन हेय है ।
जीना सफल उस जीव का निष्पाप होकर जो जिये ॥
पशु-वृत्तियें ही पास हैं, जानें न दें प्रभु पास हैं ।
इन को दमन है साधना, जीवन समुन्नत कीजिये ॥
अन्त करण में ब्रह्म की सत्प्रेरणा का स्त्रोत है ।
स्थितप्रज्ञ हो, उस स्त्रोत से संदेश सात्विक कीजिये ॥
सर्वज्ञ के सम्पर्क से अल्पज्ञ बहुज्ञाता बने ।
सदभ्यास से हे "पाल" अपनी ज्ञान-वृद्धि कीजिये ॥

---

*"स्वस्ति पंथामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।" (ऋ० ५-५१-१५)
*"स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव ।" (ऋ० १-१-९)
*सर्वज्ञ=परमात्मा । अल्पज्ञ=जीवात्मा ।

गीत नं० १०६

अध्यात्म-सुगन्धि

अध्यात्म-गुणों की सुगन्धि से, हे नाथ सुवासित कर दीजे ।
विषयों की दूषित दुर्गन्धि, पवमान पिता सब हर लीजे ॥

मानव का मूल्य मनन में है, पशु-वृत्ति के ही दमन में है ।
बन्धन मुक्ति सब मन में है, मन शिव सकल्प से भर दीजे ॥

हृत्तन्त्री के सब तार हिलें, मन-मन्दिर में भगवान् मिलें ।
शुभ दिव्य गुणों के फूल खिलें, वरदाता ऐसा वर दीजे ॥

उच्छृंखल काम विनाशक है, अति घोर भयानक पातक है ।
तन का मन का यह घातक है, इस से हे देव छुड़ा दीजे ॥

जीवन-निर्माण अभीष्ट मुझे, दैवी सम्पत्ति इष्ट मुझे ।
करना है स्वजीवन श्रेष्ठ मुझे, करुणासिंधो करुणा कीजे ॥

मैं भद्रभाव-भरपूर रहूं, पर—सेवा में मशहूर रहूं ।
दुर्गुण दोषों से दूर रहूं, जीवन निष्पाप बना दीजे ॥

मेधा-वरदान दिलाओ प्रभु, मन में दर्शन दिखलाओ प्रभु ।
अघ-आकर्षण से बचाओ प्रभु, मुझ को भगवान् अपना लीजे ॥

मैं राम समान सुवीर बनूं, केशव अर्जुन सा धीर बनूं ।
मानवता की तसवीर* बनूं, प्रभु-भक्तों में आदर दीजे ।

*तसबीर = चित्र

गीत नं० १०७

जीवन ऊंचा नहीं बनाया

मुझ सा है हत भाग्य न कोई, नर-तनका न लाभ उठाया ।
पशु-योनि के खेल खेलकर, जीवन ऊंचा नहीं बनाया ॥

एक आत्मा नर चोले का—
ले वरदान जगत् में आई ।
इस चोले में परम साधना—
की सामग्री सभी समाई ॥
शैशव बीत गया खेलों में—
तो यौवन ने ली अंगड़ाई ।
इस वसुन्धरा के कण कण में—
विश्व-विभूति दी दिखलाई ।

किंकर्त्तव्यविमूढ़ हुआ मैं, भोग-मार्ग का बना मुसाफिर—
माया को अपनाया लेकिन मैंने मायापति भुलाया ॥
पशु-योनि के खेल खेल कर जीवन ऊंचा नहीं बनाया ॥

भोजन निद्रा भय मैथुन में—
पशु तथा नर एक बराबर ।*
इन चारों में मस्त व्यस्त मैं —
रहा ग्रस्त भोगों में सरासर ॥*
नर-जीवन की, थी विशेषता
धर्म—साधना, मगर मूढ़ मैं ।

---

*"आहार निद्रा भय मैथुनंच, सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम् ।
धर्मो हि एकोऽधिको विशेषो, धर्मेण हीनः पशुभिः समानः ॥"

*सरासर=पूरी तरह

निज कुसंस्कारों के कारण—
धर्म कर्म से रहा दूर मैं ॥
प्रेयमार्ग का मोहक सुपना मुझे लुभाता रहा सदा ही—
माया—मुग्ध रहा मन मेरा, नहीं श्रेय-पथ को अपनाया ॥
पशु-योनि के खेल खेल कर जीवन ऊंचा नहीं बनाया ॥
यमाचार्य के पास कभी था
एक अलौकिक बालक आया ।
कर प्रणाम उसने विनम्र हो—
निज नचिकेता नाम बताया ॥
"आत्मज्ञान दो गुरुवर" उसने-
ऐसी जिज्ञासा जतलाई ।
यमाचार्य ने कहा, "वत्स, इस-
आयु में क्या सनक समाई ॥
मांगो भोग सभी मैं दूंगा," मगर नहीं नचिकेता माना ।
धन्य धन्य वह भारत-बालक जिस ने भोगों को ठुकराया ॥
पशु-योनि के खेल खेल कर जीवन ऊंचा नहीं बनाया ॥
याज्ञवल्क्य धन-धाम त्याग जब
हुए समुद्यत बन जाने को ।
उभय पत्नियों से वह बोले—
अर्ध अर्ध सम्पत्ति बांट लो ॥
सुन मैत्रेयी बोली "पतिवर,
क्या इस से मैं अमर बनूंगी ?"
"फिर मैं यह लेकर क्या करूंगी ?
आत्म-साधना के जिस पथ पर आप चले हैं, मैं भी चलूंगी ॥"
धन्य धन्य देवी जिस को था, आत्म-रहस्य समझ में आया ॥
पशु-योनि के खेल खेल कर जीवन ऊंचा नहीं बनाया ॥

ध्रुव की भी थी एक आत्मा,
जिस ने ध्रुव-पथ था अपनाया ।
घोर घने जंगल में जाकर —
समाधिस्थ हो ध्यान लगाया ॥
श्वेताश्वेतर पिप्पलाद ने —*
ब्रह्म-समस्या को सुलझाया ।
तपोबनों में तपोधनों ने —
गूढ़ तत्व का दर्शन पाया ॥

पढ़ी सुनीं यह सब गाथायें, शोक आचरण-शून्य रहा मैं ।
नहीं किया अनुकरण किसी का, नहीं साधना का सुख पाया ॥
पशु-योनि के खेल खेल कर जीवन ऊंचा नहीं बनाया ॥

देव-दया से कैसी सुन्दर—
काया का वरदान मिला है ।
स्वस्थ अंग, ओजस्वी मन के—
साथ बुद्धि का ज्ञान मिला है ॥
आकर्षक व्यक्तित्व मिला, धन-
वैभव भी पर्याप्त मिला है ।
घर गृहस्थ सन्तोष जनक है,
सार्वजनिक यश मान मिला है ॥

श्रेय-साधना बिना "पाल" पर, इन विभूतियों से तो मैंने—
विधवा का श्रृंगार बनाया, जीवन-धन अनमोल लुटाया ॥
पशु-योनि के खेल खेल कर जीवन ऊंचा नहीं बनाया ॥

*श्वेताश्वेतर=श्वताश्वेतरोपनिषद् के रचयिता ऋषि
*पिप्पलाद=प्रश्नोपनिषद् के भगवान् पिप्पलाद जिन के पास छः ब्रह्मनिष्ठ अपने प्रश्नों के समाधान के लिए गये थे ।

गीत नं० १०८

भक्ति का दान दीजिये

भगवन् विनय है आप से, भक्ति का दान दीजिये।
सच्चिदानन्द हे पिता, अपनी शरण में लीजिये ॥

डरता रहूं मैं पाप से, मुक्त रहूं संताप से ।
ऐसी कृपा स्वभक्त पर, करुणानिधान कीजिये ॥

मेरी यही है कामना, नष्ट हो दुष्ट भावना ।
दीजिये दण्ड देवता, मैंने कुकर्म जो किये ॥

बुरा भला हूं जो भी हूं, तेरा हूं मेरा तूं ही तूं ।
अपनी दया की पात्रता, हे जगदीश दीजिये ॥

देखा समाधि—मग्न हो, देव के दिव्य दान को।
झोली पसार कर लिये, ईश्वर ने दान जो दिये ॥

जीवन में आए दिव्यता, श्रेष्ठता, विशेषता ।
धन्य मनुज है "पाल" जो, पर उपकार में जिये ॥



गीत नं० १०९

दूर भाग जा

हे पाप, मेरे पास न आ, दूर भाग जा।*
हे मन-विकार, दुर्विचार दूर भाग जा॥
मैं सात्विकी सुसाधना में आज व्यस्त हूं।
हे तामसिक कुभावना, तूं दूर भाग जा॥

पावन विशुद्ध ब्रह्म का मन्दिर है मन मेरा।
अशुद्धते, मलीनते, तूं दूर भाग जा॥
जीवन बनाया यज्ञमय, परहित ही इष्ट है।
हे स्वार्थवृत्ति-पापिनी, तूं दूर भाग जा॥

मैं भद्र श्रेय-मार्ग का साधक व पथिक हूं।
हे दुर्गुणों की वासना, तूं दूर भाग जा॥
ऊंची उड़ान ले मुझे छूना द्युलोक है।
संसार-मोहजाल, तूं अब दूर भाग जा॥

मेरे आदर्श राम से मानव महान् हैं।
हे रावणी कुप्रेरणा, तूं दूर भाग जा॥
संकल्प "पाल" है मेरा, बन जाऊं देवता।
हे राक्षसी कुलालसा, तूं दूर भाग जा॥

*"परोपेहि मनस्पाप" (वेद का वचन)

गीत नं० ११०

आज चिन्तन कीजिये

प्रभु-भजन की शुभ साधना का आज चिन्तन कीजिए।
ध्यानस्थ होने की विधि का तत्त्व सब सुन लीजिए।।

जगदीश-दर्शन की तड़प व तीव्र जिज्ञासा जगा।
परमात्मा की प्राप्ति का अधिकार मन को दीजिये।।

पवमान वह भगवान् है, अप्राप्य पापी को सदा।
वातावरण की शुद्धता पर ध्यान साधक दीजिये।।

फिर शुद्ध सात्विक स्थान पर आसन लगाओ प्रेम से।
मन को बनाकर निर्विषय एकाग्र वृत्ति कीजिये।।

अन्तर्मुखी हो जाओ फिर बाहर की दुनिया भूलकर।
सुध बुध न तन मन की रहे, अभ्यास ऐसा कीजिये।।

फिर ओम् व गायत्री का जप मौन वृत्ति से करो।
हो मुग्ध, ब्रह्म-उपासना का आप अमृत पीजिये।।

परमात्मा की प्रीति का माध्यम है अपना आत्मा।
परमात्म-दर्शन से प्रथम, प्रिय, आत्म-दर्शन कीजिये।।

ध्यानस्थमुद्रा में अलौकिक ज्योति का दर्शन मिले।
अनुभूति दिव्यालोक की, आनन्द इसका लीजिये।।

आगे स्थिति वचनीयता के क्षेत्र में आती नहीं।
संयमित जीवन बना, अभ्यास पूरा कीजिये।।

इतनी यदि तुम साधना की पुष्ट दृढ़ भूमि करो।
आगे स्वयं पथ सुगम होगा, "पाल" निश्चय कीजिये।।

गीत नं० १११
"तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु"

चंचल मन है विलक्षण वस्तु।
तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ॥

मन ने बनाये थे रावण अरस्तु।*
तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ॥

मन ही है बन्धन व मुक्ति का हेतु।
तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ॥

शिवमस्तु शुभमस्तु कल्याणमस्तु।
तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ॥



*Aristotle, यूनान का प्रसिद्ध दार्शनिक

गीत नं० ११२

ईश्वर महिमा अपरम्पार

ईश्वर महिमा अपरम्पार, पा न सका कोई भी पार।
जो चाहो अपना उद्धार, परमेश्वर से कर लो प्यार॥

ऋषि महर्षि, मुनि मनस्वी,
योगी, साधु, सन्त, तपस्वी।
सब का निश्चित यही विचार, परमेश्वर से कर लो प्यार।
ईश्वर महिमा अपरम्पार, पा न सका कोई भी पार॥

परमेश्वर है जगत्-विधाता,
अजर, अमर, व्यापक, फलदाता।
विश्व उसी का है विस्तार, परमेश्वर से कर लो प्यार।
ईश्वर महिमा अपरम्पार, पा न सका कोई भी पार॥

पाप-कालिमा प्रभु हर लीजे,
शुद्ध ! शुद्धता का वर दीजे।
हम आये तेरे दरबार, परमेश्वर से कर लो प्यार।
ईश्वर महिमा अपरम्पार, पा न सका कोई भी पार॥

भद्र भावना—सूर्य उदय हो,
दुरित—दोष—दुर्गुण का क्षय हो।
हे जगदीश्वर जगदाधार, परमेश्वर से कर लो प्यार।
ईश्वर महिमा अपरम्पार, पा न सका कोई भी पार॥

मानवता रो रो के पुकारे,
मानव मानव को संहारे।
बढ़ा भयंकर अत्याचार, परमेश्वर से कर लो प्यार।
ईश्वर महिमा अपरम्पार, पा न सका कोई भी पार॥

मानवता का दान दिलादो,
भक्ति-सुधा-रस "पाल" पिलादो।
देव, करो विनती स्वीकार, परमेश्वर से कर लो प्यार।
ईश्वर महिमा अपरम्पार, पा न सका कोई भी पार॥



गीत नं० ११३

कब मेरा उद्धार करोगे ?

परम पिता परमेश्वर से मैं करूं याचना नम्र भाव से—
परम कारुणिक देव बताओ, कब मेरा उद्धार करोगे??
मानव-योनि में आकर भी
नहीं अभी मानव बन पाया।
शुभाराधना, कोई साधना
नहीं अभी तक मैं कर पाया॥
मन मलीन है, बुद्धि क्षीण है,
हीन-भावना से जकड़ा है।
अन्तःकरण अभी है कलुषित,
पाप-पिशाचों ने पकड़ा है॥
अपना जीवन-कानन मैंने, है हतभाग्य शुष्क कर डाला।
दया सिन्धु, इस कानन में कब दया-वारि संचार करोगे??
परम कारुणिक देव बताओ, कब मेरा उद्धार करोगे??
राग-द्वेष की, वैर-भाव की
मन में ज्वाला जलती रहती।
कलुषित काम-कामनाओं की
मन में दूषित सरिता बहती॥

स्वार्थ वृत्तियों और एषणाओं--
ने हीनाचरण किया है ।
हाय हृदय पर दुष्ट दुर्गुणों—
दुरितों ने आक्रमण किया है ।।

आएगा वह शुभ दिन कब जब मैं भी बन्धन-मुक्त बनूंगा ।
अशरण-शरण, पुकारूं तुम को, कब मुझ पर उपकार करोगे ?
परम कारुणिक देव बताओ, कब मेरा उद्धार करोगे ?

हीन भावना ने वसुधा की
दीन दशा कैसी कर डाली ।
मानवता-तरु कुम्हलाया है,
नष्ट हुई सारी हरियाली ।।
बाल वृद्ध वनिता सब रोते,
रोते पशु पक्षी सब प्राणी ।
ममता प्यार दया सब डूबी,
हुई भयानक नैतिक हानि ।।

इस बिगड़ी दुनिया का कब फिर भाग्य उदय होगा जगदीश्वर ?
मानव-मानव में कब भगवन् सात्विकता-संचार करोगे ?
परम कारुणिक देव बताओ, कब मेरा उद्धार करोगे ?

सब कुवासनायें मिट जायें,
मन निर्मल हे नाथ बना दो ।
भद्र मिला दो, दुरित मिटा दो,
स्वस्ति-पंथ-दर्शन दिखला दो ।।
जीवनान्त से पहले कुछ तो—
मुझे साधना-सिद्धि दिला दो ।
हे जीवन-धन, मेरा जीवन—
शुद्ध, सार्थक, सफल बना दो ।।

मुझे श्रेय-पथ पै ले जाना, यही याचना यही प्रार्थना—
"पाल" उपस्थित तेरे द्वारे, कब करुणा कर्त्तार करोगे ?
परम कारुणिक देव बताओं, कब मेरा उद्धार करोगे ?



गीत नं० ११४

ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना के ८ मंत्रों का पद्यानुवाद

१.

दिव्य गुणाकर देव हमारे, हे प्रेरक, परमेश पिता ।
हे प्रकाश के पुंज, तिमिरहर, हे परमेश्वर, हे सविता ।।
सकल दुर्गुणों, दुर्व्यसनों, पापों को हम से दूर करो ।
तथा भद्रगुण शुभ कर्मों से, नाथ, हमें भरपूर करो ।।

२.

ज्योतिपुंज, आलोक—स्त्रोत, हिरण्यगर्भ कहलाते हैं ।
सृष्टि पूर्व भी विद्यमान् थे, सारा विश्व रचाते हैं ।।
एकमेव पति, अखिल धरा द्यु के धारक कहलाते हैं ।
सुखस्वरूप देवाधिदेव के श्रद्धा से गुण गाते हैं ।।

३.

आत्म-ज्ञान के दाता हैं, जो बल—संचार कराते हैं ।
विश्वपति, जिन की आज्ञा में मस्तक देव नवाते हैं ।।
जिन की छाया अमृत, जिन के वश में मृत्यु बताते हैं ।
सुखस्वरूप देवाधिदेव के श्रद्धा से गुण गाते हैं ।।

४.

जो महान् निज महिमा से ही सब संसार रचाते हैं।
प्राणधारियों तथा अचेतन के राजा कहलाते है।।
दोपायों व चौपायों पर जिन का शासन पाते हैं।
सुखस्वरूप देवाधिदेव के श्रद्धा से गुण गाते हैं।।

५.

द्यौलोक व उग्र धरा का जो धारक कहलाते हैं।
सांसारिक सुख तथा मोक्ष का शासक जिसे बताते हैं।।
अन्तरिक्ष में लोक लोकान्तर का निर्माण रचाते हैं।
सुखस्वरूप देवाधि के श्रद्धा से गुण गाते हैं।।

६.

प्रजापते, इस विश्व भूत में तेरी व्यक्त महत्ता है।
तुझ से भिन्न अन्य न इस में व्यापक कोई सत्ता है।।
जब जब तुझे पुकारें प्यारे, पूर्ण—कामना कर देना।
हम सब ऐश्वर्यों के स्वामी बनें यही शुभ वर देना।।

७.

वह परमेश्वर बन्धु हमारा, जनिता तथा विधाता है।
वह समस्त भुवनों लोकों का धामों का परित्राता है।।
उसी ब्रह्म में सभी देव अमृत-उपलब्धि करते हैं।
तथा विलक्षण परम धाम में स्वेच्छा सहित विचरते हैं।।

८.

हे पथ—दर्शक, नायक अग्ने, हमें सुपथ का दर्शन दो।
लौकिकात्मिक ऐश्वर्य की उपलब्धि का साधन दो।।
आप सभी कर्मों के ज्ञाता, हम जो अहर्निश करते हैं।
कुटिल पाप से हमें बचाना, नाथ नमस्ते करते हैं।।



गीत नं० ११५

वरदा वर दो

वरदा वर दो, बलदा बल दो, तन से मन से बलवान् बनें।
करुणासिन्धो, करुणा कर के—दुर्गुण हर लो, गुणवान् बनें॥

तुम को हम व्यापक कहते हैं, पर पापों से न डरते हैं।
हे देव तुम्हारी सत्ता पै, हम मन से निष्ठावान् बनें॥

तुम पिता तुम्हारे पुत्र हैं हम, पर तुम पावन हम नीच अधम।
धारण कर तेरे गुण भगवन्, तेरी सच्ची सन्तान बनें॥

दें छोड़ कुतर्क की बातों को सब उच्छृंखल उत्पातों को।
हम धर्म कर्म का मर्म समझ, सब सच्चे श्रद्धावान् बनें॥

सब दुरितों का हम त्याग करें, मानस में हम सद्भाव भरें।
शुभ भद्र गुणों की सम्पत्ति से हम सम्पत्तिवान् बनें॥

कहे "पाल" ज्ञान की भिक्षा दो, हे नाथ सुपावन शिक्षा दो।
विद्या-धन से धनवान् बनें, भगवान् सभी विद्वान् बनें॥

---

*इस गीत में भगवान् को "वरदा" माता और "बलदा" के वैदिक सम्बोधनों से स्मरण किया गया है। वेद में आया है :—
"य आत्मदा बलदा०" तथा "स्तुता मया वरदा०।"

गीत नं० ११६

ज्योति जगमगायेगी

प्रभु का भजन कर प्यारे, बुराई छूट जाएगी ।
हृदय में साधना को साध, ज्योति जगमगायेगी ।।

न पूंजी पुण्य कर्मों की स्वजीवन में इकट्ठी की ।
तो अन्तिम काल पश्चात्ताप की ज्वाला जलायेगी ।।

मिलेगा मार्ग मुक्ति का, मिटेगा मोह मुक्ति का ।
अगर भक्ति भरी वाणी प्रभु का गीत गायेगी ।।

कुचिन्तन से हटा मन को, सुकर्मों में लगा तन को ।
विचारों की सुपावनता, तुझे ऊंचा उठायेगी ।।

अगर एकाग्र मन अध्यात्म का अभ्यस्त हो जाये ।
तो अन्तःकरण की गंगा विमल धारा बहायेगी ।।

अगर पतवार-श्रद्धा का सहारा छोड़ बैठोगे ।
तो भव-सागर में पगले "पाल" नैया डगमगायेगी ।।



गीत नं० ११७

उस प्रभु को कभी न भुलाना

आयें संकट घने, चाहे शत्रु बने, सब जमाना।
उस प्रभु को कभी न भुलाना ॥

वह है अपना तो संसार अपना,
वह विरोधी तो कोई न अपना।

बिना दया-दृष्टि के, इस सकल सृष्टि, में न ठिकाना।
उस प्रभु को कभी न भुलाना ॥

लाख बातों की इक बात है ये,
पुण्य-कर्मों की पूंजी कमा ले।

भावना यज्ञ मय, शुद्ध पावन हृदय, को बनाना।
उस प्रभु को कभी न भुलाना ॥

उस को भूले सभी कष्ट आवें,
काम क्रोधादि शत्रु सतावें।

बन के धर्मात्मा, चित्त परमात्मा, में लगाना।
उस प्रभु को कभी न भुलाना ॥

चाहो आये न दुख रोग कोई,
है जगानी जो तकदीर सोई।

"पाल" तो भक्ति से, उस परम शक्ति के, गीत गाना।
उस प्रभु को कभी न भुलाना ॥



गीत नं० ११८

तूं शरणागत परित्राता है

आए हम शरण तुम्हारी प्रभो, तूं शरणागत परित्राता है।
हम हैं सन्तान तुम्हारी विभो, तूं जगत् पिता और माता है ।।

जब ध्यान लगाते हैं तेरा, मिट जाता मन का अन्धेरा।
तूं अन्तः करण में भक्तों के आनन्द—सुधा बरसाता है ।।

यह अद्‌भुत जगत् बनाया है, तारों से गगन सजाया है।
जग का कर्त्ता धर्त्ता हर्त्ता, फल—दाता, विश्व—विधाता है ।।

रवि चन्द्र उडु आकाश मही, तव महिमा इनमें व्याप रही ।।
तूं विश्व—प्रलयकर्त्ता, खुद ही नव सृष्टि पुनः उपजाता है ।।

पुष्पों को सुगन्धि दी तूने, जलवायु सुशीतल की तूने।
तव उपकारों का अन्त नहीं, तूं सब का जीवन दाता है ।।

हे करुणाकर, तूं करुणा कर, भगवान् हमारे दुर्गुण हर।
श्रद्धा भक्ति से "पाल" सदा, चरणों में सीस झुकाता है ।।



गीत नं० ११६

ओम् नमामि

ओम् नमामि, अन्तर्यामी, मैं सेवक तुम स्वामी ।। ओम् नमामि
विविध गुणों के कारण जिस की सत्ता है बहुनामी ।। ओम् नमामि

ओम् अजन्मा जगन्नियन्ता, परमेश्वर फल दाता है ।
सर्वव्यापक ज्ञानप्रकाशक, जगत्पिता और माता है ।।

उसका रूप वही समझे जो वेद-मार्ग अनुगामी ।। ओम् नमामि
ओम् नमामि, अन्तर्यामी, मैं सेवक तुम स्वामी ।। आम् नमामि

धन्य धन्य है वह नर नारी, जिस ने प्रभु गुण गाया है ।
जिसने अपने दोष-निवारण का संकल्प बनाया है ।।

वह है शरणागत-परित्राता, मैं पापी खल कामी ।। ओम् नमामि
ओम् नमामि, अन्तर्यामी, मैं सेवक तुम स्वामीं ।। ओम् नमामि

निराकार अविकार प्रभु, परब्रह्म उपास्य हमारा है ।
अजर अमर उस महादेव ने, रचा विश्व यह सारा है ।।

"पाल" प्रभु को पाये केवल साधक प्राणायामी ।। ओम् नमामि
ओम् नमामि, अन्तर्यामी, मैं सेवक तुम स्वामी ।। ओम् नमामि



गीत न० १२०

उपलब्ध महा आनंद उसे

परब्रह्म प्रभु परमेश्वर का, ऐ "पाल" सदा जो जाप करे।
उपलब्ध महा आनन्द उसे, न कुकर्म करे न पाप करे॥

प्रभु-भक्त बुरा न कहे न सुने, हर बात बुरी से दूर रहें।
हो जाए अगर जो पाप कभी, तो मन में पश्चात्ताप करे॥

पर-दोषों से न काम उसे, अपनी त्रुटियों का ध्यान उसे।
अपने दोषों को दूर हटा, वह उन्नत अपना आप करे॥

साधक जग में रहता ऐसे, पानी में कमल रहे जैसे।
तन दुनिया के सब काम करे, मन ईश्वर का आलाप करे॥

मन का समभाव बने ऐसा, न किसी से राग न द्वेष उसे।
सुख भोगों में न हर्ष उसे, दुख संकट में न विलाप करे॥

जब ध्यान समाधि की सिद्धि, साधक जीवन में पा जाये।
मन-मन्दिर के पट खुल जाते, ईश्वर से जीव मिलाप करे॥



गीत नं० १२१

भक्त-सुधा पिया करो

पावन प्रभात काल में, ईश्वर भजन किया करो।
श्रद्धा भरी ले भावना, भक्ति-सुधा पिया करो॥

बचना अगर है पाप से, तीनों तरह के ताप से।
अन्तर्मुखी हो ओम् का चिन्तन सदा किया करो॥

यज्ञमयी सुभावना बने, यही है साधना।
जो कुछ बने सुकर्म में, तन मन व धन दिया करो॥

पीड़ पराई देख कर जो न पसीजे नीच है।
दीन दुखी का दुःख घटे, ऐसी कोई क्रिया करो॥

कैसा कठोर काल हो, डरो नहीं संघर्ष से।
जीवन की जटिलताओं में, हंसते हुए जिया करो॥

वैर विरोध व्यर्थ है, हृदय की हीन भावना।
फटे दिलों के वस्त्र को, स्नेह सहित सिया करो॥

भौतिक भोग हेय हैं, ध्येय प्रभु का ध्यान है।
"पाल" पवित्र भाव से, आत्म-प्रक्रिया करो॥



भजन नं० १२२

भगवदिच्छा बड़ी बलवती है

भगवदिच्छा बड़ी बलवती है,
भगवदिच्छा बड़ी बलवती है।

जीव की शक्ति तो तुच्छ सी है, वश न इस का चले कुच्छ भी है।
देख जग के नियन्ता की रचना, चकित होती मनुज की मति है॥
भगवदिच्छा बड़ी बलवती है० ॥

कोटि कोटि रविचन्द्र तारे, ब्रह्म के ये खिलौने हैं सारे।
पार उस का नहीं पा सका है, कोई योगी मुनि व यति है॥
भगवदिच्छा बड़ी बलवती है० ॥

ब्रह्म है सिन्धु तो जीव बिन्दु, ब्रह्म भानु तो है जीव इन्दु।
वह पिता पूज्य परमात्मा है, आत्मा ईश की संतति है॥
भगवदिच्छा बड़ी बलवती है० ॥

क्षणिक यौवन है अभिमान तज दे, जीव भगवान् का नाम भज ले।
धन्य जीवन सफल जन्म उसका, जो प्रभु-भक्त सेवा व्रती है॥
भगवदिच्छा बड़ी बलवती है॥

जीव का धर्म पुरुषार्थ करना, जो मिले उस पै संतोष धरना।
जो प्रभु चाहे होता वही है, देव-इच्छा में सब की गति है॥
भगवदिच्छा बड़ी बलवती है० ॥

सच्चिदानन्द जगदीश दाता, मेरा बन्धु पिता और माता।
"पाल" उस को करूं मैं नमस्ते, देव की सृष्टि अद्भुत अति है॥
भगवदिच्छा बड़ी बलवती है० ॥



मेरे मन ने पुकारा है

मेरे मन ने पुकारा है, पिता दो पता हो कहां।
हम को तेरा सहारा है, पिता दो पता हो कहाँ।।
वातावरण शान्त, एकान्त वन है,
नदी का किनारा, सुशीतल पवन है।
बह रही सलिल-धारा है, पिता दो पता हो कहां।
मेरे मन ने पुकारा है, पिता दो पता हो कहां।।
विभु, विश्व-व्यापक कहां हो कहां हो !
निर्यात के नियामक कहां हो कहां हो।।
पूछता मन हमारा है, पिता दो पता हो कहां।
मेरे मन ने पुकारा है, पिता दो पता हो कहां।।
तरु मूक वाणी में कुछ कह रहे हैं।
मन में विचारों के नद बह रहे हैं।।
है कहां ईश प्यारा है, पिता दो पता हो कहां।
मेरे मन ने पुकारा है. पिता दो पता हो कहां।।
जगत् दीखता पर न दीखे रचयिता।
अजब तेरी रचना जिसे देख सविता।।
चकित यह विश्व सारा है, पिता दो पता हो कहां।
मेरे मन ने पुकारा है पिता दो पता हो कहां।।
अन्तःकरण कह रहा आज तेरा,
अहोभाग्य है आत्मा आज मेरा।
मेल होगा तुम्हारा है, पिता दो पता हो कहां।
मेरे मन ने पुकारा है, पिता दो पता हो कहाँ।।
उठी दिव्य सत्प्रेरणा आज मन में।
परम ब्रह्म के ध्यान, चिन्तन मनन में।।
"पाल" जीवन सुधारा है, पिता दो पता हो कहां।
मेरे मन ने पुकारा है, पिता दो पता हो कहां।।

गीत नं० १२४

तिष्ठासु मघवन्*

हे मघवन् ऐश्वर्य प्रदाता।
हे भगवन् परमेश विधाता।।
पास रहो प्रभु दूर न जाओ, इस में मन मेरा सुख पाता।।
कातर पुत्र ने दामन पकड़ा, कुपित पिता आंचल छुड़वाता।
पापी समझ मुझे रूठ गये हैं, पुत्र, पिता, तेरा पछताता।।

पुत्र कुपुत्र तो हो जाए, पर पिता—सदैव दया दिखलाता।
इन्द्र, पिता दो सोम-सुधा को, भक्ति-नशा जिससे चढ़ जाता।

तव भक्ति की भिक्षा पावे देव तुझे मैं सीस नवाता।
'पाल' परम आनन्द मगन हो, परमेश्वर का ध्यान लगाता।।



* तिष्ठासु कं—मघवन्मापरागाः,
सोमस्य नु त्वा सुषुतस्य यक्षि।
पितुर्न पुत्रः सिचमारभेत,
इन्द्र स्वादिष्ठया गिराशचीवः।। (ऋग्वेद ३-५३-२)

गीत १२५

सच्चरित्रता

पावनपिता से माँगता हूं मैं पवित्रता।
सच्चे पिता से माँगता हूं सच्चरित्रता ।।

भक्ति भुला के भुक्ति के पीछे क्यों भागता ?
हीरा तजा कंकर लिया कैसी विचित्रता ।।

तेरा उपास्य देव तो दाता महान् है।
हे भक्त तूं भी छोड़ दे मन की दरिद्रता ।।

रुठे सभी संसार तो परवाह "पाल" क्या ?
सब कुछ मिलेगा मिल गई उसकी जो मित्रता ।।



गीत नं० १२६

दया हो, दया हो, दया हो, दयालो !

दयामय, दया दीन-जन पै सदा हो।
प्रभो, शुद्ध बुद्धि हमारी सदा हो ।।
रहें दूर हम दुर्गुणों से कृपालो !
दया हो, दया हो, दया हो, दयालो !!

विपज्जाल के मेघ छाये हुए हैं।
इह, संसार से हम सताये हुए हैं ।।
पिता, पतितपावन, हमें अब संभालो !
दया हो, दया हो, दया हो, दयालो !!

कपट, क्रोध, मद, मोह में ग्रस्त हैं हम।
विकट संकटों से प्रभो त्रस्त हैं हम ।।
समस्या विकट है पिता जी बचाओ।
दया हो, दया हो, दया हो, दयालो ।।

सरल, शान्त, निर्मल हृदय हों हमारे।
रहें प्रेम सम्मान से "पाल" सारे ।।
उपासक तथा भक्त अपना बनालो।
दया हो, दया हो, दया हो, दयालो ।।



गीत नं० १२७

चेतन, चेत

चेतन, चेत प्रभु—चिन्तन में।

श्रद्धा पूरित हो, कर धारण सात्विकता जीवन में ।। चेतन० ।।

दिव्य उषा की उदित हुई हैं, किरणें तव प्रांगण में।
तू पगले, अब तक भी सोया, उठ लग ईश-भजन में। चेतन०।

भौतिकता में भटक रहा क्यों ? शान्ति नहीं है धन में।
अन्दर के पट खोल दे साधक, शान्ति मिलेगी मन में ।। चेतन० ।।

यम नियमों का पालन करके, सिद्धि पा आसन में।
प्राणायामाभ्यासी बन, लग योग-क्रिया साधन में ।। चेतन० ।।

योग-क्रिया से देती दिखाई, आभा आत्म-गगन में।
दिव्यालोक प्रकाशित होगा, निर्मल पावन मन में ।। चेतन० ।।

"विश्वानि दुरितानि परासुव" मंत्र सदा जप मन में।
"अग्ने नय सुपथा" जो गाये, आये न भव-बन्धन में ।। चेतन० ।।

सच्चा मानव "पाल" वही जो, रहता मग्न मनन में।
सुरभित सुमन खिलेंगे उस के, जीवन के कानन में ।। चेतन० ।।



गीत संख्या १२८

(तर्ज:—विश्वपति जगदीश वर, तेरा ही ओंम नाम है)

चेतन अचिन्त्य ईश के, चिंतन में चित्त लगा लिया।
ब्रह्मानुभूति का नशा, अन्तःकरण में पा लिया॥

अन्तर्मुखी है भावना, वृत्ति एकाग्र हो गई।
धन्य हुआ मैं आत्मा-मन्दिर है सजा लिया॥

वातावरण विशुद्ध है, संयम की साधना फली।
दिव्य गुणों से आत्मा-मन्दिर है सजा लिया॥

मेधा विकास पा गई, प्रज्ञा में प्रेरणा हुई।
अन्तर्विभूति-केन्द्र को, साधक ने है जगा लिया॥

मन को मिलेगी शान्ति, श्रेय का पथ सुलभ बने।
आत्म-नदी के घाट पै, आसन अगर जमा लिया॥

सिन्धु है वह मैं बिन्दु हूं, भानु है वह मैं इन्दु हूं।
देव हिरण्यगर्भ ने, अपना मुझे बना लिया॥

सच्चित् हूं मैं प्रभु मगर, सच्चिदानन्द रूप है।
मुझे आनन्द-सिन्धु ने, शुभ आनन्द दिला दिया॥

पूर्व सुकर्म योग से, पुण्य का फल उदय हुआ।
"पाल" ने आत्म-लोक में, दर्शन प्रभु का पा लिया॥

———

गीत संख्या १२८ (अ)

(तर्ज:—नमस्ते नाथ अविनाशी, तुम्हें मस्तक नवाते हैं)

सदा कर साधना, साधक, अगर ईश्वर को पाना है।
न कर तूं पाप का चिन्तन, अगर जीवन बनाना है॥

सदा सत्संग में जाओ, जहां भगवद्-भजन होता।
बुराई से छुड़ा तेता, प्रभु-भक्ति का गाना है॥

करूं भक्ति, यह इच्छा है, नहीं लेकिन समय मिलता।
यह झूठी बात है प्यारे, यह सब तेरा बहाना है॥

अगर पापी रहा, तो मुंह-उसे कैसे दिखायेगा ?
भुला मत जीव, मर कर ईश्वर के पास जाना है॥

प्रभु की दिव्य वाणी वेद के उपदेश हितकारी।
हमें श्रद्धा भरे मन से, सदा सुनना सुनाना है॥

महापुरुषों के जीवन से, यही शिक्षा हमें मिलती।
स्वजीवन देश-रक्षा, धर्म पालन में लगाना है॥

करो मत चित्र की पूजा, चरित्र पात्र पूजा का।
हमें है "पाल" सच्चे आर्य बन जीवन विताना है॥



गीत नं० १२९

(तर्ज :—भारत का कर गया बेढ़ा पार, ओ मस्ताना योगी)

जीवन अपने का करो सुधार, ऐ सत्संगी बहनो।
अपने बना लो शुद्ध विचार, ऐ सत्संगी बहनो ॥

जीवन अनमोल खजाना, इसको न व्यर्थ गंवाना।
भक्ति से ही होगा उद्धार, ऐ सत्संगी बहनो ॥

ईश्वर में निष्ठा रक्खो, मुक्ति की इच्छा रक्खो।
श्रद्धा से होगा बेड़ा पार, ऐ सत्संगी बहनो ॥

शुभ कार्य की वृत्ति धारो, अपना कर्त्तव्य विचारो।
प्रभु से हो सच्चा प्यार, ऐ सत्संगी बहनो ॥

तुम क्रोध कपट को छोड़ो, सब पाप के बन्धन तोड़ो।
मीठा बनाओ निज व्यवहार, ऐ सत्संगी बहनो ॥

विषयों में डूबे रहना, जाति अपमान सहना।
यह तो है भीषण अत्याचार, ऐ सत्संगी बहनो ॥

पापी की संगत त्यागो, हैं समय अभी तुम जागो।
जीवन तो बाकी हैं दिन चार, ऐ सत्संगी बहनो ॥

थे स्वामी दयानन्द आये, भारत के भाग्य जगाये।
ऋषिवर का करो जयकार ऐ सत्संगी बहनो ॥

वहमो के गढ़ न गिरेंगे, भारत के दिन न फिरेंगे।
जब तक न होगा वेद-प्रचार, ए सत्संगी बहनों ॥

बुद्धि-बल, मन की शक्ति, श्रद्धा व ईश्वर-भक्ति।
"कैलाश" हैं यह आधार, ऐ सत्संगी बहनो ॥



(ख) पंजाबी-गीत

गीत नं० १३०

(तर्ज :—ओनां कदी वी न दुख पाया, जिन्हां ने ओदा नाम जपया)

अति अद्‌भुत प्रभु जी दी माया, सिमर ओम् नाम वन्दया ॥
जप ओम् बन्दया, कर नित संध्या ।

नहीं अन्त किसे ने ओदा पाया, सिमर ओम् नाम बन्दया ।
अति अद्‌भुत प्रभु जी दी माया, सिमर ओम् नाम बन्दया ॥

ए जग सारा ओस बनाया, नीले नभ विच चांद सजाया ।
अणू अणु दे विच समाया, सिमर ओम् नाम बन्दया ॥
अति अद्‌भुत प्रभु जी दी माया, सिमर ओम् नाम बन्दया ।
दुख संकट सब कट्टन हारा, घट घट वासी प्रीतम प्यार ॥
ओदी अमृत मयी हैगी छाया, सिमर ओम् नाम बन्दया ।
अति अद्‌भुत प्रभु जी दी माया, सिमर ओम् नाम बन्दया ॥

निर्मल मन दा है ओ वासी, दर्शन ओहदा ओ ही पासी—
जिने मन दा मैल मिटाया, सिमर ओम् नाम बन्दया ॥

अति अद्‌भुत प्रभु जी दी माया, सिमर ओम् नाम बन्दया ।
"पाल" बड़े ओ लोग अभागी, जिनां न मन चों तृष्णा त्यागी ।
जिनां भोग दा रोग लगाया, सिमर ओम् नाम बन्दया ॥
अति अद्‌भत प्रभु जी दी माया, सिमर, ओम् नाम बन्दया ॥



गीत नं १३१

ओं नाम मन भज ले, नित्त ओं नाम मन भज ले।
ओं नाम तू भज मन मेरे, कट जायेंगे सङ्कट तेरे ॥
बुरे काम सब तज दे, नित्त ओं नाम मन भज ले।
ओं नाम दी बड़ी है महिमा, ऋषि मुनियां दा एहो कहना।
मुक्त स्वजीवन कर ले, नित ओं नाम भले ॥
ओं ओं तू जपदा जावें, पाप पास तेरे न आवें।
लोभ मोह मद छड दे, नित ओं नाम मन भज ले ॥

—०—०—

गीत नं० १३२

तेरा ओं नाम रम जाये प्रभु जी मेरी नस-नस में।
तेरी भक्ति दा रस भर जावे प्रभु जी मेरी नस-नस में ॥
तूं दाता मैं दीन भिखारी, तूं स्वामी मैं भक्त पुजारी।
गूंज गूंजदी आवे, प्रभु जी मेरी नस नस में ॥
एहो गूंज गूंजदो आवे प्रभु जी मेरी नस नस में।
तेरी ओं नाम रम जावे प्रभु जी मेरी........
पाप मिटा मन निर्मल कीता, ओं नाम दा अमृत पीता।
प्रेम छलकदा जांवे, प्रभु जी मेरी नस नस में ॥
अज प्रेम छलकदा जावे, प्रभु जी मेरी नस नस में।
तेरी ओं नाम रम जावे प्रभु जी मेरी...... ..
मन दा मिटिआ अज हनेरा, मैंनूं मिलिआ प्रीतम मेरा।
ज्ञान दी जोत जगा दे, प्रभु जी मेरी नस नस में ॥
खूब ज्ञान दी जोत जगादे प्रभु जो मेरी नस नसमें।
तेरा ओं नाम रट जावे प्रभु जी मेरी........

मेरा प्रीतम घट घट वासी, अजर अमर ते है अविनाशी।
गान नूं मुख बन जावे, प्रभु जी मेरी नस नस में॥
गुण गान नूं मुख बन जावे प्रभु जी मेरी नस नस में।
तेरा ओं नाम रम जावे प्रभु जी मेरी··· ·····

×××

गीत नं १३३

(तर्ज भेंट :—' मेरी माता दियां, उच्चियां लम्मियां पहाड़ियां ने

ईश्वर भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारिया ने।
ओम् भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने।
श्रद्धा भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने॥

जय ईश्वर दी, जय ईश्वर दी।
सर्वेश्वर दी, सर्वेश्वर दी।
परमेश्वर दी, परमेश्वर दी।
देवेश्वर दी, देवेश्वर दी।
जय ईश्वर दी, जय ईश्वर दी।
सब्बे बोलो, जय ईश्वर दी।
प्रेम से बोलो, जय ईश्वर दी।
भाई वी बोलन, जय ईश्वर दी।
बहनां वी बोलन, जय ईश्वर दी।
जय ईश्वर दी, जय ईश्वर दी।
परमेश्वर दी, परमेश्वर दी॥

ईश्वर भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने।
ओम् भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने।
श्रद्धा भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने॥

तारे चमकन तारे — वाह् वा,
आओ श्रद्धा भाव नाल हुन, सभी प्रभु दे द्वारे।
ईश्वर भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने।
ओम् भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने ।।
श्रद्धा भक्ति दियां, चढ़ियाँ अज खुमारियां ने ।।
बिजली चमके बिजली-वाह् वा,

बिजली ए सन्देश सुनांदी, मैल मिटालो दिल की।
ईश्वर भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने।
ओम् भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने।
श्रद्धा भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने ।।
गांदे महिमा गांदे-वाह् वा,

कोयल मैना पक्षी मिलके, गीत प्रभु दे गांदे ।।
ईश्वर भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने।
ओम भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने।
श्रद्धा भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने ।।
सावन आया सावन — वाह् वा,

पावन परमेश्वर दा फड़ लौ, 'पाल' प्रेम से दामन।
ईश्वर भक्ति दियां चढ़ियां आज खुमारियां ने।
ओम् भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने।
श्रद्धा भक्ति दियां, चढ़ियां अज खुमारियां ने ।।

× × ×

गीत नं० १३४

टप्पे

बदलां विच चन्दा ए,
प्रभु दी भक्ति बिना, हां हां प्राणी,
ए जीवन गंदा ए ॥ १ ॥
बदलां विच तारे जड़े,
प्रभु दी भक्ति बिना, हां हां प्राणी,
भव-सागर कौन तरे ॥ २ ॥
इक तारा पथा गांदा,
प्रभु दी भक्ति बिना, हाँ हां प्राणी,
मन चैन नहीं पांदा ॥ ३ ॥
बदलां च हवा बैहंदी,
प्रभु दी भक्ति बिना, हां हां प्राणी,
जिंद दुखड़े है सैंहदी ॥ ४ ॥
ए 'पाल' ने सच गाया,
प्रभु दी भक्ति बिना, हां हां प्राणी,
ए बिरथा है काया ॥ ५ ॥

×××

गीत नं० १३५

(तर्ज :—शाला जवानियां माने)

साधक कुज साधना करके, ईश्वर नूं सिमरन करलै करलै ॥
जनम ए मुड़ न औना,
गाफिला हुन तूं सौं ना।
कीमती वक्त ए खो ना,
अन्त पड़ेगा रोना

पढ़ लै तूं जाग प्रभु दा. पढ़ लै पढ़ लै ।। साधक कुज० ।।

माया दा परदा हटालै,
हृदय नूं शुद्ध बनालै,
प्रेम दा रंग चढ़ा लै,
मन हुन तूं मस्त बना लै ।।

करलै तूं जन्म सफल हुन, करलै करलै ।। साधक, कुज० ।।

'पाल' करम कर चंगे,
छडदे तूं लच्छन मंदे ।
ईश्वर नूं जप लै बन्दे,
कटनगे तेरे फन्दे ।।

फड़लै तूं शरण प्रभु दी, फड़ल फड़लै ।। साधक कुज० ।।



गीत नं० १३६

बहनों, जागो जगाओ जी, नहीं सौन दा वेला ।
हुन बिगड़ी बनाओ जी, नहीं सौन दा बेला ।।

सीता सावित्री दो भुलगई कहानी,
कित्थे गई ओ झाँसी दी रानी ।

पिछले किस्से सुनाओ जी, नहीं सौन दा वेला ।
हुन बिगड़ी वनाओ जी, नहीं सौन दा वेला ।।

फैशन परस्ती ने शरम गंवाई,
अखियां दी सब दीद मिटाई ।

भैन लाज बचाओ जी, नहीं सौन दा वेला ।
हुन बिगड़ी बनाओ जी, नहीं सौन दा वेला ।।

जम्मी कुड़ी घर शोक मनाया,
दहेज ने नारी दा मान घटाया ।

यह बुराई हटाओ जी, नहीं सौन दा वेला।
हुन बिगड़ी बनाओ जी, नहीं सौन दा वेला ॥
पै गया सिर ते पापां दा गरदा,
शरमो हया दा उठ गया परदा।
रो रो आँसू बहाओ जी, नहीं सौन दा वेला।
हुन बिगड़ी बनाओ जी, नहीं सोन दा वेला ॥
पीर पैगम्बर ते कबरां दी पूजा,
एहो जेहा होर पाप न दूजा।
गल सभझो समझाओ जी, नहीं सौन दा वेला।
हुन बिगड़ी बनाओ जी, नहीं सौन दा वैला ॥
जन्तर मंतर जादू टोने,
ए सब झूठे करमाँ दे रोने।
नहीं होश गंवाओ जी, नहीं सौन दा वेला।
हुन बिगड़ी बनाओ जी, नहीं सौन दा वेला ॥
झूठियां रसमां दे पा लये फन्दे।
कुड़ियां वी देखन सिनमे गन्दे।
भैड़ी रसमां हटाओ जी, नहीं सौन दा वेला।
हुन बिगड़ी बनाओ जी, नहीं सौन दा वेला ॥
झूठी मनौतियां से जगराते,
ए सब हैं खान पीन दे खाते।
एधर मन न लगाओ जी, नहीं सौन दा वला।
हुन बिगड़ी बनाओ जी, नहीं सौन दा वेला ॥
जिन घर दे विच नारी हस्से,
कैंहदे ऋषि ओथे देवता वस्से।

सब नू ए बतलाओ जी, नहीं सौन दा वेला।
हुन बिगड़ी बनाओ जी, नहीं सौन दा वेला॥
"पाल" कहे बनो पदमनी रानी,
गौरव वाली है जिस दी, कहानी।
डुबदी कौम बचाओ जी, नहीं सौन दा वेला।
हुन बिगड़ी बनाओ जी, नहीं सौन दा वेला॥



गीत नं० १३७

भारत वासी वीरो, जागो जागन दी लोड़।
शिवरात्रि है आई, करो दिल की सफाई॥
मन दी वृत्ति हुन भाई, सच्चे शिव नाल जोड़।
भारत वासी वीरो, जागो जागन दी लोड़॥
ऋषि ने ज्ञान फैलाया, सुत्ता देश जगाया।
किला वहमां दा ढाया, कटया भारत दा कोड़॥
भारत वासी बीरो, जागो जागन दी लोड़।
ऋषि राह सी दिखाइ, असी आज़ादी पाई॥
जोत ओस दी जगाई, कडयां भारत चों चोर।
भारत वासी बीरो, जागो जागन दी लोड॥
रल मिल जोर लगाओ, भारत स्वर्ग बनाओ।
जय जय ऋषि दी मनाओ, मिल के, पचपन करोड़॥
भारत वासी वीरो, जागो जागन दी लोड़॥



गीत नं० १३८

टप्पे (रामनवमी के उपलक्ष्य में)

अज राम दा दिन आया, हां अज राम दा दिन आया।
असी एस खुशियां विच, ए गीत मधुर गाया॥

धन्न भारतवर्ष है ए, हां धन्न भारतवर्ष है ए।
जित्थे ओहदा जन्म होया, ओहो प्यारा देश है ए॥

ओहदे भक्त कहांदे ओ, हाँ ओह्दे भक्त कहांदे ओ।
कुज ओथों शिक्षा लवो, जे गुण ओहदे गांदे ओ॥

रोंदी जनता सारी सी, हां रोंदी जनता सारी सी।
राज नूं धर्म लई, ओहने ठोकर मारी सी॥

ओह तां प्रेम दी मूरत सी, ओह तां प्रेम दी मूरत सी।
बेर खादे भीलनी दे, ओह दी प्यारी सूरत सी॥

रावण बहुत क्रोधी सी, हां रावण बहुत क्रोधी सी।
राम ओहनूं मार दित्ता, जेहड़ा राष्ट्र विरोधी सी॥

हिन्दु-संस्कृति प्यारी; हां हिन्दु-संस्कृति प्यारी।
प्रभु फेर पैदा करो, सीता जैसी नारी॥

राम नौमी जो आई ए, हां राम नौमी जो आइए।
राम दे भक्तां नूं होवे लख बधाई ए॥

गीत नं० १३६

(तर्ज :—मैं कोयल बांगन क्यों न गावां कू कू ।)

मैं गीत वतन दे क्यों न गांवा ।। कूकू ।।
क्यों न कौमी जोत जगावां ।। कूकू ।।

ए है राम कृष्ण दी धरती,
एहदी जनता आन ते मरती ।
पहली मैं याद दिलावां,
हुन ताँ, पहलीमैं याद दिलावाँ, कू कू ।।

एहना नाम जहां विच वस्से,
दीन दुखियां दा वी मन हस्से ।
शत्रु आये, आके नस्से,
मुरदा मैं कौम जगावां ।
क्यों न, मुरदा मैं कौम जगावाँ ।। कू कू ।।

भारत सी ए स्वर्ग नजारा,
'पाल' सदा तो सब नूं प्यारा ।
रब तो मंगदा ए जग सारा,

जनम मैं ऐथे ही पावां ।
ईश्वर जनम मैं ऐथे ही पावां ।। कू कू ।।
मैं गीत वतन दे क्यों न गावां ।। कू कू ।।



(ग) महर्षि दयानन्द तथा आर्य समाज सम्बन्धी गीत

गीत नं० १४०

(तर्ज :—हम को सब दुनियां जाने, हैं वीर दयानन्द के)

सोया यह देश जगाया था देव दयानन्द ने।
देव दयानन्द ने गुरु देव दयानन्द ने॥

भ्रान्त धारणा रूढ़ि वाद का छाया घोर अन्धेरा था।
अंड वंड पाषण्ड-दंभ ने डाला अपना डेरा था॥
खण्डन का ध्वज लहराया था देव दयानन्द ने।
सोया यह देश जगाया, था देव दयानन्द ने॥

भूल गया जब भारत अपना, गौरव ज्ञान पुरातन था।
नये नये मत फैल रहे थे, लेकिन नाम सनातन था॥
वेदों का नाद बजाया, था देव दयानन्द ने।
सोया यह देश जगाया, था देव दयानन्द ने॥

भेद भाव का भूत कर रहा, जाति का संहार था।
विधवाओं की करुणा-कथा का फैला हा हा कार था॥
दुखियों का दुःख मिटाया, था देव दयानन्द ने।
सोया यह देश जगाया, था देव दयानन्द ने।

पर-शासन से उत्तम अपना, बुरा राज्य बतलाया था।
भाषा-भाव एकता को ही, उन्नति-हेतु बताया था॥
हिन्दी पढ़ना सिखलाया, था देव दयानन्द ने।
सोया यह देश जगाया, था देव दयानन्द ने॥

गौरव मय इतिहास देश का, चारों ओर सुनाया था।
"पाल" दिया उपदेश कायरों को भी वीर बनाया था॥

राष्ट्र धर्म सिखलाया, था देव दयानन्द ने।
भारत का भाग्य जगाया, था देव दयानन्द ने ।।
सोया यह देश जगाया, था देव दयानन्द ने ।।

× × ×

गीत संख्या १४१

दयानन्द-जय-घोष फिर से गूंजा दो।
अखिल विश्व को वेद-गरिमा दिखा दो ।।

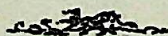
भरो वीरता धीरता देश में फिर।
पड़ी सो रही वीर जाति जगा दो ।।

लगे सर उठाने कुरानी पुरानी।
चला तर्क के तीर उन को मिटा दो ।।

उठाकर ध्वजा ओ३म् की बढ़ते जाओ।
विधर्मी दलों के दिल को दहला दो ।।

बनाकर सकल विश्व को आर्य फिर से।
उन्हें वेद पीयूष-पावन पिला दो ।।

खड़े हाथ बान्धे सभी देश हों फिर।
स्वभारत के चरणों में सब को झुका दो ।।



गीत संख्या १४२

(तर्ज:—नाथ फिर डूबते भारत को बचाने आओ)

सोये भारत को दयानन्द जगाने आया।
वेद-सद् ज्ञान सुधा सब को पिलाने आया ।।

पद-दलित देश हुआ घोर कुरीति छाई।
ज्ञान का दीप जला मार्ग दिखाने आया॥

हिन्दु जाति को मिटाने पै तुले थे सारे।
दानवी दल से ऋषि देश बचाने आया॥

करुण क्रन्दन था यहां विधवा तथा दलितों का।
दीन दुखियों का वह उद्धार कराने आया॥

योग-भूमि में बढ़ी भोग-पिपासा भारी।
ऋषि मुनियों का वह आदर्श दिखाने आया॥

सभ्यता भाषा मिटी, दास-मनोवृति हुई।
अपनी भाषा के प्रति प्रेम बढ़ने आया॥

धर्म रक्षा के लिए घोर हलाहल पी कर।
देश जाति पै हमें मरना सिखाने आया॥

बीते इतिहास की ओजस्वी सुनाकर गाथा।
"पाल" वह देश को स्वाधीन बनाने आया॥

गीत नं० १४३

दयानन्द सैनिक जगाने को आये।
वे सन्देश वैदिक सुनाने को आये॥

निशा का हुआ नाश, ये सोने वालो।
प्रभु-भक्ति के गीत गाने को आये॥

उठो जाग कर देश का भाग्य बदलो।
यह संदेश घर घर सुनाने को आये॥

दयानन्द-निर्वाण के दिन हमारा।
है कर्त्तव्य क्या, यह बताने को आये॥

सभी सज्जनों को नमस्ते नमस्ते ।
ऋषिवर की जय जय मनाने को आये ॥

वह थे देवता, हमने समझा न उनको ।
वह सत्पथ सभी को दिखाने को आये ।

ऋषि ने न कोई नया मत चलाया ।
पुरातन प्रथा ही चलाने को आये ॥

उन्हें विष दिया हाय हम पापियों ने ।
जो वेदों का अमृत पिलाने को आये ।

मिटा भ्रान्तियें पाप पाखंड जग से ।
वह सत्यार्थ-शिक्षा सुनाने को आये ॥

वह थे "पाल" मानव-हितैषी महर्षि ।
जो जाति पै मरना सिखाने को आये ॥

गीत संख्या १४४

दयानन्द महाराज दे गुण गाओ जी

वेद भक्त विद्वान् मनस्वी, ज्ञानी त्यागी महा तपस्वी ।
ऋषियां दे सरताज दे गुण गावो जी ॥ दयानन्द महाराज०

जगह २ दा दौरा कीता, खादे पत्थर ते विष पीता ।
देश धर्म दे काज, दे गुण गावो जी ॥ दयानन्द महाराज०

यज्ञ हवन करना सिखलाया, वेद ज्ञान सूरज चमकाया ।
छाया सुख दा साज, दे गुण गावो जी ॥ दयानन्द महाराज०

पतितां दा उद्धार कराया, गौ विधवा दा दुःख मिटाया ।
रच के आर्यसमाज, दे गुण गावो जी ॥ दयानन्द महाराज ०

मिटे कुरीति जोर लगाओ, संगठन दा नाद बजाओ।
बचे देश दी लाज, दे गुण गावो जी ।। दयानन्द महाराज०

वेद ज्ञान सर्वत्र फैलाना, ओस ऋषि दा ऋण चुकाना।
'धर्म करो प्रण आज, दे गुण गावो जी।। दयानन्द महाराज०

गीत नं० १४५

(तर्ज:—हसदे ने खिल-खिल जेहड़े)

ऋषिराज दयानन्द स्वामी, थे हमें जगाने आये।
भारत का सनातन गौरव, दुनिया को दिखाने आये।।

वहमों व भ्रान्त-मतों की, अज्ञान घटा थी छाई।
पाखंड-खंडनी लेकर, ऋषि ने हुंकार मचाई।।

वह रूढ़िवाद की दलदल से देश बचाने आये।
ऋषिराज दयानन्द स्वामी, थे हमें जगाने आये।।

इस ज्योतिपुंज ऋषिवर ने थी ऐसी ज्योति जगाई।
निष्प्राण, हिन्दुजाति में इक नई जान थी आई।।

वह लेखराम, लाला व गुरुदत्त बनाने को आये।
ऋषिराज दयानन्द स्वामी, थे हमें जगाने आये।।

भूले सब वेद की गरिमा, अर्थों के अनर्थ हुए थे।
जब यत्न जाति-रक्षा के, सारे ही व्यर्थ हुए थे।

वेदों की अमृत वाणी, वह सबको सुनाने आये।
ऋषिराज दयानन्द स्वामी, थे हमें जगाने आये।।

विधवा दलितों दीनों का, जब हाहाकार मचा था।
हिन्दु समाज जर्जर था, कोई न अंग बचा था।।

ऋषि पापों तथा बुराइयों के गढ़ थे गिराने आये ।
ऋषिराज दयानन्द स्वामी, हमें बचाने आये ।।

जब थे आतंक जमाये, यहां कई विदेशी विधर्मी ।
आधात हिन्दु जाति पर, करते थे कई कुकर्मी ।।

वह आर्य समाज बनाकर, थे "पाल" बचाने आये ।
ऋषिराज दयानन्द स्वामी थे, हमें जगाने आये ।



गीत संख्या १४६

(तर्जः—कौन देश है जाना बाबू कौन देश है जाना)

दयानन्द गुण गाना वीरों, दयानन्द गुण गाना ।
ऋषि दिखाया वेद का पथ जो उसी राह पै जाना ।।

भारत सारा ऋषि जगाया, आया समय सुहाना ।
परम तपस्वी महाऋषि का, जय जयकार मनाना ।।
वीरो, दयानन्द गुण गाना ।।

भारत में फिर राम कृष्ण का, आये समय पुराना ।
सीस झुकाये इस के आगे, सारा "पाल" जमाना ।।
वीरों, दयानन्द गुण गाना ।।



गीत नं० १४७

(तर्ज :—करूं क्या आस निरास भई)

ऋषि उपकार अपार किया, ऋषि उपकार अपार किया।
जगा दिया भारत यह सारा,
देव-धर्म का कर उजियारा।
तोड़ दिया पाखंड वनेरा,
वैदिक ज्ञान दिया, ऋषि उपकार अपार किया॥

मची अनाथ दलित की दुहाई,
विधवा की न कोई सुनाई।
भारत की यह देख अवस्था,
दुखी ऋषि का हिया, ऋषि उपकार अपार किया

खोल समाजें काम चलाया,
भूली कौम को राह दिखाया।
सच्चे पथ से "पाल" न विचले,
विष का [प्याला पिया, ऋषि उपकार अपार किया॥



गीत संख्या १४८

(तर्ज :—दयानन्द के वीर सैनिक बने)

दयानन्द ने देश-भक्ति सिखाई।
बलिदान की भावना थी जगाई॥
बताया कि है वेद ईश्वर की वाणी।
ऋषि-भूमि भारत की महिमा बताई।

समुल्लास छैः में लिखी राजनीति।
युवकों में उत्साह-ज्योति जगाई ॥
ऋषि शिष्य श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा।
ने लंडन में जा क्रांति-चर्चा चलाई॥
ऋषि से मिली प्रेरणा लाजपत को।
बने शेरे पंजाब हलचल मचाई॥
ऋषि-भक्त था एक सन्यासी जिसने।
थी संगीन वालों को छाती दिखाई॥
दयानन्द से प्रेरणा ले मुसाफिर।
छुरी पेट में शान के साथ खाई॥
ऋषि-भक्त विस्मिल तथा भक्त सिंह ने।
बलि देश-वेदि पै अपनी चढ़ाई ॥
अछूतों का उद्धार करके ऋषि ने।
छूआछूत की सब बुराई मिटाई॥
जगाया था जाति का गौरव सनातन।
समाजें बना "पाल" बिगड़ी बनाई॥



गीत संख्या १४६
(नगर कीर्तनों व सकीर्तनों के लिए)

मिटा दो वीरो मन का भय, महर्षि दयानन्द की जय।
मिटादो बहनों मन का भय, महर्षि दयानन्द की जय॥
धर्म की जय पाप का क्षय, महर्षि दयानन्द की जय।
जो बोले सो रहे अभय, महर्षि दयानन्द की जय॥

प्यारे स्वामी बड़े सदय, महर्षि दयानन्द की जय।
देश-भाग्य का हुआ उदय, महर्षि दयानन्द की जय ।।

गुरुवर विरजानन्द की जय, महर्षि दयानन्द की जय।
मुनिवर गुरुदत की जय, महर्षि दयानन्द की जय ।।

पण्डित लेखराम की जय, महर्षि दयानन्द की जय।
श्रद्धानन्द बीर की जय, महर्षि दयानन्द की जय ।।

त्यागी हंसराज की जय, महर्षि दयानन्द की जय।
विस्मिल भक्तसिंह की जय, महर्षि दयानन्द की जय ।।

भारत माता की हो जय, महर्षि दयानन्द की जय।
बलिदानी वीरों की जय, महर्षि दयानन्द की जय ।।

वैदिक धर्म की जय जय जय, महर्षि दयानन्द की जय।
"पाल" प्रभु से यही विनय, महर्षि दयानन्द की जय ।।



गीत नं० १५०

(१)

"ब्रह्मचर्य के धनी ऋषिवर दयानन्द ने दया दिखाई'
ऋषियों की यह पावन भूमि जब थी गिरी पतन की खाई।
धर्म-भावना, सत्य-साधना की जब यहां कली कुम्हलाई ।।

भारत भाग्य-गगन पर जब थी गहरी काली बदली छाई।
फैली चारों ओर भयानक रूढ़िवाद की घोर बुराई ।।

देश-दुर्दशा कर डाली जब पराधीनता ने दुखदाई।
ब्रह्मचर्य के धनी ऋषिवर दयानन्द ने दया दिखाई ।।

(२)

वेद पठन पाठन की प्रथा थी हुई विलुप्त, अविद्या छाई।
आर्य पद्धति छोड़, अवैदिक ग्रन्थों की जब चली पढ़ाई ।।
मतमतान्तरों के दूषण ने कल्पित रचना थी करवाई।
पर-निन्दा कर. अपने मत की अपने मुख थी महिमा गाई ।।
कठिन काल में पुण्य-धरा पर वेद-सुधा-धारा बरसाई।
ब्रह्मचर्य के धनी ऋषिवर दयानन्द ने दया दिखाई ।।

(३)

एक ब्रह्म को भूल अनेकों परमेश्वर हम ने रच डाले।
कोई पूजता राम कृष्ण शिव कई बने चण्डी मत वाले ।।
हनुमान जी कहीं, कहीं थे भैरव कर में पकड़े भाले।
कई देव देवी अति गोरे, कई कुरूप भयानक काले ।।
किया विरोध विविध देवों का एकेश्वर पूजा सिखलाई।
ब्रह्मचर्य के धनी ऋषिवर दयानन्द ने दया दिखाई ।।

(४)

निराकार की पूजा छूटी, छूट गया था योगाभ्यास।
हुआ मूर्ति की पूजा द्वारा था उपासना का उपहास ।।
अवतारों की लीलाओं ने किया भक्त-हृदयों में वास।
स्वांग बनाने रास रचाने में मिलता सब को उल्लास ।।
ब्रह्म रूप बतला समझाया, प्रतिमा पूजा बड़ी बुराई !
ब्रह्मचर्य के धनी ऋषिवर दयानन्द ने दया दिखाई ।।

(५)

पाखंडों का अन्त नहीं था, बड़ा हुआ था पापाचार।
धर्म कर्म का शोर मचा पंडों ने चलाया था व्यापार ।।

दान दक्षिणा की चिन्ता ने खूब बढ़ाया भ्रष्टाचार।
नग धड़ंग अपंग लफंगे साधु बने करते अपकार।।
हरिद्वार में पहुंच वहाँ पाखण्ड खण्डिनी ध्वजा लहराई।
ब्रह्मचर्य के धनी ऋषिवर दयानन्द ने दया दिखाई।।

(६)

दलितों से थी घृणा उन्हें जो ऊंची जाति के अभिमानी।
उन्हें विधर्मी थे अपनाते, होती हिन्दू धर्म की हानि।।
पशु-धन का था ह्रास हो रहा नहीं समझते थे अज्ञानी।
खुले आम थी छूट गाय माता की देते थे कुर्बानी।।
लिख "गो करुणा निधि" गाय-रक्षा की तब योजना बनाई।
ब्रह्मचर्य के धनी ऋषिवर दयानन्द ने दया दिखाई।।

(७)

नारी जाति को पांवों की जूती लोग बताते थे।
विद्या का अधिकार न उनको शास्त्राज्ञा बतलाते थे।।
देवदासियें इन्हें बना कर मन्दिर में नचवाते थे।
अल्पायु की विधवाओं को देख न कभी लजाते थे।।
राम कृष्ण गौतम की जननी नारी की महिमा बतलाई।
ब्रह्मचर्य के धनी ऋषिवर दयानन्द ने दया दिखाई।।

(८)

ब्रह्मचर्य का पाठ पढ़ाया, सोया देश जगाया था।
शुद्धि द्वारा, बने विधर्मी, भाईयों को अपनाया था।।
काट कुरीति-जाल काल के मुख से राष्ट्र बचाया था।
गौरव मय इतिहास पुराना अपना खोल सुनाया था।।
पिया हलाहल मगर जाति में नव जीवन की ज्योति जगाई।
ब्रह्मचर्य के धनी ऋषिवर दयानन्द ने दया दिखाई।।



गीत नं १५१

ऋषि-भक्त मैं आर्य कुमार। राष्ट्र-भक्त मैं आर्य कुमार ।।

(१)

देश धर्म से मुझ को प्यार, लक्ष्य है मेरा पर-उपकार।
वीर धीर शक्ति अवतार, मानवता का हूं श्रृंगार ।।
ऋषि-भक्त मैं आर्य कुमार ।।

(२)

मेरा यह संकल्प महान्, करूं राष्ट्र का मैं उत्थान।
देकर के अपना बलिदान, कर दूं विस्मित सब संसार ।।
ऋषि-भक्त मैं आर्य कुमार ।।

(३)

मुझे तोड़ना है भ्रम जाल, रूढ़िवाद का गढ़ विकराल।
सभी बुराई का जंजाल, होगा फिर भारत-उद्धार ।।
ऋषि-भक्त मैं आर्य कुमार ।।

(४)

सदाचार का ले आधार, कभी करूं न भ्रष्टाचार।
नहीं सहूंगा अत्याचार, मेरे मन के यह उद्‌गार ।।
ऋषि-भक्त मैं आर्य कुमार ।।

(६)

वेद पताका लेकर हाथ, श्रद्धा व भक्ति के साथ।
गाऊं ऊंचा करके माथ, दयानन्द का जय जयकार ।।
ऋषि-भक्ति मैं आर्य कुमार ।।

×××

गीत नं १५२

(१)

ऋषि की दिव्य साधना, बनी थी प्रेरणामयी।
निविड़ तिमिर मिटा, जगी प्रकाश की किरण नयी।।
समाज में नई दिशा नये विचार ले रहे।
ऋषि की भव्य वाटिका, सुमन सुगन्ध दे रहे।।

(२)

ऋषि से शिष्य रूप में प्रकाण्ड ज्ञान प्राप्त कर।
स्वदेश-कार्य के लिये विदेश को बनाया घर।।
क्रान्ति-प्रेरणा के स्रोत श्याम जी बने रहे।*
ऋषि की दिव्य वाटिका, सुमन सुगन्ध दे रहे।।

(३)

ऋषि की मृत्यु ने जिसे था आस्तिक बना दिया।
बने व्रती स्वधर्म के, कमाल काम था किया।।
विद्यार्थी गुरुदत्त ने विवेक-बिन्दु थे गहे।
ऋषि की भव्य वाटिका, सुमन सुगन्ध दे रहे।।

*श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा जिन्होंने महर्षि दयानन्द के चरणों में बैठकर विद्या प्राप्त की और देश भक्ति की अदम्य ज्वाला को हृदय में ले इंग्लैंड में इण्डिया लीग की स्थापना की और क्रान्तिकारी आन्दोलन का विदेश में नेतृत्व किया।

(४)

धर्म-प्रचार की उमंग, अंग अंग में बसी।
ऋषि के मिशन की लगन बनी हुई थी आग सी ।।
प्रचार-कार्य में क्लेश लेखराम ने सहे।
ऋषि की भव्य वाटिका, सुमन सुगन्ध दे रहे ।।

(५)

जिस केसरी की गर्जना गम्भीर गूंजती रही।
साइमन विरोध के समय कठोर चोट थी सही ।।
"माता समाज है" यही सगर्व शब्द थे कहे।
ऋषि की भव्य वाटिका, सुमन सुगन्ध दे रहे ।।

(६)

सन्यासी वीर आत्मा, शुद्धि-शिविर के अग्रणी।
महात्मा हुतात्मा, रहे जो आचरण-धनी ।।
सोने पै खाई गोलियाँ, न अश्रु आंख से बहे।
ऋषि की भव्य वाटिका, सुमन सुगन्ध दे रहे ।।

(७)

बलिदान त्याग के प्रतीक, हंसराज वीर थे।
न मोह स्वार्थ का किया, सुधीर थे गम्भीर थे ।।
आजन्म साधना सधी, कुटिल प्रहार थे सहे।
ऋषि की भव्य वाटिका, सुमन सुगन्ध दे रहे ।।

(८)

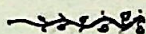
बिस्मिल व भक्तसिंह से अनेक वीर-केसरी।
युवाओं में स्वदेश की प्रचण्ड भावना भरी ।।
खड़ी थी मृत्यु सामने सदा ही हंसते रहे ।।
ऋषि की भव्य वाटिका, सुमन सुगन्ध दे रहे ।।

(९)

गुरुकुल स्कूल थे खुले, कुरुढ़ियों की जड़ हिली।
पिछड़े अनाथ वर्ग को महान् सान्त्वना मिली ।।
वैदिक विचार विश्व को विवेक-दान दे रहे।
ऋषि की भव्य वाटिका, सुमन सुगन्ध दे रहे ।।

(१०)

आगे रहा समाज ही दुर्भिक्ष में भूचाल में।
आता रहा है काम यह सब संकटों के काल में ।।
वलि-वेदि पै कटता रहा तेरे लिये भारत-महे।
ऋषि की भव्य वाटिका, सुमन सुगन्ध दे रहे ।।



गीत नं० १५३

तर्ज :—हिन्द माता की तुम्ही सन्तान हो।

आर्य-वीरो, देश की तुम शान हो।
भीम अर्जुन की तुम्ही सन्तान हो ।।
हां, सर उठा करके बढ़ो संसार में।
हां, मर मिटो हंसते हुए उपकार में ।।
देश जाति पै तुम्हे अभिमान हो—
आर्य वीरो, देश की तुम शान हो।
हां, राजपूती शान फिर पैदा करो।
हां, आन व सम्मान हित सब कट करो ।।
बच्चा बच्चा जाति पै बलिदान हो—
आर्य वीरो, देश की तुम शान हो।

हां, स्वामी श्रद्धानन्द सी हो साधना।
हाँ, भक्तसिंह बिस्मिल तुम्हें दे प्रेरणा।
देश का फिर "पाल" नव-निर्माण हो।
आर्य वीरो, देश की तुम शान हो॥



गीत नं० १५४

आर्य-वीर

,मैं आर्य वीर कहलाऊंगा, कष्टों से नहीं घबराऊंगा।
आर्यत्व पै मर मिट जाऊंगा, युवकोचित तेज दिखाऊंगा।
आर्यत्व-विरोधी दल-बल, को मैं सीधे पथ पर लाऊंगा।
मैं आर्य-वीर कहलाऊंगा॥
जो आर्य वीर, न डरते हैं, वह तो निज आन पै मरते हैं।
मृत्यु को खेल समझते हैं, जो कहते कर दिखलाते हैं।
मैं धर्म ध्वजा फहराऊंगा, वेदों का नाद बजाऊंगा।
मैं आर्य-वीर कहलाऊंगा॥
मैं दयानन्द का अनुयाई, धुन लेख राम की हैं पाई।
श्रद्धा की शक्ति भी आई, और हंसराज की ऊंचाई॥
ले, ज्वाला एक जगाऊंगा, भारत का भाग्य जगाऊंगा।
मैं आर्य-वीर कहलाऊंगा॥
बन गुरुदत्त सा अति ज्ञानी, श्री श्याम जी जैसा अभिमानी।
बिस्मिल सा बहादुर लासानी, और भक्तसिंह सा बलिदानी॥
वीरों का गौरव गाऊंगा, तप का जीवन अपनाऊंगा।
मैं आर्य-वीर कहलाऊंगा॥

ले लालाजी की निर्भयता और भाईजी की कर्मठता।
स्वामी दर्शन जी की दृढ़ता, नारायण जी की नैतिकता।
अब आगे कदम बढ़ाऊंगा, ऊंचा आदर्श बनाऊंगा।
मैं आर्य-वीर कहलाऊंगा ॥



गीत नं० १५५

दयानन्द दशक

विकट संकटों को सहा, दयानन्द भगवान्।
सत्य धर्म हित विष पिया, धन्य धन्य बलिदान ॥१॥
देश वियन्मण्डल हुआ, घोर तिमिर-आछन्न।
ऋषिवर आलोकित किया, वेद-ज्ञान प्रच्छन्न ॥२॥
निखिल देश शत्रु रहा, दिये विविध सन्ताप।
पुनरपि विचलित न हुए, धन्य ऋषि-प्रताप ॥३॥
पूर्ण संयमी, वेदवित्, ब्रह्मनिष्ठ विद्वान।
दयानन्द उपमेय का, दयानन्द उपमान ॥४॥
ईशभक्ति अनुरक्ति से, मन था ओतप्रोत।
दिव्य दया आनन्द के दयानन्द थे स्रोत ॥५॥
श्री चरणों में थे झुके, बड़े बड़े महराज।
अतुल शक्ति सम्पन्न थे दयानन्द ऋषिराज ॥६॥
गो अनाथ पालन किया, किया दलित उद्धार।
हिन्दू जाति पै ऋषि, किये कोटि कोटि उपकार ॥७॥
ऋषि सम्मुख आये कई, काशी के विद्वान।
शशि समक्ष उडु सम हुए, देख ऋषि का ज्ञान ॥८॥

वेद विहित सद् धर्म का, चमकाया आलोक ।
पथ दिखलाया हो सफल, लोक तथा परलोक ।।६।।

भारत भू पै छा रहा, ऋषिवर का गुण गान ।
इस युग का युग-देवता दयानन्द भगवान् ।।१०।।



गीत नं० १५६

पञ्चार्यमूर्ति

(१)

जिन्हें प्राप्त थी अति गहन, प्रतिभा ईश प्रदत्त ।
आर्षाध्ययन-प्रचार-रत, श्री पण्डित गुरुदत्त ।।

(२)

धर्म-ध्वजा कर में लिया, किया ठोस अतिकार्य ।
छुरा पेट में खा लिया, लेखराम जी आर्य ।।

(३)

शुद्धि-शस्त्र द्वारा किया, तबलीगी दल बन्द ।
खा गोली बलि दे गये, स्वामी श्रद्धानन्द ।।

(४)

सिंह-गर्जना से किया, कम्पित अरि समुदाय ।
देश समर हित हुत हुए, पूज्य लाजपत राय ।।

(५)

राष्ट रोग का पूर्णतः, कर अध्ययन अमन्द ।
हिन्दु - राष्ट्र - प्रेरक बने, भाई परमानन्द ।

× × ×

गीत नं० १५७

महात्मा हंसराज पञ्चक

सौम्य-वदन, वर-गुण-सदन, तेजपुञ्ज, गम्भीर।
त्याग-तपस्या-मूर्तिमय, हंसराज मतिधीर ॥ १ ॥
देश जाति कल्याण हित, किया स्वजीवन दान।
हंसराज महाराज थे, सकल दिव्य गुण खान ॥ २ ॥
सरल, शान्त, प्रभुभक्त रत, परहित जीवन यक्त।
विपुल ज्ञान सम्पन्न थे, हंसराज ऋषिभक्त ॥ ३ ॥
गहनज्ञान प्रतिभान्वित, वन्दनीय, मतिमान्।
शब्द कहां जो कर सकें, हंसराज गुणगान ॥ ४ ॥
वर्तमान पंजाब के, निर्माता श्रीमान्।
गाये गुण गाथा सदा, भारत की सन्तान ॥ ५ ॥



गीत नं० १५८

संस्कारों एवं मंगलकार्यों पर गाने योग्य गीत

(तर्ज :—हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मंगन०)

आओ मिल प्रभु गुणगान करें, यह मंगलमय दिन आया है।
उसकी अनुकम्पा से सब ने, उत्साह तथा सुख पाया है ॥
शुभ मन्त्रों का उच्चार है, हुआ सुगन्धित अपना द्वार हुआ।
उसका ही यह उपकारहु आ, मिल सब ने यज्ञ रचाया है ॥
कैसा सुन्दर संस्कार हुआ, सुख-शान्ति-सुधा संचार हुआ।
हर्षित सारा परिवार हुआ, सुख का सब साज सजाया है ॥

है सजी सभा सब भाईयों की, आती आवाज बधाईयों की।
रौनक है लोग लुगाइयों की, सब मिल मन मोद मनाया है ।।
सर्वत्र दया भगवान करें, आनन्द सुधा का दान करें।
सब कष्ट हरें कल्याण करें, यह मंगल-गीत सुनाया है ।।

×××

गीत नं० १५६

हे मंगल रूप-अनूप तुम्हें सब सीस नवाते हैं।
दे धन्यवाद भगवान् तुम्हारी जय जय गाते हैं ।।
शुभ मंगल मय दिन आया,
सब में उत्साह समाया।
तब दया-दान से नाथ सभी मन मोद मनाते हैं।
दे धन्यवाद भगवान् तुम्हारी जय जय गाते हैं ।।
देते मिल मित्र बधाई,
यह संस्कार सुख दाई।
सब रिश्तेदार गले मिलते फूल न समाते हैं।
दे धन्यवाद भगवान् तुम्हारी जय जय गाते हैं ।।
हों दूर रोग इस घर से,
सुख की शुभ वर्षा बरसे।
ऐसे दिन फिर भी आयें ईश से यह वर पाते हैं।
दे धन्यवाद भगवान तुम्हारी जय जय गाते हैं ।।



गीत नं० १६०

(तर्ज :—गम दिये मुस्तकिल०)

दे रहे मुदित मन, सारे मिल मित्र जन, बहिन भाई।
जन्म दिन की सभी को बधाई॥
धन्य हो दीनबन्धु दयालु,
भक्त वत्सल विधाता कृपालु॥
तेरी करुणा बड़ी, जो यह सुख की घड़ी-है दिखाई।
जन्म दिन की सभी को बधाई॥
दीर्घायु बने प्यारा बच्चा,
स्वस्थ सुन्दर गुणी वीर सच्चा।
इस की कीर्ति-कथा, सब जगह सर्वथा-दे सुनाई॥
जन्म दिन की सभी को बधाई॥
हो बड़ा पाये विद्या यशोबल,
देश का यह करे नाम उज्ज्वल॥
पाप से यह डरे, धर्म की ही करे-शुभ कमाई॥
जन्म दिन की सभी को बधाई॥
भाग्यशाली रहे आयु सारी,
होवे धर्मात्मा ब्रह्मचारी।
"पाल" परिवार को, सार संसार को-सुखदाई॥
जन्म दिन की सभी को बधाई॥

—०—०—

गीत नं० १६१

शिक्षा*

माता पिता की ओर से

पुत्री को

शिक्षा, उपदेश एवं आशीर्वाद

१. पुत्री के प्रति—

सुमंगली प्रतरणी गृहाणां सुशेवा पत्ये श्वशुराय शम्भूः।
स्योना श्वश्र्वै प्र गृहान् विशेमान् ॥
(अर्थववेद काण्ड १४, सूक्त २, मंत्र २६)

जहां पली तू आज तक, उस घर से मुख मोड़।
आज चली प्यारी सुता, नये पति कुल ओर ॥
जा जा मंगल रूपिणी. कर ईश्वर का ध्यान।
बन पतिकुल की तारिणी, कर सब का कल्याण ॥
पति सेवा का आज से, सच्चा व्रत ले धार।
सास ससुर सम्मान कर, सुखी बना परिवार ॥

* अपनी पुत्री सौभाग्य वती कान्ता के विवाहवसर पर लेखक ने स्वपुत्री को शिक्षा, उपदेश एवं आशीर्वाद देते हुए कुछ लिखा था, जिसे उपस्थित आर्य जनता ने अत्यन्त सराहा। उपदेश पवित्र वेद मन्त्रों के आधार पर है और सभी परिवार यथा समय इस का सदुपयोग कर सकते हैं अतः इसे अक्षरशः यहां प्रकाशित करवा दिया है।

स्योना भव श्वशुरेभ्यः स्योना पत्ये गृहेभ्यः ।
स्योनास्यै सर्वस्यै विशे स्योना पुष्टायैषां भव ।।
(अथर्ववेद काण्ड १४, सूक्त २, मंत्र २७)

ससुर तथा जो ससुर सम, अन्य पूज्य परिवार ।
सब को बन सुखदायिनी, कर विनम्र व्यवहार ।।
पति सुख तेरी दृष्टि में, सर्वोत्तम कर्त्तव्य ।
सम्बन्धी जितने उन्हें, सुते स्नेह दातव्य ।।
पति कुल की सारी प्रजा, रहे सदा सन्तुष्ट ।।
बन उन को सुखदायिनी, कर सबको सम्पुष्ट ।।

प्र बुध्यस्व सुबुधा बुध्यमाना दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ।
गृहान् गृहपत्नी यथासो दीर्घं त आयुः सविता कृणोतु ।।
(अथर्ववेद काण्ड १४, सूक्त २ मंत्र ७५)

सदा सुबुद्धि से भरी. सावधान सज्ञान ।
अपने नव परिवार को, कर ले स्वर्ग समान ।।
हों तेरे सुसराल में, शत वर्षायु लोग ।
रहन सहन ऐसा बना, दूर रहें सब रोग ।।
गृह पत्नि के रूप में, जा अपने घर आज ।
दीर्घायु सविता करें, मांगे सभ्य समाज ।।

अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः ।
वीरसूर्देवृकामा स्योना शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ।।
(ऋग्वेद मंडल १०, सूक्त ८५, मंत्र ४४)

तेरे नयनों में रहे, स्नेह प्यार भरपूर ।
दुख चिन्ता संताप से, पति को रखना दूर ।।
पशुओं को सुखदायिनी, सुमना सुमन समान ।
तेजमयी ओजस्विनी, जने वीर सन्तान ।।

देव संग, पति प्यार की, रहे कामना शुद्ध।
भृत्य तथा पश्वादि पै, कभी न होना क्रुद्ध॥
सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वा भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु॥
(ऋग्वेद मंडल १० सूक्त ८५, मंत्र ४६)

बन रानी सुसराल की, श्वसराज्ञा आधीन।
सास सुसेवा में रहे, गृह स्वामिनी प्रवीण॥
ननद देवरों के प्रति, स्नेह सुधा का दान।
रानी पद देगा तुझे, यह तू निश्चय जान॥

२. वर-वधू दोनों के प्रति—

सं चेन्नयाथो अश्विना कामिना सं च वक्षथः।
सं वां भगासो अग्मत संचित्तानि समु व्रताः॥
(अथर्व० कांड २, सूक्त ३०, मंत्र २)

ऐ यौवनयुत वर वधू, बनो स्वस्थ बलवान।
रहो परस्पर प्रेम से, तथा सहित सम्मान॥
जीवन पथ पर आज से, मिल कर चलो सदैव।
मिल करके आगे बढ़ो, उन्नत बनो तथैव॥
हो समान ऐश्वर्य, मन मिलें बनो इक जान।
तुम दोनों के हों सदा, व्रत संकल्प समान॥

३. अन्त में सभी उपस्थित परिजनों, इष्टमित्रों तथा सभ्य समाज से वेदवाणी में ही निवेदन है :—

सुमंगलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत।
सौभाग्यमस्यै दत्वायाथास्तं वि परेतन॥
(ऋग्वेद मंडल १०, सूक्त ८५ मंत्र ३३)

नम्र निवेदन आप से, सुनिए सभ्य समाज।
मंगल चिन्हों से युता, वधू उपस्थित आज॥
सौभाग्य वर दीजिए, इसे कृपा कर आप।
स्नेह सुधा का दान दे, हरिए सब सन्ताप॥
ओं सौभाग्यमस्तु ! ओं शुभं भवतु !
ओं स्वस्ति ! ओं स्वस्ति !! ओं स्वस्ति !!!



गीत नं० १६२

(तर्ज :—रघुपति राघव राजाराम)

अजर अमर अव्यय अविकार। परम ब्रह्म प्रभु अपरम्पार॥
अपरम्पार प्रभु अपरम्पार। अजर अमर अव्यय अविकार॥
ओम् नाम तेरा भगवान्। "असतो मा सदगमय" महान्॥
ओम् नाम तेरा भगवान्। "तमसो ज्योतिर्गमय, महान्॥
ओम् नाम तेरा भगवान्। "मृत्योरमृतं गमय," महान्॥
अजर अमर अव्यय अविकार। परम ब्रह्म प्रभु अपरम्पार॥
अपरम्पार प्रभु अपरम्पार। अजर अमर अव्यय अविकार॥
देव, दयालो, कृपानिधान। दुरित विनाश करो भगवान्॥
देव, दयालो, कृपानिधान। भद्र-विकास करो भगवान्॥
देव दयालो, कृपानिधान। सत्य प्रकाश करो भगवान्॥
अजर अमर अव्यय अविकार। परम ब्रह्म प्रभु अपरम्पार॥
अपरम्पार प्रभु - अपरम्पार। अजर अमर अव्यय अबिकार॥
ओम् नाम तेरा भगवान्। हरो पाप हरि दो निज ध्यान॥
ओम् नाम तेरा भगवान्। दिव्य भक्ति का दो वरदान॥
ओम् नाम तेरा भगवान्। अखिल विश्व का हो कल्याण॥



गीत नं० १६३

(तर्ज :—विश्वपति जगदीश तुम तेरा ही ओम नाम है)

आज का दिन सुहावना, ईश का धन्यवाद है।
मंगल-गान गा रहे, ईश का धन्यवाद है॥
मन में अपार हर्ष है, हुआ जो संस्कार है।
श्रद्धा से आज हम करें, ईश का धन्यवाद है॥
वैदिक विधि से यज्ञ की, सारी क्रिया सफल हुई।
भीनी सुगन्धि आ रही, ईश का धन्यवाद है॥
मित्र बधाई दे रहे. मीठे वचन सुना रहे।
मिल परिवार कर रहा, ईश का धन्यवाद है॥
तेरी कृपा से हे प्रभु, स्वस्थ रहें नीरोग हों।
गाते रहें इसी तरह, ईश का धन्यवाद है॥
"पाल" दया है दीखती, कण-कण में भगवान की।
पक्षी गगन में गा रहे, ईश का धन्यवाद है॥



गीत नं० १६४

(तर्ज :—भगवान हमें सद्‌बुद्धि दो)

प्रभुवर से यही वर हम मांगें, आदर्श गृहस्थ हमारा हो।
प्रभु-भक्ति से भरपूर सदा, परिवार दयामय सारा हो॥
न पाप प्रेरणा हो मन में, नव जीवन व्याप्त रहे तन में।
दुख संकट में हे परमेश्वर, बस तेरा एक सहारा हो॥
विद्वानों का अनुराग रहे, जीवन में तप व त्याग रहे।
वैदिक आदर्शों का मन में, पावन उज्ज्वल उजियारा हो॥
भाई भाई में प्यार रहे, न बैर-विरोध विचार रहे।
पति-पत्नि के मन में बहती, दाम्पत्य प्रेम की धारा हो॥

कर्त्तव्य परायण जीवन हो, परहित अर्पित तन मन धन हो।
प्रिय भारत का कण कण हमको, प्राणों से बढ़कर प्यारा हो॥
उपलब्ध हमें शुभ योग रहें, हम हृष्टपुष्ट नीरोग रहें।
अपने चंचल मन को जीता, हमने संयम के द्वारा हो॥
है परम पिता का पुत्र वही, उसका ही जीवन धन्य हुआ।
निज धर्म की रक्षा में जिसने, अपना प्रिय जीवन वारा हो॥
वह परम मांगलिक दिन होगा, सौभाग्य-सुमन खिल जाएगा।
यदि जगदीश्वर के चिन्तन में, तन्मय मन "पाल" तुम्हारा हो॥



गीत नं० १६५

(तर्ज :—विश्वपति के ध्यान में जिस ने लगाई हो लगन)

विश्वपति का ध्यान धर, मंगल-गान गाइये।
परम पिता का आज मिल, शुभ वरदान पाइये॥
बोलो सभी है धन्यवाद, प्यारे प्रभु जगदीश का।
पावन पवित्र ओं को, अन्तःकरण में ध्याइये॥

यदि है कामना कि हो, महा सुखों की प्राप्ति।
सच्चिदानन्द ब्रह्म की, गोद में बैठ जाइये॥
छाई यहाँ प्रसन्नता, हर्षित सभी के हैं हृदय।
हुआ है संस्कार जो, उस की खुशी मनाइये॥

जिसने दिखाई यह घड़ी, उल्लास व खुशी भरी।
उसी के धन्यवाद में, अपना मन लगाइये॥
प्रेम भरी ले भावना, "पाल" सभी परिवार को।
देते हुए वधाइयां, सुन्दर गीत गाइये॥



गीत न० १६६

नये गृह या कोठी-प्रवेश के शुभ अवसर पर गाने के लिए।

(तर्ज :—भगवान हमें सद्‌बुद्धि दो)

आनन्द प्रदायक हे भगवन्, तुम मंगलमय अविवारी हो।
भक्तों के तुम प्रतिपालक हो, वर-दाता संकटहारी हो ॥
हम सब श्रद्धा से शीश झुका, जगदीश्वर से यह वर मांगें।
यह भवन-प्रवेश का पावत दिन, सुखदायक मंगलकारी हो ॥
बहनें व भाई प्यार भरे, शब्दों में बधाई देते हैं।
सब मित्रों का यह मधुर मिलन, उल्लास भरा सुखकारी हो ॥
सद्‌भाव से सब रहना सीखो, मर्यादित जीवन हो सबके।
छोटों को बड़ों का स्नेह मिले, जो जीवन भर हितकारी हो ॥
इस शुभ परिवार के अंग सभी, हंसते ही हुए दिखलाई दें।
गृह पत्नि पति तुम फूलो फलो, प्रभु-भक्त बनो सुविचारी हो ॥
परिवार जनों को मुबारिक हो, जगदीश सदैव सहायक हो।
हम सबका नम्र निवेदन है, रहना बन पर उपकारी हो ॥



गीत नं० १६७

(पतिकुल को जाती हुई पुत्री को पिता की शिक्षा)

(तर्ज :—गम दिये मुस्तकिल०)

बेटी सुन ध्यान से, कर मनन ज्ञान से, जो सुहानी—
बात शिक्षा की तुझ को सुनानी ॥
तेरी बहनें विदा दे रही हैं,
स्नेह अपना तुझे दे रही हैं।
(भाई तेरे विदा दे रहे हैं,
स्नेह अपना तुझे दे रहे हैं।)

जा पति-संग जा, अटल सौभाग्य पा, मेरी रानी ।।
बात शिक्षा की तुझ को सुनानी ।।

ससुर-घर स्वर्ग जैसा बनाना,
सास-चरणों में नित सिर झुकाना ।
सब को मोह लेगी यूं, अगर बोलेगी तूं मधुर वाणी ।
बात शिक्षा की तुझ को सुनानी ।।

फूल आशीष के आ रहे हैं,
प्रेम से मिल सभी गा रहे है ।*
तूं जहां भी रहे, सुख की नदियां बहें, हे सयानी ।।
बात शिक्षा की तुझ को सुनानी ।।

नम्रता, प्यार के साथ रहना,
शील लज्जा है नारी का गहना ।
पाप कर्मों से डर, चाल चल सोच कर-लाभ हानि ।
बात शिक्षा की तुझ को सुनानी ।।

लाज परिवार की हाथ तेरे,
सब की आशीष है साथ तेरे ।
जा नया घर बसा, रहना बन के सदा ज्ञानी दानी ।।
बात शिक्षा की तुम को सुनानी ।।



* यदि किसी लड़की के पिता स्वर्गवासी हो चुके हुए हों, तो इस पंक्ति को यूं भी बदला जा सकता है :—
"स्वर्ग से तव पिता गा रहे हैं ।"

गीत नं० १६८

पतिकुल को जाती पुत्री को उपदेश

(तर्ज :—वगदी रावी विच रेत नहियों)

वगदी गंगा दा संदेश लैजा।
सौरे चल्ली धिये उपदेश लैजा।।

मिट्ठा बोली मधुर सुर तान लैजा।
सब नूं जितन दा ए ज्ञान लैजा।।

न्यूं के रहना मधुर व्यवहार लैजा।
पति-सेवा सच्चा श्रृंगार लैजा।।

भारत माता दा उत्कर्ष लैजा।
सीता माता दा आदर्श लैजा।।

सति सावित्री दा सार लैजा।
रानी दमयन्ती दा प्यार लैजा।।

पद्मनी वाला तूं तप तेज लैजा।
रानी झांसी दी हथ तेग लैजा।।

"पाल" पल्ले बन ए ज्ञान लैजा।
पेके पासे दा वरदान लैजा।।



गीत १६९

शोक व्यथा गीत

दुनिया में आना जाना ही होता,
किस लिये मूरख विरथा तूं रोता।
ईश्वर के आगे सीस झुका दे,
मत तूं लगा दुःख-सागर में गोता।।

कण कण में जो ईश्वर व्यापक,
विश्व-व्यवस्था का वह नियामक।
जीव-विवश परमेश्वर के आगे,
जैसा वह चाहे वैसा ही होता ॥

जीव स्वकर्मों का फल पाता,
जन्म मरण है हाथ विधाता।
मन को उदासी में उलझा कर—
समय निरर्थक काहे तू खोता ॥

धर्म की बात समझ मेरे भाई,
साथ चलेगी नेक कमाई।
धन दौलत तो साथ न जाये,
किस लिए पाप का बोझा तूं ढ़ोता ॥

पाप गिराते हैं दुर्गत में,
देख सके तो देख जगत में।
मार धड़ा धड़ पड़ती है कैसी—
गाड़ी के आगे बैल जो जाता ॥

ऐसे सदा शुभ कर्म कमाओ,
आये थे रोते तो हंसते जाओ।
"पाल" समझ लो, वही कुछ काटे —
जो कुछ जीव है जीवन में बोता ॥



गीत नं० १७०

(मृत्यु के कारण संतप्त परिवार या शोक-सभा में प्रभु प्रार्थना का गीत)

प्रभो, शोक सन्ताप से मुक्त कर दो।
दुखी दिल में जगदीश्वर शान्ति भर दो॥
दिवंगत को कर याद आंसू निकलते।
यह संत्पत परिवार है शान्त कर दो॥
तुम्हारी व्यवस्था में क्या वश हमारा।
हमें हे पिता धैर्य साहस का वर दो॥
तुम्हें हे जगन्नाथ मस्तक झुकाते।
दुखी आत्मा की कथा नाथ हर दो॥
हृदय वेदना से भरा तलमलाये।
सुशान्ति मिले ज्ञान बुद्धि अगर दो॥
कहे "पाल" विकराल है काल का भय।
प्रणतपाल, करुणा करो धैर्य बल दो॥



गीत नं० १७१

(दिवंगत माता पिता की स्मृति में)

(तर्ज :—कृपासिंधो कृपा करना, दया सागर दया करना)

हृदय में वेदना भारी, पिता जी याद आये हैं।
करें हम कोशिशें लाखों, न जा सकते भुलाये हैं॥
प्रभु के बाद तो केवल, पिता माता का दरजा है।
हैं जो उपकार उनके वह, न जा सकते गिनाये हैं॥

उन्हें कर याद श्रद्धा से, न क्यों मस्तक झुके अपना ।
कि जिन के अंश से ले जन्म, हम दुनिया में आये हैं ।।

पिता माता की ममता में, भरा जादू विधाता ने ।
इसी ममता ने हम सबके, यहां आंसू गिराये हैं ।।

यह बगीचा उन्हीं के त्याग, तप, बलिदान का फल है ।
सुगन्धित फूल जो इस में, उन्हीं के सब उगाये हैं ।।

जहां भी हों पिता माता, उन्हें अपना नमस्ते है ।
कि जिन की गोद में पलकर कई वरदान पाये हैं ।।

यह मंगल-कार्य होवेगा, सफल आशीष से उनकी ।
कि मीठी याद जिनकी "पाल" हम मन में बसाये हैं ।।



गीत नं० १७२

(दिवंगत माता पिता की स्मृति में*)

(तर्ज—गम दिये मुस्तकिल०)

दुख भरी यह घड़ी, वेदना दे बड़ी, दिल दुखाये ।
आज हैं ध्यान में पूज्य आये ।।
पितृ (मातृ) चरणों में सादर नमस्ते,
जो थे कहते, "चलो ठीक रस्ते ।"
उनकी शिक्षा गहें, हम सुखी सब रहें, उन के जाये ।
आज हैं ध्यान से पूज्य आये ।।
जिन जनक जननी से जन्म पाया,
जिन की गोदी में जीवन बिताया ।

* यह गीत लेखक ने अपनी सपुत्री क्षमा के शुभ विवाहावसर पर दिवंगत माता पिता को याद करते हुए लिखा था ।

उनकी पुण्यात्मा, पूज्य परमात्मा, शान्ति पाये।
आज हैं ध्यान में पूज्य आये॥

उनकी है याद हम को सताती,
हो कहाँ पूज्य माता पिता जी।
सारा परिवार ये, आप की याद में, गुनगुनाये।
आज हैं ध्यान में पूज्य आये॥

उन से वंचित हुए हम अभागे,
वंश न चलता विधाता के आगे।
शोक-सागर तरें, याद उनको करें, सिर झुकाये।
आज हैं ध्यान में पूज्य आये॥



गीत नं० १७३

(किसी भी दिवंगत सम्बन्धी की स्मृति में)

(तर्ज :—भगवान् हमें सद्बुद्धि दो)

भगवान् तुम्हारी इच्छा पै, मस्तक है नाथ नवाते हैं।
संताप भरा मन लेकर के हम शरण तुम्हारी आते हैं॥

परिवार दुखी करके बच्चा,* वह सबका प्यारा चला गया।
उसकी बातें कर याद सभी, आँखों से नीर बहाते हैं॥
हे परमेश्वर हे देवेश्वर, भगवान् हमें अब ढारस दो।
न पाकर पास उसे अपने, अब चैन नहीं हम पाते हैं॥

* समयानुकुल "बच्चा" के स्थान पर कुछ भी परिवर्तन किया जा सकता है, जैसे बेटा, भाई, भगिनी, चाचा, मामा इत्यादि।

तेरी इच्छा हो पूर्ण प्रभु, हम विवश, नहीं वश कुछ चलता।
रोते रोते दुख दर्द भरा, यह गीत सभी मिल गाते हैं।।

हम तुम्हें भुलाकर, हो अन्धे, दिन रात कुकर्म किये जाते।
जब पाप का फल आगे आता, फिर रोते और पछताते हैं।।

अल्पज्ञ हैं, हम बालक तेरे, अच्छाई बुराई क्या जानें,
सर्वत्र पिता, प्रेरे तू जिन्हें, पापों से वही बच जाते हैं।।

तेरा था तुझे वह सौंप दिया, हैं मीठी याद बची बाकी।
वह याद हृदय में 'पाल' लिये, अब मन अपना बहलाते हैं।।

———

(च) संध्या हवन सम्बन्धी गीत

गीत नं० १७४

सन्ध्या गीत

(तर्ज :—भगवान् हमें सद्बुद्धि दो)

हम अपना आप करें अर्पण भगवन हमें स्वीकार करो।
अच्छे व बुरे हैं तेरे हैं, भगवन हमें स्वीकार कटो ।।

हम संध्या-वन्दन को बैठ, श्रद्धा निष्ठा का भाव लिये।
हो मन निर्मल, सब का पावन, व्यवहार विचाराचार करो ।।

"शन्नो देवी रभिष्टय, आपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभिस्रवन्तु नः सुख वर्षा जगदाधार करो।।

वागादि इन्द्रियें सबल बन, पापों से यह सब दूर रहे।
"रवं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र", पावनता का संचार करो।।

कर प्राणायाम पवित्र बनूं, चित्त-वृत्ति को एकाग्र करूं।
अघमर्षण से सब पाप मिटें, ऋतु-चिन्तक प्राणाधार करो।।

हम चतुर्दिशा नीचे ऊपर हैं, मनसा परिक्रमा करते।
हम द्वेष भाव से मुक्त रहे, मन पर ऐसा अधिकार करो॥

हे विश्व-उपास्य, उपासक हम, फिर उपस्थान के मंत्र कहें।
तन्मय हो तेरा ध्यान करें, करुणासिन्धो उद्धार करो॥

गायत्री का कर जाप विभो, तव भर्ग का ध्यान लगाते हैं।
हे सविता देव, कृपा करके, सद्बुद्धि का संचार करो॥

हे ईश्वर दयानिधे प्यारे, अब भवत्कृपा से जप द्वारा।
धर्मार्थकाम व मोक्ष सधें, ऐसा जीवन व्यवहार करो॥

हे शम्भु मयोभव हे शंकर, हो नमः मयस्कर नमः तुम्हें।
हे शिव शिवतर हो नमः हमें भवसागर से प्रभु पार करो॥

श्रद्धा भक्ति के पुष्प लिये, सेवा में "पाल', उपस्थित हैं।
हम आत्म-समर्पण करते हैं, स्वीकार व अंगीकार करो।

———

गीत नं० १७५

सन्ध्या गीत

(तर्ज :—हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिये)

सन्ध्या-वन्दन में मुझे रस हे पिता आता रहे।
ईश, मेरा मन पुम्हारे गीत गुण गाता रहे ।।१।।

शान्त वातावरण में शुभ इष्टि प्रीति के लिये।
ध्यान व्यापक देव का आनन्द वरसाता रहे १।।२।।

इन्द्रियें वश में रहें, पावन क्रियाओं में लगे।
प्राण के आयाम से सब रोग दुख जाता रहे २।।३।।

सृष्टि-रचना का सुचिन्तन पाप का मर्षण करे।
मेरा मन तेरे गुणों को, नाथ अपनाता रहे ३।।४।।

पूर्व दक्षिण पश्चिमोत्तर नीचे ऊपर की दिशा।
तेरे दर्शन के लिए मन परिक्रमा करता रहे १।।५।।

हो नमः दिग्-अधिपति व रक्षिता, ईषु-वर्ग को।
द्वेषी नर जगदीश से, कर्मों का फल पाता रहे २।।६।।

नोट :—* यह संध्या-गीत है जिसे सन्ध्योपासना के समय, उपयुक्त मानसिक स्थिति बनाने के लिए सन्ध्या के प्रारम्भ अथवा अन्त में यथारुचि गाना चाहिए। इसमें सन्ध्या-मन्त्रों का भावानुवाद है।

१. इस पद्यांश में सन्ध्या के आचमन-मंत्र का छायानुवाद है।

२. इस पद्यांश में संध्या के इन्द्रिय-स्पर्श, मार्जन तथा प्राणायाम मन्त्रों का भावानुवाद है।

३. इस पद्यांश में "अगमर्षण" मन्त्रों का छायानुवाद है।

मैं उपासक ब्रह्म की, अनुभूति का रस ले रहा।
सर्वदृष्टा देव का, दर्शन मुझे भाता रहे ३॥७॥

सौ बरस से भी अधिक देखूं, सुनूं, बोलूं तथा—
स्वावलम्बी देह सारी आयु हे त्राता रहे ४॥८॥
ओम् रक्षक जगनियन्ता, भूः भुवः स्वः ईश्वर।
जाप गायत्री सुपावन-ज्ञान सिखलाता रहे ५॥९॥
देव सविता, श्रेष्ठ तेरा भर्ग हम धारण करें।
बुद्धियों में प्रेरणा-आलोक तव आता रहे ६॥१०॥
ईश्वर करुणानिधे, जप और संध्या-कर्म से।
चार फल की सिद्धि हो, तेरी दया दाता रहे ७॥११॥

शम्भु शिव शंकर मयस्कर को 'नमस्ते' कर रहे।
"पाल" श्रद्धा भक्ति के सद्-भाव दिखलाता रहे १॥ १२।

१-२. गीत की इन चार पंक्तियों में "मनसापरिक्रमा" मंत्रों का भावानुवाद है।

३. इस पद्यांश में "उपस्थान" के पहले तीन मंत्रों का छायानुवाद है।

४. इस पद्यांश में 'तच्चक्षुर्देवहितं०' मन्त्र का भावानुवाद है।

५-६. गीत की इन चार पंक्तियों में गायत्री-मन्त्र का भावानुवाद है। यथासम्भव देव, सविता, भर्ग इत्यादि मन्त्रस्थ शब्दों को ही प्रयोग में लाया गया है, ताकि हमारी वाणी मन्त्रस्थ शब्दों का ही अधिक से अधिक उच्चारण करे।

७. इस पद्यांश में 'समर्पण' पाठ का छायानुवाद है।

गीत नं० १७६

(तर्ज :—हे पिता जी मैं सेवक तुम्हारा)

हे दयामय मुझे तुम उपासक नाथ अपना बनालो ।
अपनी भक्ति का वरदान दे दो, भक्त वत्सल कृपालो ।।

ओम् हे देव सविता वरेण्यं, भर्ग अपना दिखादो ।
सुप्रकाशित प्रभो बुद्धियें हों, ऐसी शुभ प्रेरणा दो ।।

सन्ध्योपासना में मिले रस, ऐसी वृत्ति बना दो ।
सर्वव्यापक, सुखद, शान्ति-धारा सब दिशा में बहा दो ।।

इन्द्रियों से न हो पाप कोई, व्रतपते व्रत निभा दो ।
प्राण-आयाम से प्राण मेरे, शक्ति शाली बना दो ।।

---

१. इस पद्यांश में संध्या के अन्तिम मन्त्र 'नमस्कार मन्त्र' का भावानुवाद है और यथासम्भव मन्त्रस्थ शब्दों को ही रखा गया है ताकि अधिक से अधिक मन्त्रानुकूल वातावरण बना रहे । अन्तिम पंक्ति में "पाल" के स्थान पर "भक्त" शब्द का प्रयोग भी यथारुचि किया जा सकता है ।

* गीत सं० १७६ एक विशेष प्रयोजन के लिए है । वैदिक सन्ध्यान्तर्गत बारहवीं क्रिया है—'गायत्र्यादि मन्त्रों का अर्थ विचार पूर्वक परमेश्वर की स्तुति अर्थात् परमेश्वर के गुण और उपकार का ध्यान कर पश्चात् प्रार्थना करें ।"—सन्ध्या करते समय प्रायः यह क्रिया उपेक्षित रहती है । इसी की पूर्ति के लिये यह गीत रचा गया है कि सन्ध्योपासक सज्जन यदि चाहें तो सन्ध्या करते समय बारहवीं क्रिया का स्थल आने पर इस गीत से इस क्रिया का सम्पादन कर लें ।

कृत तथा सत्य का हे प्रकाशक, तेरे तप से उदय है।
सृष्टिकर्त्ता सकल विश्व-रचना, तेरे नियमों का फल है।।

प्रलय पीछे यथापूर्व तूने, विविध रचना रचाई।
गगन में सूर्याचन्द्र की शुभ दीप-माला सजाई।।

तेरे चिन्तन में रस ले रहा हूं, हे वशी हे विधाना।
तेरी रचना को कर याद भगवन्, पाप वृत्ति मिटाता।।

पाप कर्मों, दुरित, दुर्गुणों से देव मुझको बचालो।
मैं नमस्ते करूं करुणासिन्धो, दीनबन्दो दयालो।।



गीत नं० १७७

(सगुणोपासना)

(तर्ज :—पितु मात सहायक स्वामी सखा तुम ही इक नाथ हमारे हो)

पालक, व्यापक, जग-उत्पादक, धारक का ध्यान लगाते हैं।
अन्तर्यामी सब के स्वामी, विभु ज्ञानी के गुण गाते हैं।।

---

* गीत संख्या १७५ और १७६ के समान ही गीत संख्या १७७ तथा गीत संख्या १७८ भी विशेष प्रयोजनार्थ हैं। संध्या की तेरहवीं क्रिया के सम्बन्ध में क्रिया-पद्धति में उल्लेख है :—'तदन्तर ईश्वर की उपासना करे सो दो प्रकार की है। एक सगुण और दूसरी निर्गुण।' सन्ध्या करते समय यह क्रिया भी प्रायः उपेक्षित रहती है। कई जिज्ञासु ऐसी जिज्ञासा प्रकट करते हैं कि सर्वसाधारण लोग इस क्रिया का सम्पादन किस प्रकार से करें। इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये गीत संख्या १७७ तथा १७८ 'सगुणोपासना' तथा 'निर्गुणोपासना' शीर्षक से रचे गये हैं, ताकि सन्ध्या की साधना में यह स्थल आने पर सुविधानुसार इन गीतों से काम लिया जा सके।

सुख-सागर, सत्य, सनातन से सब भक्ति-सुधा-रस पाते हैं।
हे नाथ, उपासक हम तेरे, श्रद्धा से शीश झुकाते हैं ।।
प्रभु, प्रेरक, पावन, चेतन के चिन्तन में चित्त लगाते हैं।
मंगल-मय, दाता, परम पिता का गौरव-ज्ञान सुनाते हैं ।।
करुणाकार की कर कीर्ति-कथा, अतिशय आनन्द मनाते हैं।
हे नाथ, उपासक हम तेरे, श्रद्धा से शीश झुकाते हैं ।।



गीत नं० १७८

(निर्गुणोपासना)

अनुपम, अविनाशी, अजर, अमर, अविचल का ध्यान लगाते हैं।
अविकार, अनन्त, अनादि, अज, अघनाशक के गुण गाते हैं ।।
अव्रण, अव्यय, आकार रहित, सब वेद उसे बतलाते हैं।
हे अभय, उपासक हम तेरे, श्रद्धा से शीश झुकाते हैं ।।
अक्लेद्य, अछेद्य, अपरिमित के चिन्तन में चित्त लगाते हैं।
निस्सीम, अनूप, अरूप, कभी बन्धन में नहीं जो आते हैं ।।
निष्पाप, अपार, अभौतिक को न अंग कभी छू पाते हैं।
हे अभय, उपासक हम तेरे, श्रद्धा से शीश झुकाते हैं ।।



गीत नं० १७९

।। गायत्री महिमा ।।

सदा सब करते रहो जी प्यारो गायत्री का जाप।
गायत्री है पावन माता, वरदा वेद बताया।

इस के द्वारा ऋषि मुनियों ने परमेश्वर को पाया।
सदा सब करते रहो जी, प्यारो० ॥

ओम् ईश का श्रेष्ठ नाम है, भूः है प्राणाधार।
भुवः विनाशक दुःख-जाल का, स्वः सब सुख-आगार।
सदा सब करते रहो जी, प्यारो० ॥

सविता प्रेरक देव हमारा, जिसकी अमृत छाया।
"तत् वरेण्य" वरणीय भर्ग का हम ने ध्यान लगाया।
सदा सब करते रहो जी, प्यारो० ॥

सर्वव्यापक जगन्नियन्ता, विनय करें कर जोड़।
प्रेरक, प्रेरित करो बुद्धियें सदा सुपथ की ओर।
सदा सब करते रहो जी, प्यारो० ॥



गीत नं० १८०

(छ) प्रकीर्ण-गीत

(तर्ज :—सारे जहां से अच्छा हिन्दुस्तां हमारा)

अभिमान से कहेंगे हिन्दुस्तान हमारा।
प्राणों से भी अधिक है भारत हमें प्यारा ॥

सुख सम्पदा सदा से इस देश में समाई।
भारत धरा-पटल पर है स्वर्ग का नजारा ॥

विद्या कला सुशिक्षा शुभ सभ्यता हमारी।
था सीखता यहीं से प्राचीन विश्व सारा ॥

पैदा यहीं हुए थे श्रीराम भीम अर्जुन।
खेला इसी धरा पर था नन्द का दुलारा ॥

उस चन्द्रगुप्त की हम सन्तान हिन्दु सारे।
यूनानियों को रण में जिस वीर ने पछाड़ा ॥
बन्दा तथा शिवा का बहता है रक्त हम में।
तोड़ा कभी जिन्होंने मुगलों का गर्व सारा ॥

हिन्दुत्व से भरे हैं, हिन्दी हमारी भाषा।
आसिन्धु-सिन्धु तक है हिन्दुस्तान हमारा ॥
हम वीर बन रहेंगे हरगिज नहीं डरेंगे।
फिर से चमक उठेगा भारत का अब सितारा ॥

वीरों की पुण्य भूमि नीचों ने पद दलित की।
बदला चुकायेंगे हम शक्ति का ले सहारा ॥
अन्याय से हुआ था भारत का जो विभाजन।
उसको समाप्त करना, संकल्प है हमारा ॥



गीत नं० १८१

(तर्ज :—सार्थक उसी का जन्म है०)

संकट में आज देश है, वीरो उठो उठो उठो।
घर घर की घोर दुर्दशा, वीरो उठो उठो उठो ॥
हुआ स्वराज्य देश में, पर न सुराज्य बन सका।
देश-सुधार के लिये, वीरो उठो उठो उठो ॥
नैतिक पतन की देश में. ऐसी है लहर छा गई।
कोई न इससे बच सका, वीरो उठो उठो उठो ॥
ऊंची है त्याग भावना, तुच्छ है स्वार्थ-साधना।
ऊंचा आदर्श साथ ले, वीरो उठो उठो उठो ॥
सीमा पै चीन, पाक के, शत्रु हैं दनदना रहे।
सोने का अब समय नहीं, वीरो उठो उठो उठो ॥

शक्ति है सूत्र राज्य का, उठते हैं देश शस्त्र से।
चमकेगा भाग्य देश का, वीरो उठो उठो उठो।।
अपनी परम्परा यही, जिंदा रहेंगे शान से।
प्राणों से बढ़ के देश है, वीरो उठो उठो उटो।।
राम व कृष्ण की कथा, देती यही सत्प्रेरणा।
गीता का ग्रन्थ हाथ ले, वीरो उठो उठो उठो।।
अपने आदर्श भक्त सिंह, नेता सुभाष "पाल" हैं।
बन के स्वदेश के व्रती, वीरो उठो उठो उठो।।



गीत नं १८२

(तर्ज :—हर जगह मौजूद है पर वह नजर आता नहीं)

कमर वांधी आज हमने काम करने के लिये।
व्रत लिया है देश का उत्थान करने के लिये।।
दासता के अन्त को इति मानना अति भूल थी।
यह तो अथ था राष्ट्र का निर्माण करने के लिये।।
आज का नैतिक पतन तो पाप है अभिशाप है।
यह गिरावट है हमारे डूब मरने के लिये।।
शान्ति-स्थापन के लिये भी शक्ति-संचय चाहिये।
शस्त्र धारें देश का सब कष्ट हरने के लिये।।
चीन का व पाक का गठजोड़ है, परवाह क्या।
हम सदा तैयार हैं रण में उतरने के लिये।।
वीर-प्रसवा जन्म भूमि का हमें अभिमान है।
हम नहीं पैदा हुए हैं "पाल" डरने के लिये।।



गीत संख्या १८३

हमारे देश में जी, कैसे कैसे बालक जन्मे।

ध्रुव प्रहलाद सम भक्त यहां थे, सुत सम श्रवण कुमार।
ईश तथा पितृ भक्ति में, तजे भोग संसार।।
हमारे देश में जी, कैसे कैसे बालक जन्मे।।

राम भरत सम भ्रातृ-भक्त थे, सेवक सम हनुमान।
थे ब्रह्मचारी भीष्मपितामह, दयानन्द भगवान्।।
हमारे देश में जी, कैसे कैसे बालक जन्मे।।

कर्णार्जुन सम वीर यहां थे, भीम तुल्य बलवान्।
थर थर काँपे धरती, सब जब पकड़े तीर कमान।।
हमारे देश में जी, कैसे कैसे बालक जन्मे।।

कपिल कणाद व्यास सम मुनिवर, जनक तुल्य ऋषिराज।
यहां सत्यवादी थे विलक्षण, हरिश्चन्द्र महाराज।।
हमारे देश में जी कैसे कैसे बालक जन्मे।।

कृष्ण चन्द्र सम नीतिनिपुण, अभिमन्यु सम सन्तान।
हुए यहीं पर पैदा शंकर, गौतम बुद्ध महान्।।
हमारे देश में जी, कैसे कैले बालक जन्मे।।

हुए वीर राणा प्रताप, व बन्दा शिवा समान।
धन्य धन्य थी "पाल" धन्य थी, भारत की सन्तान।।
हमारे देश में जी, कैसे कैसे बालक जन्मे।।



गीत संख्या १८४

हम करते रहें सत्संग सदा, और सुनते रहें वेदों की कथा।
हों दूर दुरित दुख पाप तथा, भगवन् मिट जाये मन की व्यथा।।

पावनमय पिता परमेश्वर हैं, उस को प्यारो गर पाना है।
तो छोड़ो पापों का चिन्तन, छल कपट कुटिलता को सर्वथा ॥
भगवान् हमें बल बुद्धि दो, हम उन्नत मानव बन जावें।
अज्ञान का परदा दूर हटे, दें छोड़ अवैदिक झूठी प्रथा ॥
श्रुति-माता की तूं शरण में आ, आनन्द-विभोर हृदय होगा।
ऐसा निर्मल मन "पाल" बना, गंगा धारा निर्मल है यका ॥



गीत नं० १८५

(तर्ज :- सार्थक उसी का जन्म है०)

भारत के प्राण राम का, आओ करें गुणगान हम।
विजयी महान वीर का, मिल के करें सम्मान हम ॥
मन उल्लास पा रहा, गर्व हृदय में छा रहा।
क्योंकि महान वीरवर राम की हैं सन्तान हम ॥
पालन किया कर्त्तव्य को, राम ने राज्य त्याग कर।
देश हितार्थ स्वार्थ का, आओ करें बलिदान हम ॥
ब्राह्मण, स्वदेश, गाय हित, का व्रत राम ने लिया।
उन्हीं व्रतों पै चल करें, भारत का निर्माण हम ॥
राम समान उच्चतम, मानव कभी हुआ कहीं।
डंके की चोट विश्व से, पूछते साभिमान हम ॥
रावण पै राम ने विजय, पाई बचाया देश था।
आओ करें अखंड फिर, भारत-पाकिस्तान हम ॥
राम की शक्ति-साधना, राम की राष्ट्र-भावना।
जागेगा देश जो करें, राम-गुणों का ध्यान हम ॥
राम की जय बोलना, "पाल" सफल बने, अगर।
धारण करें महान गुण, राघव राम समान हम ॥



गीत नं० १८६

आओ भारत की जय हम पुकारें, प्यारे भारत की जय हो।

(१)

राम तथा कृष्ण के वीर भारत, तेरी जय हो विजय हो।
व्यास कपिलादि के दिव्य भारत, तेरी जय हो विजय हो ।।
बुद्ध दयानन्द के अमर भारत, तेरी जय हो विजय हो।
आओ भारत की जय हम पुकारें, प्यारे भारत की जय हो ।।

(२)

दानवी आसुरी उग्रकर्मा, शत्रु-शक्ति का क्षय हो।
नीचता से भरी शान्ति-नाशक, शत्रु-शक्ति का क्षय हो ।।
पाकिस्तानी तथा चीनियों की, शत्रु-शक्ति का क्षय हो।
आओ भारत की जय हम पुकारें, प्यारे भारत की जय हो ।।

(३)

नाश-संभावना से सताया, विश्व फिर से अभय हो।
मनुजता भद्रता फिर से फूले, दुष्ट-दल में प्रलय हो ।।
आत्मिक-शान्ति-संदेश वाहक, भारती का उदय हो।
"पाल" भारत की जय हम पुकारें, प्यारे भारत की जय हो ।।
आओ भारत की जय हम पुकारें, प्यारे भारत की जय हो ।।



गीत संख्या १८७

(श्री कृष्ण जन्माष्टमी के उपलक्ष्य में) आर्यो

आज का दिन ~~हिन्दुओ~~, यह दे रहा संदेश है।
जिस जगह योगी कृष्ण खेले यही वह देश है ।।

कृष्ण की जय बोल तुम कायर के करते कर्म हो।
कृष्ण भक्तो, कृष्ण को प्यारा न कायर-वेश है ॥

भक्त हैं गोपाल के पर लाज क्यों आती नहीं।
कृष्ण की भूमि पै गायें, कट रहीं पा क्लेश हैं ॥

गीत गीता का सुनाकर, वीरता धारण करो।
प्रण करो फिर से करें अपना अखंडित देश है ॥

देह सब हैं अन्त वाले, आत्मा लेकिन अमर।
दग्ध होती देह, देही मगर रहता शेष है ॥

राष्ट्र-रक्षा के लिये, रणभूमि में आगे बढ़ो।
शत्रुओं का दमन कर दो, कृष्ण का आदेश हैं ॥

मित्रता में भूल जाओ, भेद ऊंच व नीच का।
संस्थाओं का विनाशक, परस्पर का द्वेष है ॥

"पाल" योगी राज की है याद सच्ची तो यही।
हम करें धारण सदा, गीता का जो उपदेश हैं ॥



गीत संख्या १८८

(तर्ज :—धनवानों की दुनिया है यह निर्धन के भगवान)

संगठन में रहना सीखो, कहता वेद पुकार।
आज्ञा दी ऋग्वेदादि में, यही प्रभु कर्त्तार ॥
मिलकर चलना सीखो सारे, एक हो सबकी चाल।
एक सरिस हो सबकी वाणी, मिटें सभी दुःख जाल ॥
ध्येय धारणा एक सभी की, सब का एक विचार।
कहता वेद पुकार ॥

स्नान-स्थान व खान-पान हो, सब का एक समान।
धर्म-कर्म में लगें, एक हों, निर्धन व धनवान ।।
एक केन्द्र पै चक्र चले ज्यों, त्यों जाति इक सार।
कहता वेद पुकार ।।



गीत नं० १८९

कव्वाली

हिन्दु वीरो, होश तुमको अब अगर न आयेगी।
कौम पै काली घटा चारों तरफ छा जायेगी ।।

धर्म, जाति के लिये कुछ कर नहीं सकते अगर—
नौजवानों, फिर जवानी काम किसके आयेगी ।।

तुम शिवा, प्रताप, दुर्गादास की सन्तान हो।
वीर पुरुषों की निडरता तुममें अब कब आयेगी ।।

राजपूतों की तरह सर पै कफन बांधो अगर—
दहल जायेगी यह दुनिया, मुशकिलें टल जायेंगी ।।

ओह मन में, तेज तन में, ले करो हुंकार जो।
तो तुम्हारी जाति की बिगड़ी सभी बन जायेगी ।।

हो चुका आजाद भारत, पर सबल होगा तभी—
फूट की जब भावना सारी मिटा दी जायेगी ।।

वीर पुरुषो वीर बनकर जो रहोगे देश में।
"पाल" फिर तुम देख लेना, गीत दुनिया गायेगी ।।



गीत १९०

(तर्ज :—धनवानों की दुनिया है यह निर्धन के भगवान)

बलवानों की दुनिया है यह देखा सोच विचार।
निर्बल को जग में रहने का न कोई अधिकार॥

बलवाले हैं आगे बढ़ते, भरते हैं बलहीन।
शासन करते हैं बल वाले, निर्बल बनें अधीन॥
भोले, भूल नहीं इस जग में, ऐसा ही व्यवहार।
देखा सोच विचार॥

जाति जो कमजोर रहेगी, उस का नहीं गुजारा।
संकट का इक झोंका आये, मिले न उसे सहारा॥
निर्बलता में हैं दुःख सारे, बल में बड़ी बहार।
देखा सोच विचार॥

बलवानों की दुनिया है यह, देखा सोच विचार॥

गीत नं० १९१

भारत के अतीत की स्मृति

याद आता है गुजरा जमाना, तेरा भारत वह पहला जमाना।
तेरे प्यारे दुलारे कहां हैं?
तेरे ऋषि और योगी कहां हैं?
तेरे अभिमन्यु लव कुश कहां हैं?
है कहां तेरा गौरव पुराना॥
याद आता है गुजरा जमाना, तेरा भारत वह पहला जमाना॥

याद आते पुराने नजारे,
पुत्र तज राज बनको सिधारे।
भाई ऐश्वर्य पै लात मारे,
साधना-साथ जीवन बिताना ॥
याद आता है गुजरा जमाना, प्यारे भारत वह पहला जमाना ॥

सारी आयु रहा ब्रह्मचारी,
भीष्म योद्धा, प्रतिज्ञा न टारी।
भीम अर्जुन महा धनुर्धारी,
कृष्ण का दिव्य गीता सुनाना ॥
याद आता है गुजरा जमाना, प्यारे भारत वह पहला जमाना ॥

तेरे वह सब तपोवन कहाँ हैं?
व्यास नारद तपोधन कहाँ हैं?
"पाल" तेरा वह गो-धन कहाँ है?
याद आता है गुजरा जमाना, तेरा भारत वह पहला जमाना ॥



गीत नं० १६२

प्रभु-कीर्तन गीत

(तर्ज :—श्री कृष्ण गोबिन्द हरे मुरारी)

ओं भूर्भुवः स्वः जगदीश दाता।
हे नाथ नारायण मुक्ति-दाता ॥
ओं भूर्भुवः स्वः निराकार त्राता।
सद्‌बुद्धि दो देव व्यापक विधाता ॥

ओं भूर्भुवः स्वयंभू कृपालो।
हमें श्रेय-पथ, नाथ, दिखला दयालो ।।

ओं भूर्भुवः स्वः कल्याणमस्तु।
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।।
ओं भूर्भुवः स्वः सौभाग्यमस्तु।
"यत्पापमशुभं दद्दूरमस्तु" ।।
ओं भूर्भुवः स्वः सदा "पाल" गाओ।
हमें भद्र-दर्शन दयामय दिखाओ ।।



प्रार्थना

गीत नं० १९३

प्रभु विनय है, हो सदय, मुझको अभय कर दीजिए।
भीरुता को दूर कर वर वीरता भर दीजिए ।।
काम कलुषित कामना को कर कृपा कम कीजिए।
देव, दुख-दुबिदा दलो, दुर्गुण दबा सब दीजिए ।। १ ।।

तुङ्ग शृंगों सी निडरता, शैल सी हो अचलता।
तब दया से नाथ मुझ में हो सलिल सी सरलता ।।
हो धरा सी धीरता बल को वपु में विपुलता।
सुमन सा हो सुमन मेरा मृदु लता सी मृदुलता ।। २ ।।



गोतीतानुभूति–पञ्चक गीत संख्या १९४

(ब्रह्म-दर्शन पञ्चक)

चन्द्र छटा, घन घोर घटा में, नील गगन की सुन्दरता में।
पादप पल्लव पद्म-पुष्प में, तरु-आलिंगित ललित लता में॥
अनिल सलिल में,इन्द्र धनुष में,सरिता की गति विह्वलता में।
देख प्रभु की सुन्दरता को, "पाल" कमल की कोमलता में॥ १॥

तुंग शृंग-श्रेणी शैली की गर्वित व्योम-विचुम्बन करती।
मेघ बरस देते जल-धारा, जलधि-उदर जो रहती भरती॥
चण्ड रश्मियें मार्तण्ड की, खूब तपायें अम्बर धरती।
अति अद्भुत माया ईश्वर की'पाल'भक्तजन का मन हरती॥२॥

रंग बिरंगी सुमन सुगन्धि दे मन हर्षित मुग्ध बनाते।
चित्रकार की चतुर कला का दर्शक को दर्शन दिखलाते॥
व्योम-विहारी विहग-वर्ग उस व्यापक के अविरल गुण गाते।
वरद विभु के विरुद-गान में"पाल"भक्त अतिशय सुख पाते॥३॥

कोमल कोमल कलियां कैसी कलित कला का रूप लिये हैं।
कल विकास की मधुर कल्पना के सपनों का ध्यान किये हैं॥
उपकारों का अन्त नहीं कितने प्रभु जी ने दान दिये हैं।
प्रीतम का दर्शन पाने के "पाल" भरोसे भक्त जिये हैं॥४॥

पर-जय तुल्य पराजय जब तक सिद्धि मिले न आत्म-विजय में।
साधु साधना लक्षित होती पर-पीड़न से विरत सदय में॥
एक अलौकिक अन्तर्ज्योति जागृत होती आत्मोदय में।
ज्ञान-गिरागोतीत पिता की "पाल" मिले अनुभूति हृदय में॥५॥



(ज) आरती गीत

गीत नं० १९५

(तर्ज :—हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिए।)

धन्य हों करुणानिधे जगदीश करुणा कीजिये।
दोष-दुख-अघतापहारी, देव, भक्ति दीजिए॥

शम्भु, शिव, दाता, विधाता, प्रभु, पिता परमात्मन्।
नाथ,अनुकम्पा करो, सब दुःख हरो, हों शान्त मन॥

हम सबों का मन विमल, संतुष्ट व निष्पाप हो।
ओम् भज मन,ओम् भज मन अहर्निश यह जाप हो॥

दुःख-विपत्ति में हमें बस आपकी ही शरण हो।
सकल सुख-संयुक्त रहें और शान्त वातावरण हो॥

वेद के सद्ज्ञान का आलोक फैले देश में।
दूध की नदियाँ बहें फिर से हमारे देश में॥

नाथ, फिर इस देश में पैदा कपिल व कणाद हों।
भीम सम सद्वीर हों, प्रभु-भक्त ध्रुव, प्रह्लाद हों॥

सभ्यता का केन्द्र, हे परमेन्द्र भारत वर्ष हो।
विश्व में फैला हुआ, इसका अतुल उत्कर्ष हो॥

देश जाति के प्रति कर्त्तव्य का पालन करें।
बन सदाचारी सदा सद्गुण सभी धारण करें॥

हम सबों की याचना स्वीकार हे महाराज हो।
उन्नति के शिखर पर आसीन आर्य समाज हो॥



गीत संख्या १६६

(तर्ज :—जय जगदीश हरे, पिता जय जगदीश हरे)

जय जय जगत्पिता, ओ३म् जय जय जगत्पिता।
शिव शंकर जगदीश्वर, मंगलमय सविता ॥ ओम् जय० ॥
अजर अमर अविनाशी, अविचल अविकारी।
अतुल अनन्त अगोचर, अनुपम अध-हारी ॥ ओम् जय० ॥
परम ब्रह्म परमेश्वर, शनणागत-त्राता।
सुख-कर्त्ता दुखहर्त्ता, नमो नमः दाता ॥ ओम् जय० ॥
परम कारुणिक ईश्वर, हम सब के स्वामी।
आये शरण तुम्हारी, सर्वान्तर्यामी ॥ ओम् जय० ॥
कोटि चन्द्र रवि तारे, कौन करे गणना।
सरिता सागर नग नभ, अद्भुत तव रचना ॥ ओम् जय० ॥
दूर करो दुख दुर्गुण, भय चिन्ता विपदा।
भक्तों के मन में हो, शिव-संकल्प सदा ॥ ओम् जय० ॥
वर्षा पवन सलिल ऋतु, हों अनुकूल सदा।
चतुर्दिशा में बरसे, सुखमय शान्ति-सुखा ॥ ओम् जय० ॥
सदाचार-सम्पन्न हमारा जीवन हो स्वामी।
बनें सत्य-व्रत-धारी, हे अन्तर्यामी ॥ ओम् जय० ॥
ब्रह्मचर्य से रहें सभी, हों हृष्ट पुष्ट तन से।
व्यसन कुसंस्कारों की, मैल मिटे मन से ॥ ओम् जय० ॥
आज करें यह विनती, हम सब नर नारी।
हरे, हरो हर व्याधि, हे संकट हारी ॥ ओम् जय० ॥
पाप किये जो भारी, कर कर याद डरें।
"पाल" करो, प्रभु, प्रेरित अब नहीं पाप करें ॥ ओम् जय० ॥



संकलित भाग

संध्या (ब्रह्म यज्ञ)

प्रातःकाल शौच, वायु सेवन, दन्त धावन, तेल मर्दन तथा स्नान करके पवित्र मन और एकाग्रचित होकर कम से कम तीन प्राणायाम करें।

निम्न मन्त्र से परमेश्वर की प्रार्थना करके तीन बार आचमन करें :—

ओं शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥

सर्वव्यापक परमेश्वर मनोवांछित सुख और पूर्णानन्द की प्राप्ति के लिए हमको कल्याणकारी हों और हम पर सुख की सब ओर से वृष्टि करे ॥ 1 ॥

इन्द्रिय स्पर्श मन्त्र

ओं वाक् वाक्। ओं प्राणः प्राणः। ओं चक्षुः चक्षुः। ओं श्रोत्रम् श्रोत्रम्। ओं नाभिः। ओं हृदयम्। ओं कंठः। ओं शिरः। ओं बाहुभ्यां यशोबलम्। ओं करतलकरपृष्ठे ॥

हे अन्तर्यामिन्! मैं प्रार्थना करता हूं कि मैं जान बूझकर अपनी ज्ञान-कर्ण इन्द्रियों से, अर्थात् वाक्, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, हृदय, कण्ठ, शिर, बाहु, करतल और करपृष्ठ आदि से कदापि पाप न करूं, ऐसी कृपा करो।

मार्जन मन्त्र

ओं भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः। ओं स्वः पुनातु कण्ठे। ओं महः पुनातु हृदये।

ओं जनः पुनातु नाभ्याम् । ओं तपः पुनातु पादयोः । ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि । ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र ।।

हे दयानिधे ! आप मेरी इन्द्रियों, अर्थात् शिर, नेत्र, कण्ठ, हृदय: नाभि पांव आदि को पवित्र करके बलवान् और यशस्वी कीजिए।

प्राणायाम मन्त्र

ओं भूः । ओं भुवः । ओं स्वः । ओं महः । ओं जनः । ओं तपः ओं सत्यम् ।

प्राणस्वरूप, प्राणों से प्यारा, दुःख दूर करने हारा, सर्वव्यापक, आनन्द स्वरूप, सबसे बड़ा, सबका (जनक) पिता, दुष्टों को सतापकारी सबके जनाने वाला और अविनाशी प्रभु है।

अघमर्षण मन्त्र

ओम् ऋतं च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ।।१।।

परमेश्वर के अनन्त सामर्थ्य से वेद-विद्या और कार्यरूप प्रकृति उत्पन्न हुई। उसी के सामर्थ्य से प्रलय और उसी के सामर्थ्य से जल के समुद्र उत्पन्न हुए ।। 1 ।।

ओं समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत ।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ।।२।।

जगत् को वश में रखने वाले परमेश्वर ने अपने सहज स्वभाव से जल-कोष से पीछे काल विभाग — वर्ष दिन और रात्रि—रचे ।। 2 ।।

ओं सूर्य्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् ।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ।।३।।

विधाता ने पहले कल्प जैसे सूर्य्य, चन्द्र, द्यु लोक, पृथ्वीलोक और आन्त-रिक्ष, उसमें फिरने वाले सब लोक-लोकान्तर बनाए ।। 3 ।।

पुनः 'शन्नो देवी०' मन्त्र से तीन आचमन करें।

।। मनसा परिक्रमा मन्त्र ।।

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षिताऽऽदित्या इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥१॥

हे सर्वज्ञ परमेश्वर । आप हमारे सम्मुख की ओर विद्यमान हैं, स्वतन्त्र राजा और हमारी रक्षा करने वाले हैं, आपने सूर्य को रचा है जिसकी किरणों द्वारा पृथ्वी पर जीवन आता है। आपके आधिपत्य, रक्षा और जीवनरूपी प्रदान के लिए, प्रभो ! आपको बारम्बार नमस्कार है। जो अज्ञानवश हमसे द्वेष करता है अथवा जिससे हम द्वेष करते हैं, उसे आपके न्यायरूपी सामर्थ्य पर छोड़ देते हैं ॥ 1 ॥

ओं दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नमो इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥

हे परमेश्वर ! आप हमारे दक्षिण की ओर व्यापक है। आप हमारे राजधिराज हैं, और भुजंगादि बिना हड्डी वाले पशुओं से हमारी रक्षा करते हैं, और ज्ञानियों के द्वारा हमें ज्ञान प्रदान करते हैं। आपके आधित्य (आगे पूर्व मन्त्र के अर्थ के समान) ॥ २ ॥

ओ प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षिताऽन्नमिषवः तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥३॥

हे सौन्दर्य के भण्डार ! आप हमारे पृष्ठ की ओर हैं, हमारे महाराज हैं,

बड़े-बड़े हड्डी वाले और विषधारी पशुओं से हमारी रक्षा करते हैं आपके (आगे पूर्ववत्) ॥ 3 ॥

ओम् उदीची दिक् सोमोधिपतिः स्वजो रक्षिताऽशनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥४॥

हे पिता! आप हमारे बाम पार्श्व में व्यापक हैं और हमारे परम ऐश्वर्य-युक्त स्वामी हैं। स्वयम्भू और रक्षक हैं, आप ही बिजली द्वारा रुधिर की गति और प्राणों की रक्षा करते है। आपके...... (आगे पूर्ववत)

ओं ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान्द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥५॥

हे सर्वव्यापक प्रभो! आप हमारे नीचे की ओर के देशों में विद्यमान हैं। आप रंग वाले वृक्षों और बेलों द्वारा हमारे प्राणों की रक्षा करते हैं। आपके (आगे पूर्ववत् ॥ 5 ॥

ओम् ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥६॥

हे महान् प्रभो! आप ऊपर के लोकों में व्यापक, पवित्रात्मा, हमारे स्वामी और रक्षक हैं। आप वर्षा करके हमारी कृषि को सींचते हैं जिससे हमारा जीवन होता है। आपके...(आगे पूर्ववत्) ॥ 6 ॥

उपस्थान मन्त्र

ओम् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥१॥

हे प्रभो ! आप अज्ञान अन्धकार के परे, सुखस्वरूप, प्रलय के पश्चात् रहने वाले, दिव्य गुणों के साथ सर्वत्र विद्यमान देव और हमको जन्म देने वाले हैं, हम आपके उत्तम ज्योतिः स्वरूप को प्राप्त हों।

ओम् उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्य्यम्।

हे जगदीश्वर ! आप सकल ऐश्वर्य के उत्पादक, सर्वत्र, जीवात्मा के प्रकाशक हैं, आपकी महिमा सबको दिखाने के लिए संसार के पदार्थ, पताका का काम करते हैं। जिस प्रकार झण्डियाँ मार्ग दिखलाती हैं उसी प्रकार सबको, सृष्टि- नियम परमेश्वर की प्रतीत कराते हैं ॥ 2 ॥

ओं चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आ प्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य्य आत्मा जगयंतस्तस्थुषस्च स्वाहा ॥

हे स्वामिन् ! इस संसार के समस्त पदार्थ आपको दर्शाते हैं। आप दिव्य पदार्थों के बल हैं। सूर्य चन्द्र, और अग्नि के चक्षु अथवा प्रकाशक हैं। भूमि, आकाश और तदन्तर्गत लोक सब आपके सामर्थ्य में हैं। आप चर-अचर जगत् के उत्पादक और अन्तर्यामी हैं। हे प्रभो ! हम सदैव मन, वाणी और कर्म से सत्य का ग्रहण करें ॥ 3 ॥

ओम् तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतँ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदःशतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ।२।

हे सब के चक्षु ! आप अनादि काल से विद्वानों और संसार के हितार्थ

शुद्ध वर्तमान हैं। प्रभो ! हम आपका ज्ञान सौ वर्ष सुनें, आपके नाम का सौ वर्ष व्याख्यान करें, सौ वर्ष की आयु भर पराधीन न हों और यदि योगाभ्यास के सौ वर्ष से भी अधिक आयु हो तो इसी प्रकार विचारें ॥ 4 ॥

गायत्री मन्त्र

ओम् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

हे प्राण स्वरूप दुःखहर्ता और व्यापक आनन्द के देने वाले प्रभो ! आप सर्वज्ञ और सकल जगत् के उत्पादक हैं। हम आपके उस पूजनीय पापनाशक स्वरूप तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धियों को प्रकाशित करता है। हे पिता ! आपसे हमारी बुद्धि कदापि विमुख न हो। आप हमारी बुद्धियों में सदैव प्रकाशित रहें और हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों में प्रेरित करें, ऐसी प्रार्थना है।

(अथ समर्पण)

हे ईश्वर दयानिधे ! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादि कर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धर्भवेन्नः ॥

हे परमेश्वर दयानिधे ! आपकी कृपा से जपोपासनादि कर्मों को करके हम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि को शीघ्र प्राप्त होवें।

नमस्कार मन्त्र

ओं नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

जो सुख स्वरूप, संसार के उत्तम सुखों का देने वाला, कल्याण कर्ता, मोक्ष स्वरूप धर्म युक्त कामों को ही करने वाला, अपने भक्तों को सुख का देने वाला और धर्म कार्यों में युक्त करने वाला, अत्यन्त मंगल स्वरूप और धार्मिक मनुष्यों को मोक्ष सुख देने वाला है उसको हमारा बारम्बार नमस्कार हो।

॥ओ३म्॥

हवन-मन्त्रा



अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना*

ओइम् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद् भद्रं तन्न आसुव ॥१

यजु: अ० 30 । मंत्र 3 ॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२

यजु: अ० 13 । मंत्र 4 ॥

य आत्मदा बलदायस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवा ।
यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३

यजु: अ० 25 । मंत्र 13 ॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥४

यजु: अ० 23 । मंत्र 3 ॥

---

*इन 8 मन्त्रों के कविता में भावार्थ के लिए इसी पुस्तक का गीत संख्या 114 देखिए ।

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितंतभितँ येन नाकः ।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ५

यजुः अ० 32 । मंत्र 6 ॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।६

ऋ० मं० 10 । सू० 121 । मंत्र 10॥

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यत्र देवा अमृतमान शानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥७

यजुः अ० 32 मंत्र 10 ॥

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥८

यजुः अ० 40 । मंत्र 16



अथ स्वस्तिवाचनम्



अग्निमीड़े पुरोहितंयज्ञस्यदेवमृ त्विजम् । होतारं रत्नधातमम्
स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव । सचस्वा नः स्वस्तये २
ऋ० म० 1 । सू० 1 मन्त्र 1,9 ॥

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः ।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥३
स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः ।
बृहस्पति सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः॥४
विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये ।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥५
स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति ।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वास्ति नो अदिते कृधि ॥६
स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।
पुनर्ददताघ्नता जानता सङ्गमेमहि ॥ ७
ऋ० मं० 5 । 51 ऋ मं 11—15 ॥

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८
ऋ० मं० 7 । सू० 35 । मंत्र 15॥

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः ।
उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्तां अदित्याँ अनुमदा स्वतस्ये९
नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः ।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये
सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम्
तांआ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्यां अदितिं स्वस्तये
को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये १२
येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये१३
य ईशिरे भूवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः ।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ।। १४
भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेंऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम् ।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्ये ।१५।
सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् ।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये ।१६
विश्वेयजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुत
सत्यया बो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अबसे स्वस्तये ।।१७
अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः ।
आरे देवा द्वेषोअस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये ।।१८

अरिष्ट स मर्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरितास्वस्तये १९
यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने ।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ।२०
स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यऽप्सु वृजने स्वर्वति ।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ।२१
स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वस्त्यभि या वाममेति ।
सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा ।२२

ऋ० मं० 10 । सू० 63 । मं० 3—16॥

आइषे त्वोर्ज्जे त्वा देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाअयक्ष्मा मा व स्तेन ईशत माघश ँसो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥२३॥

यजुः अ० 1 । मं० 1 ॥

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतो दब्धासो अपरीतासऽउद्भिद
देवा नो यथा सदमिद्वृधे ऽसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे:२४

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां
देवाना ँ रातिरभि नो निवर्त्तताम् ।

देवाना ँ सख्यमुपसेदिमा वयं
देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥२५

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये २३

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु २७

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवाᳬ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः २८

यजु: अ० 25 । मन्त्र 14, 15, 18, 19, 21 ॥

अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये ।
नि होता सत्सि बर्हिषि ॥२९॥

त्वमग्ने यज्ञानांᳬ होता विश्वेषांᳬ हितः
देवेभिर्मानुषे जने ॥३०॥

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः ।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥ ३१ ॥

अथर्व० कां० 1 । अनु० 1 । सू० 1 । मंत्र 1 ॥

इति स्वस्तिवाचनम् ॥

अथशान्ति प्रकरणम्

शं न इन्द्राग्नो भवतामवोभिः शन्न इन्द्रावरुणा रातहव्या ।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शन्न इन्द्रापूषणा वाजसातौ १
शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शन्नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः
शं नःसत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु । २
शं नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ३
शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः
शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु ।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ।५
शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः ।
शं नः रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह शृणोतु ॥६।
शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं न शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः
शं नः स्वरूणाँ मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वःशम्वस्तु वेदिः ॥७
शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्र प्रदिशो भवन्तु ।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ।८
शं नो अदितर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवतु मरुतः स्वर्काः ।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः९
शन्नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूसो विभातीः ।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः१०

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु ।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शनो दिव्याः पार्थिवाः शनो अप्याः
शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः
शं न ऋभवः सुकृतः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ।। १२
शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः ।
शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपाः । १३

ऋ० म० 7 । सू० 35 । मं० 1—13 ।।

इन्द्रो विश्वस्य राजति । शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ।।
शं नो वातः पवताᳫं शं नस्तपतु सूर्य्यः ।।
शं नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभि वर्षतु ।। १५
अहानि शं भवन्तु नः शᳫं रात्रीः प्रति धीयताम् ।
शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या
शन्न इन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः १६
शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये शंयोरभिस्रवन्तु नः १७
द्यौः शान्ति रन्तरिक्षᳫं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्ति-
रोषधयः शान्ति। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्ति र्ब्रह्म
शान्तिः सर्वᳫंशान्तिशान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि १८
तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं
जीवेम शरदः शतᳫंशृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदःशतम
दीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ।। १९

यजुः अ० 36 । मन्त्र 8, 10—11, 12, 17, 24।।

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकत्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥
येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २१
यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्नऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु २२
येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२३
यस्मिन्नृचः साम यजुꣳषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः
यस्मिꣳश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानाँ तन्मे मन शिवसङ्कल्पमस्तु ।२४
सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२५

यजुः अ० 34 मंत्र 1—6 ॥

स नः पवस्व शगवे शं जनाय शमर्वते । शꣳराजन्नोषधीभ्यः

साम उत्तरार्चिके प्रपा० । मंत्र 1 ॥

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे ।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादभयं नो अस्तु ॥ २७
अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात् ।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥

अथर्व० कां० 19 । सू० 15 । मंत्र 5, 6॥

इति शान्तिप्रकरणम् ॥

"अग्निहोत्रम्"

(1) आचमनमन्त्राः[1]

ओ३म् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥ १ ॥

ओ३म् अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥ २ ॥

ओ३म् सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥ ३ ॥

(2) अंगस्पर्शमन्त्राः[2]

ओ३म् वाङ्‌ म आस्ये ऽस्तु ॥ ओ३म् नसोर्मे प्राणो ऽस्तु ॥

ओ३म् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ॥ ओ३म् कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ॥

ओ३म् बाह्वोर्मे बलमस्तु ॥ ओ३म् ऊर्वोर्मे ओजो ऽस्तु ॥

ओ३म् अरिष्टानि मे अगनि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ॥

(3) अग्न्याधानमन्त्रा[3]

ओं भूर्भुव स्व : ॥

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पथिवीव वरिम्णा ।

तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ।

---

[1] 1 तैत्तिरीय आरण्यक प्र० 10, अनु० 32 ।

2 ,, ,, प्र० 10, अनु० 33 ।

3 मानवगृह्य० प्रथम पुरुष 9 वां खण्ड ।

[2] पारस्कर गृ० काण्ड 1, कण्डिका 3, सू० 25 ।

1 गोभिल गृ० प्र० 1, खं० 1, सू० 11 ॥

2 यजुर्वेद अ० 3, मन्त्र 5 ॥

(४) अग्नि प्रदीप्त करने का मन्त्र

ओं उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳ सृजेथामयं च।

अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥

(५) समिदाधान मन्त्राः

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान्प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम॥१

इस मन्त्र से पहली समिधा

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्।

आस्मिन्हव्या जुहोतन स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥

ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे—इदन्न मम॥२

इन दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा

ओं तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठय स्वाहा॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे—इदन्न मम॥३

इस मन्त्र से तीसरा समिधा

(६) घृताहुति मन्त्र :—(नीचे लिखे मन्त्र से ५ घृताहुति देनी)

ओम् अयंत इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध

1. यजुः अ० १५, मंत्र ५४॥

२. १आश्वलायन गृह्य० १—१०—१२
मन्त्र २, ३, ४, यजुर्वेद अ० ३, मन्त्र १, २, ३

वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम ॥

(७) जल प्रसेचमन्त्राः* (अंजलि में जल लेके वेदि के पूर्व दिशा आदि चारों ओर छिड़कावे)

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व ॥१ इससे पूर्व में ।

ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व ॥२ इससे पश्चिम में ।

ओम् सरस्वत्यनुमन्यस्व ॥३ इससे उत्तर में ।

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय । दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्न पुनातु वाचस्पतिर्वाचन्नः स्वदतु ॥४

इस मन्त्र से वेदि के चारों ओर जल छिड़कावे

(८) आघारावाज्याहुति मंत्रों⁝

ओ३म् अग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये इदन्नमम ॥१

(यज्ञ कुंड के उत्तर भाग अग्नि में आहुति)

ओ३म् सोमाय स्वाहा ॥ इदं सोमाय इदन्नमम ॥

(यज्ञ कुंड के दक्षिण भाग अग्नि में आहुति)

(९) आज्यभागाहुति मन्त्रोः@

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये इदन्नमम ॥

ओ३म् इन्द्राय स्वाहा ॥ इदमिन्द्राय इदन्नमम ॥

* १,२,३ गोभिल गृ० प्र० १—ख० ३—सू० १,२,३ । ४ यजु० ३०, मंत्र १

⁝ यजुर्वेद अ० २२ मंत्र २७, तथा गोभिल गृ० प्र० १—खं० ८ सू०-२४

@ १ यजुर्वेद अ० १८, मन्त्र २८,, २ ,, अ० २२ ,, २७

(१०) महाव्याहृति आहुति मन्त्राः—

ओ३म् भूरग्नये स्वाहा ।। इदमग्नये इदन्नमम ।।

ओ३म् भुवर्वायवे स्वाहा ।। इदवायवे इदन्नमम ।।

ओ३म् स्वरादित्याय स्वाहा ।। इदमादित्याय इदन्नमम ।।

ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्नि वाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ।।

इदमग्नि वाय्वादित्येभ्यः इदन्नमम ।।

(११) स्विष्टकृत आहुति मन्त्रः*

ओ३म् यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम् । अग्निष्ठत्स्विष्टकृद्विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नये स्विष्टकृतेसुहुतहुते सर्व प्रायश्चिताहुतीनां कामानां समर्द्ध-यित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा ।। इदमग्नये स्विष्टकृते इदन्न मम ।। १ ।।

(१२) प्राजापत्याहुति मन्त्रः

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा ।। इदं प्रजापतये इदन्नमम ।।

(यह मन्त्र मन से उच्चारण कर आहुति देना)

(१३) प्रधान होम आहुति मन्त्राः**

ओं भूर्भुव स्व : । अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्ज्जमिषं च नः आरे बाधस्वदुच्छनाँ स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय इदन्नमम ।। १ ।।

---

* शतपथ० 14—9—424; आपस्तम्भ गृह्य० 1—2—7;

** 2, 3, ऋग्वेद मं० 9, सू० 66, मन्त्र 19, 20, 21 ।

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः तमीमहे महागयं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ॥ २ ॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । अग्नेपवस्वस्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ॥ ३ ॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । प्रजापते नत्वदेतान्यन्यो विश्वाजातानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयोरयीणाम् स्वाहा । इदं प्रजापतये इदन्न मम ॥ ४ ॥

(१४) आज्याहुतिमन्त्राः*

ओं त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽवयासिसोष्ठाः । यजिष्ठोवन्हितमः शोशुचानो विश्वाद्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा । इदमग्नि वरुणाभ्याम् इदन्न मम ॥ १ ॥

ओ३म् स त्वन्नो अग्नेऽवमो भवोतीनेदिष्टो अस्या उषसो व्युष्टौ अवयक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृडीकं सुहवो न एधि स्वाहा ॥ इदमग्नि वरुणाभ्याम् इदन्न मम ॥ २ ॥

* 1, 2, = ऋग्वेद मं० 4—सू० 1—मन्त्र 4; 5;
3 = ऋग्-1-25-19 4 = ऋग्-1-24-11
5, = 6, कात्यायन श्रौत० 25—1; 11;
7 = ऋग्वेद म० 1—सू० 24—मन्त्र 15;
8 = यजुर्वेद अ० 5, मन्त्र 3

ओं इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृड़य, त्वामस्युराच के स्वाहा । इदं वरुणाय इदन्न मम ।। ३ ।।

ओ३म् तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेड़मानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्रमोषीः स्वाहा ।। इदं वरुणाय इदन्न मम ।। ४ ।।

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा ।। इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः इदन्न मम ।। ५ ।।

ओं अयाश्चाग्नेऽस्य नभि शस्ति पाश्च सत्य मित्वमयासि । अया नो यज्ञं वहास्पया नो धेहि भेषजं स्वाहा । इदमग्नये अयसे इदन्न मम ।। ६ ।।

ओं उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय । अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा ।। इदं वरुणायाऽऽदित्यायाऽदितये च इदन्न मम ।। ७ ।।

ओं भवतन्नः समनसौ सचेत सावरेपसौ । मा यज्ञं हिंसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा ।। इदं जातवेदोभ्यां इदन्न मम ।। ८ ।।

(१५) प्रातःकालाहुतिमन्त्राः*

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ।।१

ओं सूर्यो वर्च्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ।।२

ओं ज्योतिः सूर्यःसूर्यो ज्योतिः स्वाहा ।।३

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या जुषाणःसूर्योवेतु स्वाहा ।।४

(१५क) सायंकालाहुतिमन्त्राः‡

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ।।१

ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ।।२

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ।।३

(तीसरा मंत्र मन में उच्चारण कर आहुति देनी)

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ।।४

(१६) उभयकालाहुतिमंत्राः@

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा ।। इदमग्नये प्राणाय-इदन्नमम ।।१

ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा ।। इदं वायवेऽपानाय-इदन्न मम ।।२

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा ।। इदमादित्याय व्यानाय इदन्न मम ।।३

---

* यजुर्वेद अ० ३, मंत्र ९।। ‡ यजु० अ० ३ मं १०

@ प्रथम पांच मंत्रों के सम्बन्ध मे "सर्वे मन्त्रास्तैत्तिरीयोपनिषदाद्यैनैकत्रीकृता," (ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका) मन्त्र ६,७,८=यजुर्वेद ३२,१४। ३०,३; । ४०, १६; ।।

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा । इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः इदन्न मम ॥४

ओम् आपो ज्योती रसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरों स्वाहा ॥५

ओ३म् यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते । तया मामद्य मेधया अग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥६

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद्भद्रं तन्न आसुव स्वाहा ॥७

ॐअग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नमउक्ति विधेम स्वाहा ॥८

(१२) पूर्णाहुतिमंत्राः—

ओ३म् सर्वं वै पूर्ण ँ स्वाहा ॥
ओ३म् सर्वं वै पूर्ण ँ स्वाहा ॥
ओ३म् सर्वं वै पूर्ण ँ स्वाहा ॥

इत्यग्निहोत्र विधिः समाप्ता

यज्ञ-प्रार्थना

पूजनीय प्रभो ! हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए ।
छोड़ देव छल कपट को मानसिक बल दीजिए ।।
वेद की बोलें ऋचायें सत्य को धारण करें ।
हर्ष में हों मग्न सारे शोक-सागर से तरें ।।
अश्वमेधादिक रचायें यज्ञ पर उपकार को ।
धर्म मर्यादा चला कर लाभ दें संसार को ।।
नित्य श्रद्धा भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें ।
रोग पीड़ित विश्व के सन्ताप सब हरते रहें ।।
भावना मिट जाय मन से पाप अत्याचार की ।
कामनाएँ पूर्ण होवें यज्ञ से नर नार की ।।
लाभकारी हों हवन हर जीवधारी के लिए ।
वायु जल सर्वत्र हों शुभ गन्ध को धारण किये ।।
स्वार्थ भाव मिटे हमारा प्रेम पथ विस्तार हो ।
'इदन्न मम' का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो ।।
हाथ जोड़ झुकाय मस्तक वन्दना हम कर रहे ।
'नाथ' करुणा रूप करुणा आपकी सब पर रहे ।।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग् भवेत ।।
सब का भला करो भगवान्, सब पर दया करो भगवान् ।
सब पर कृपा करो भगवान्, सबका सब विधि हो कल्याण ।।

हे ईश सब सुखी हों, कोई न हो दुखारी।
सब हों निरोग भगवन्, धनधान्य के भण्डारी॥
सब भद्र भाव देखें, सन्मार्ग के पथिक हों।
दुखिया न कोई होवे, सृष्टि में प्राणधारी॥
हे मेरे परमात्मा सबके रोगों का हो जाए खात्मा।
यह विश्व बने धर्मात्मा, हम बनें पवित्र आत्मा॥

द्विज वेद पढ़ें सुविचार बढ़ें, वल पाय चढ़े सब ऊपर को।
अविरुद्ध रहें ऋजु पन्थ गहें, परिवार कहें वसुधा भर को॥
ध्रुव धर्म धरें, पर दुःख हरें, तन त्याग तरें भवसागर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता हम आर्य करें जगतीभर को
हम आर्य करें अपने घर को॥

असतो मा सद्गमय
तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योरमा अमृतंगमय

हे प्रभो ! हमें असत्य के मार्ग से हटाकर सन्मार्ग की ओर ले जाओ, अविद्यारूपी अन्धकार से विद्या रूपी प्रकाश की ओर ले जाओ और दुःखमय मृत्यु रोग से मोक्ष के अमृत का पान कराओ।

छल कपट कुमार्ग दूर हटा, सन्मार्ग आप दिखा दीजो।
अज्ञान अंधेरा दूर भगाकर, ज्ञान की ज्योति जगा दीजो॥
भय, रोग अरु कष्ट निवार प्रभो, यह जीवन सुखी बना दीजो।
कर जोड़ विनय यह प्रभु करें, भवसागर पार लगा दीजो॥

ओं पूर्णा दर्वि परा पत सुपूर्णा पुनरापत ।
वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्जं शतक्रतो स्वाहा ।।
ओं पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

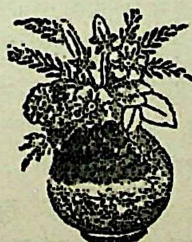


गीत

मिलता है सच्चा सुख केवल, भगवान तुम्हारे चरणों में ।
यही विनती है पल पल छिन-छिन, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।
चाहे बैरी कुल जहान बने या जीवन मुझ पर भार बने ।
या मौत गले का हार बने, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।
चाहे कष्टों ने मुझे घेरा हो, चाहे चारों तरफ अन्धेरा हो ।
पर चित्त न मेरा डगमग हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।
चाहे काँटो पर मुझे चलना हो, चाहे अग्नि में मुझे चलना हो ।
चाहे छोड़ के देश निकलना हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।
मेरी जिव्हा पर तेरा नाम रहे, तेरी याद सुबह और शाम रहे ।
बस काम यह आठों धाम रहे, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ।।
तेरे फूलों से भी प्यार रहे, तेरे काँटों से भी प्यार रहे ।
चाहें सुख में रहूं या दुःख में रहूं, रहे ध्यान तुम्हारे चरणी में ।।

गीत

अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भार तुम्हारे हाथों में।
है जीत तुम्हारे हाथों में, और हार तुम्हारे हाथों में ।।
मैं जग में रहूं तो ऐसे रहूं, ज्यों जल में कमल का फूल रहे।
मेरे गुण दोष समर्पित हों, भगवान तुम्हारे हाथों में ।।
मेरा निश्चय बस एक यही, इक बार तुम्हें पा जाऊं मैं।
अर्पण कर दूं जीवन भर का, सब प्यार तुम्हारे हाथों में ।।
यदि मनुष्य का ही मुझे जन्म मिले, तो तब चरणों का पुजारी बनूं।
इस पूजक का इक-इक रग का, हो तार तुम्हारे हाथों में।
जब-जब संसार का कैदी बनूं, निष्काम भाव से कर्म करूं ।।
फिर अन्त समय में प्राण तजूं, निराकार तुम्हारे हाथों में ।।
मुझ में तुझ में बस भेद यही, मैं नर हूं तुम नारायण हो।
मैं हूं ससार के हाथों में, संसार तुम्हारे हाथों में ।।



परमात्मा के अनन्त नाम

परमात्मा अनन्त है। वह अपार है। उसका कोई भी पारावार नहीं पा सकता। उसके गुण और कर्म भी अनन्त हैं। परमात्मा के इतने नाम हैं कि हमारी निर्बल लेखनी और वाणी में यह सामर्थ्य नहीं कि हम उनका वर्णन कर सकें। स्वामी दयानन्द जी महाराज ने सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में इन अनन्त नामों में से एक सौ नामों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है जिनको सक्षेप से नीचे लिखा जाता है।

'ओ३म्' परमात्मा का निज नाम है। वेदादि सत्शास्त्रों ने इस नाम की बहुत ही महिमा गाई है और 'ओ३म्' नाम के चिन्तन को सर्वोत्तम माना है। इसके अतिरिक्त सच्चिदानन्द स्वरूप, नित्य शुद्ध मुक्त स्वभाव, अनुपम, ब्रह्म, विष्णु, शिव शक्ति, महादेव, इन्द्र, धर्मराज, यम, काल, अगम, अगोचर, अपार सर्वाधीश, सर्वस्वामिन, निर्विकार, परमेश्वर, परमात्मन, पारब्रह्म, सर्वव्यापक, सर्वाधार, अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र, आकाश, सूक्ष्म, अच्छेद, अभेद अजर, अमर, निर्भय, निर्बन्धन, निर्गुण, अमूर्त, विश्वपति, मंगल, बुद्ध, बृहस्पति, अतुल्य, मंगलस्वरूप, ज्ञानस्वरूप. धर्मस्वरूप, तेजस्वरूप, अमृतस्वरूप निराकार, जगदादिकारण, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, जगदीश, सनातन, करुणानिधान सर्वमंगलमय, परम सहायक, सकल, दुःखविनाशक, ज्ञानप्रकाशक, परमेश्वर पापियों के त्राता, निर्मल, सुखदायक सर्वान्तर्यामी, सद्गुरु, परमगुरु आदिरोग रहित, इच्छा रहित, दीनदयाल, परमसुखदायक, कृपालु, दयालु अरूप, अनूप, अनादि, अगाध, अशोक, मोक्षदाता, शत्रु विनाशक, सर्वबलदायक, अन्नदाता, विश्वपालक, प्रजापति, धर्मरक्षक, पक्षपात रहित, न्यायकारी; सकलजगदुत्पादक, अजन्मा' नसनाड़ी के बन्धन से रहित, मति रहित, परमात्मा और प्रभु के अख्संय नाम हैं। जो सब के सब सार्थक हैं।

प्रश्न—परमात्मा की सच्ची पूजा भक्ति या उपासना क्या है ?

उत्तर—ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभाव का चिन्तन करना और उसके अनुकूल अपने आचरण को वनाना ईश्वर-भक्ति है।

प्रश्न—परमात्मा के गुण, कर्म और स्वभाव का चिन्तन क्योंकर होता है ?

उत्तर—उनके विभिन्न नामों के विचार से, क्योंकि इन नामों से परमात्मा की शक्तियां प्रकट होती हैं। जैसे सारे जगत को पैदा करने वाला होने से ब्रह्म, सव जगह व्यापक होने से विष्णु, सुख स्वरूप और कल्याणकारी होने से शिवः ज्ञान स्वरूप और सर्वज्ञ होने से अग्नि; जगत का जीवन धारण से और प्रलय करने से और वलवान होने से वायु, सब ओर से प्रकाशक होने से आकाश, सब फैले हुए जगत को फैलाने वाला होने से पृथ्वी, वड़ों से बड़ा और ब्रह्माण्ड़ों का स्वामी होने से बृहस्पति, सब का पालन करने और परमैश्र्यवान् होने से इन्द्र, जड़ और चेतन जगत का आत्मा प्रकाश स्वरूप और सबको प्रकाश करने वाल होने से सूर्य, पापियों को दण्ड देने और सूक्ष्म परमाणुओं को संयुक्त करने तथा वियुक्त करने से जल, आनन्द स्वरूप और सबको आनन्द देने वाला होने से चन्द्र, मंगल-स्वरूप और सब जीवों के मंगल का कारण होने से मंगल स्वयं बुद्धस्वरूप और सब जीवों के वोध का कारण होने से बुद्ध, अत्यन्त पवित्र और जिसकी संगति से जीव भी पवित्र हो जाते हैं, हो जाने से शुक्र, धैर्यवान होने से शनिश्चर, एकान्त स्वरूप अर्थात जिसके स्वरूप दूसरा पदार्थ संयुक्त नही जो दुष्टों को छोड़ने वाला है इसलिए राहु, सब जगत का निवास स्थान सब रोगों सहित और मुक्ति की इच्छा करने वालों को मुक्ति देता है और सब रोगों से छुड़ाता है इसलिए केतु, सारे जगत् का वर्तमान रूप में लाने और वनाने के योग्य होने के कारण शक्ति, धर्मस्वरूप अधर्म से रहित होने के कारण धर्मराज, न्यायधीश और सब कर्मों का फल देने से यम, ब्रह्माण्ड

की सब वस्तुओं और जीवन को हनन करने से काल कहलाता है। इस प्रकार परमात्मा के अनेक नाम हैं जिनका वर्णन ऋषियों मुनियों ने अपनी रचित पुस्तकों में किया है।

प्रभु के भिन्न-भिन्न नामों के विचार से उनका चिन्तन होता है। परन्तु इस चिन्तन के साथ ही वैदिक धर्म के अनुसार प्रभु के इन गुणों को जिनका गुणवाचक नामों में निर्देश किया गया हैं अपने जीवन में ढालना आवश्यक है और यही वैदिक भक्ति के वास्तविक स्वरूप हैं। भक्त प्रार्थना में परमात्मा को न्यायकारी, पक्षपात रहित अभय आदि कहता है परन्तु अपने आचरण से वह अन्याय, पक्षपात और भीरुता आदि का परिचय देता हैं, तो उसकी प्रार्थना निष्फल हैं, और वह भक्त कहलाने का अधिकारी नहीं, प्रभु के गुणों को चिन्तन करके उनका जीवन में ढालना ही वैदिक भक्ति हैं। प्रार्थना इसी भक्ति को लक्ष्य में रखकर के करने से सार्थक हो सकती हैं। प्रभु भक्तों को सर्वदा इसे दृष्टि में रखना चाहिए।

आज मतवादि लोग वैदिक भक्ति के स्वरूप को भूलकर केवल नाम रटन को ही भक्ति मान रहे हैं। महर्षि दयानन्द इसे भक्ति नहीं कहते। उन्होंने लिखा है जैसे गुड़-गुड़ कहने से मुंह मीठा नहीं हो जाता वैसे ही नाम के केवल रटने से कुछ नही बनता, जब तक अर्थ की भावना से चिन्तन या विचार न किया जाये और फिर उसको अपने जीवन में न ढाला जाये। यदि आज के दृष्टिकोण से संसार ईश्वर भक्ति करने लगे तो दुःख क्लेश, अशान्ति, रोग और शोक दूर होवें।



प्रार्थना १

ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥ (यजु० ३६ मं: ३)

ओंकार प्रभु तेरा नाम, गुण गावे संसार तमाम.
प्राणस्वरूप प्राणों से प्यारा, दूर दुःख सब करने हारा।
सुख स्वरूप सुखों का दाता, अन्त न कोई तेरा पाता,
सारे जगत का पैदा कर्ता, सबसे उत्तम पाप का हरता।
हे ईश्वर ! हम तुझे ध्यावें, पाप कर्म पास न जावें.
बुद्धि करो हमारी उज्जवल. जीवन होवे हमारा निर्मल।

हे सर्वरक्षक ! प्राण स्वरूप ! दुःख विनाशक ! सुखस्वरूप प्रभो आप हमें प्राणों से प्यारे हैं। हमारे प्राणाधार और प्राणनाथ हैं। आप दुर्गुणनाशक, सुखदाता और आनन्दप्रदाता हैं। हे दीनबन्धो ! दीनदयाल ! दयामय परमात्मन् ! आप अपनी असीम कृपा से हर समय और हर प्रकार से हमारी रक्षा करते हैं। जब हम सो जाते हैं तो आप ही हमारे प्राणों के सहायक और रक्षक होते हैं। जागृत अवस्था में भी आप हर प्रकार से हमारी सहायता करते हैं। चलते फिरते, उठते बैठते, हर अवस्था में आप की दया का हाथ हमारे सिरों पर रहता है। आप ही हमारे जीवनाधार हैं। आप सर्वत्र अपने सेवकों के दुःखों को दूर करते और सुख प्रदान करते हैं। आपके भक्तों को न दुःख सताता है न क्लेश होता है। वह न कंगाल होते हैं और न पीड़ा सहन करते हैं। वह न दुःखों से घबराते और न हीं सुखों पर इतराते हैं क्योंकि वे प्रत्येक दशा और अवस्था में अपने आपको आपके कृपाधन से मालामाल पाते हैं। आप प्रत्येक स्थान में और प्रत्येक समय में विद्यमान हैं। आप मान वाले और ज्ञान वाले हैं। आप हमारे हृदय के भावों को जानते हैं। हमारा कोई भी भेद आपसे छिपा नहीं है।

आप सर्वोत्तम शुद्ध पवित्र हैं। इसलिए हमारे जीवनों को भी शुद्ध निष्पाप और पवित्र बनाइये। आप सकल शुभ गुणों की खान है। हमें भी शुभ गुण प्रदान कीजिये। भगवन् ! ऐसी कृपा करो कि हम सर्वदा प्रतिदिन आपके गुणों का ध्यान करें, उनसे प्रीति लगायें और जीवन में धारण करें। हम दोनों काल दिल खोलकर आपसे वार्तालाप करें।

हे जगन्माता, जगत की जननी ! हम आपकी पवित्र गोद में प्रतिदिन बैठा करें। हम कभी भी पाप के कीचड़ से अपने मनुष्य रूपी चोले को गन्दा न करें, बल्कि पुण्य कर्मों से उसको निष्पाप और निर्मल बनाये रखें। हमारा मन आपकी आज्ञा का पालन करने वाला और शुभ कर्मों में रुचि रखने वाला हो। हे बुद्धिदाता ! आप हमें विवेकशील. विद्याप्रेमी और धारणावती मेधा बुद्धि प्रदान करें। आप हमें बुद्धि दे ताकि हम अपने आपको पापों की ठोकर से बचा सकें। धर्माधर्म और झूठ को पहचान सकें। विद्या और अविद्या का अन्तर जान सकें और निश्चयात्मक होकर सत्य और विद्या को ग्रहण कर सकें। इससे हमारा मनुष्य जीवन सफल होगा और हमारी कीर्ति और यश संसार में फैलेगा।

दयालु पिता। हमारी बुद्धि सर्वदा स्वच्छ और पवित्र रहे। असत्य, अविद्या, अन्धकार और अज्ञान से बच कर हम सत्य, विद्या, प्रकाश और ज्ञान की ओर निरन्तर बढ़ते चलें। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्ध के अपने जीवन लक्ष्य को कभी न भूलें, और आपके सच्चे अमृत आर्यपुत्र बन करके इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए यत्नवान रहें। यही आपकी पवित्र सेवा में हमारी प्रार्थना है, स्वीकार करो, स्वीकार करो।

ओ३म् शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

प्रार्थना २

ओं यां मेधादेवगणाः पितरश्चोपासते। तयाँ मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु ॥ (यजु २३ मं १४)

ज्ञानवान मोहे कीजिये जगदीश्वर भगवान।
बिना ज्ञान के हे प्रभो। मिटे न तम अज्ञान।
जिस बुद्धि की कामना करते हैं विद्वान।
बुद्धिदाता दीजिए वह बुद्धि मोहे दान।
बुद्धि दो मोहे इसलिए करूं वेद प्रचार।
अपना जीवन शुद्ध हो लगत का करूं उद्धार।

दयामय भगवान जिस प्रकार सूर्य के बिना आंख व्यर्थ है इस प्रकार ज्ञान के बिना बुद्धि निकंम्मी है और बुद्धिहीन मनुष्य का जीवन व्यर्थ है। इसलिए ज्ञान के भण्डार। आप हमको नाना प्रकार की विद्या सीखने का वल प्रदान करें ताकि हमारी बुद्धि निर्मल हो और हम अनेक पापों से रहित हों। आप उच्च हैं। हमें भी इस लोक में ऊंचा पद प्रदान करें, हमारी विद्या महान हों सामर्थ्य महान् हों, चतुराई महान हो। धैर्य महान हो। धन और सुख सम्पति महान हो, शरीर व आत्मा बलवान हो ताकि हम को किसी भी दुष्ट का भय न रहे। हमारा जीवन सदा ही निर्दोष और धर्मयुक्त हो। हम प्राणीमात्र के शुभ चिन्तक हों हमारे हाथ से किसी की बुराई न हो। किसी को दुःख प्राप्त न हो। हम दूसरों के दुःख को दूर करने वाले और अविद्या अन्धकार को मिटाने वाले हों।

परमदेव ! आप ही हमारे परम मित्र हों। हमको सर्वदा सुख देने वाले हों। हमको दुष्टों के अत्याचारों से बचायें रखें हमारे अन्दर बुरी भवनाएं उत्पन्न न हों। हमारे सम्बन्धी और रिश्तेदार पापी और मूर्ख न हों। हमारे पड़ोसी और मित्र धर्मपरायण और शुभ विचार वाले हों। हमारे नगर और ग्राम अविद्या और अन्धकार को मिटाकर विद्या के प्रकाश से प्रकाशित हों। हमारे देशवासी गुणवान, और बुद्धिमान हों, आप हमको स्थिर रहने वाले

सुख प्रदान कीजिए, हमको उत्तम बुद्धि और पराक्रम प्रदान कीजिये। हे ज्ञानस्वरूप अग्ने ! परमात्मन् ! जिस ज्ञानवती और धारणावती बुद्धि को प्राप्त करके विद्वान लोग पूज्य बनते हैं। जिस ज्ञान से वे संसार में चमकते हैं ! जिस विचित्र मेधा को प्राप्त करके वे अपना नाम उज्जवल कर जाते हैं। मेधा और सद्बुद्धि हमें प्रदान कीजिये। हे आदि गुरु ! सत्यगुर देव ! धर्म के मर्म को जानने वाले अनुभवी महात्मा जिस बुद्धि की उपासना करते हैं, जिस विचारशील बुद्धि को वे धारण करते हैं, कृपा करके वह बुद्धि हमें भी प्राप्त कराइये।

प्रभो ! ऐसी कृपा करो कि हम यथार्थ ज्ञान द्वारा सत्य और झूठ का, नित्य और अनित्य का, पवित्र और अपवित्र का, ज्ञान और अज्ञान का, बन्धन और मोक्ष का, जड़ और चेतन का कर्त्तव्य और त्याग का भेद भली भांति जान सकें और सब कुछ जानकर अपने जीवन को सफल बना सकें। आपके ज्ञान वेद भगवान की अज्ञानुसार अपना आचार बना सकें। हे प्राणनाथ ! प्राणरक्षक ! हम आज यही आपसे दान मांगते और यही वर चाहते हैं कि हमें विद्वान, बुद्धिमान और मेधावी बनावे जिससे कि हमारा अज्ञान दूर हो। जड़ता और मूर्खता भाग जायें। पाप और व्यभिचार निकट न आये। हमारे हृदय मन्दिर आपकी ज्योति से जगमगा उठें। वहाँ आपका ही प्रकाश हो आपके वैदिक ज्ञान का ही चान्दना हो। हे सर्वोत्तम ! प्रजापालक परमेश्वर ! आप हमें सत्य विद्यायुक्त मेधाबुद्धि दें हम ज्ञानयुक्त कर्म करें, जिससे कि हमारा जीवन ज्ञानमय, आनन्दमय और सुखमय हो। दयानिधे ! यही आपकी सेवा में प्रार्थना है। स्वीकार कीजिये।

ओ३म् शांति। शांति॥ शांति॥।

प्रार्थना ३

ओ भद्रं कर्णेभि श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्ष भिर्यंजत्रा
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायु ।।

(यजु० २५मं: २१)

हे देवो के देव पिता जी, कान सुने मेरे कल्याण ।
निर्मल होवें आंखें मेरी बुरी न हो देखन की बान ।।
बुद्धि मेरी करो पवित्र, ऐ प्राणों के राखनहार ।
वाणी से हो तेरी भक्ति, हे सुख सम्पति के भण्डार ।।
मन मेरा हो सदा पवित्र, आयें न इसमें बुरें बिचार ।।
रोग रहित हों प्राण हमारे, सर्वव्यापक हे कर्तार ।।
प्यारे ईश्वर भक्त जो उनकी है सदा से यह पहचान ।।
हाथी से कीड़ा तक देखें, सब जीवों को मित्र समान ।
आत्मवत् सब को ही जाने, हैं सो जग में जाननहार ।
ईश्वर भक्त उनको ही मानों सच्चे वेद धर्म अनुसार ।

हे सर्व सुखों के दाता । हम जो कुछ भी माँगेंगे, आप से ही माँगेंगे क्योंकि आप महादानी है । यह सारा जगत आपने हम जीवों के सुख और कल्याण के लिये ही बनाया है । हमको केवल मात्र आपका ही सहारा है । हे दयामय ! आप ऐसी कृपा करें कि हम आपको छोड़कर और किसी के द्वार पर न जायें । आप अपनी शरण में आने वालों की सदा रक्षा करते हो । आप अपने प्रेमियों का त्याग नहीं करते और हमें पूरा विश्वास है कि आप ऐसे कृपानिधान हैं कि जो भी सच्चे मन से आपकी भक्ति करता है आप

उसका यह जन्म और परलोक सुधार देते हैं। महाराज ! आप ऐसी कृपा करें कि हम आपको हृदय से कभी न भुलायें। सदा आपको अपने अंग संग समझें ताकि हम पापों से दूर रहकर सदा आनन्दित रहें।

जीवनदाता भगवन् ! आपको आत्मसमर्पण करने वाले सदा निष्पाप होकर परमानन्द के भागी बनते हैं। इसलिये हे प्रभो ! मैं अपनी आत्मा को अपनीं बुद्धि और मन को आपके अर्पण करदूं मेरी ज्ञानेन्द्रियां सदा आपकी आज्ञानुसार वेदोक्त कर्म करें। संसार के सकल पदार्थ हमारे लिये कल्याण कारी हों। हम उनका धर्म और न्याय से भोग करते हुये आपका यश और कीर्ति गायन करें। हमारे आत्म बुद्धि, तन और इन्द्रयों का बल पाप के अर्पण न हो बल्कि यह जगत के उपकार में लगे। हे आदि देव दातार प्रभो ! हम लोग आपकी कृपा से भद्र या कल्याण की बात, पवित्र वेद ज्ञान की कथा और शास्त्रीय उपदेशों को श्रवण करें।

हे न्यायकारी ! हम आंखों द्वारा कल्याण या मंगल सुख को सदा ही देखते आपकी पवित्र रचना का अवलोकन करें। जगत के सौन्दर्य को देखें हे पिताजी ! हम सदाचारी, सुशील और सज्जन पुरुषों का संग करें। हे जगदीश्वर ! हमारे सब अंग उपांग धर्म में स्थिर रहें। सदा बलवान और पुष्ट हों ताकि हम पूर्ण स्थिरता से आपकी स्तुति, प्रार्थना और उपासना कर सकें। हम सदा परोपकारी सज्जनों और धर्मात्मा पुरुषों की चरण सेवा में तत्पर रहें। हे पिता ! हम अपना जीवन परोपकारमय बनावें। आज हम सब मिलकर यही वर मांगते हैं ! कृपा करो। दया करो। आपकी शरण में आये हैं। हमारी प्रार्थना को स्वीकार करो जिससे कि हमारा कल्याण हो।

ओ३म् शांति ! शांति !! शान्ति !!

प्रार्थना ४

ओं तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। वीर्यमसि वीर्यमपि धेहि। बलमसि बलं मयि धेहि। ओजोऽस्योजो मयि धेहि। मन्युरसि मन्युं मयि धेहि। सहोंऽसि सहो मयि धेही॥
(यजु० १९ मं० ९)

अग्नि रूप परमेश्वर तुम तेज के भण्डार हो।
तेज हम को दीजिये तुम दयामय दातार हो॥
जोर वाले आप हो हमको भी जोरावर करो।
वीर्यवान बनाओ हमको तेज में बरतर करो॥
बलों के भण्डार भगवान जगत में हो महाबली।
तुझसे बल को ग्रहण करके जाएं जग में कर भली॥
सहन शक्ति दीजिये तुम सबकी सहनेदार हो।
सुख के अन्दर रखने वाले जग के सर्वाधार हो॥

हे तेजस्वरूप बलों के भण्डार परम पिता! आप अकेले अपनी सामर्थ्य से जगत के रचने वाले, पालन पोषण करने वाले और रक्षा करने वाले हैं। हम आपको छोड़कर किसी और की पूजा न करें। जो मान और अधिकार आपके लिए है, वह मान और अधिकार और किसी के अर्पण न करें। हे अपार दयामय दातार! आप सबके ऊँचे हैं। आपकी महिमा अकथ है। आपका न वार है न पार, भगवन्! आपका दिया हुआ धन ऐश्वर्य हमारे लिए सुखकारी हो। आपका दिया हुआ मान हमारे लिए सदैव सुखकारी हो। संसार के धारण करने वाली शक्ति, आकाश, प्राण, पृथ्वी, अग्नि, जल ये सब आनन्ददायक हों। सत्य, धर्म, कल्याणकारी नियम, प्रशंसा के योग्य गुण कर्म सब ही शान्ति के देने वाले हों। आपका दयारूपी हाथ सदैव हमारे सिरों पर रहे। विद्वानों की संगति से हम सुखी रहें। आप कल्याणकारी

साधनों से हणारी रक्षा करते रहें। हमारी बुद्धि, हमारा मन, आयु और प्राण, ज्ञान और कर्मेन्द्रियाँ सब जगत् हितकारी कामों के अपर्पण हों।

परम पिता दयालु देव ; आप हम सब पर ऐसी कृपा करें कि जिस प्रकार एक पुत्र आसानी से अपने पिता के पास पहुंच जाता है, ऐसी आसानी से हम आपके पास पहुँच जायें। हमारा आपके साथ बहुत ही निकट का सम्बन्ध हो और हम सदा ही आपके चरणों में सिर को झुकाते रहें। हे सर्वाधार स्वामिन ! किसी को किसी का भरोसा हो। कोई अपने बल, बुद्धि, ज्ञान, भुजा शक्ति के सहारे घमड करता हो परन्तु हमको तो केवल आपका ही आश्रय हो। हम निर्बलों के आप हो बल, सच्चे रक्षक और स्वामी हैं। आप ही हमको अपनी पवित्र गोद में लेकर सुख और परम शक्ति प्रदान करें।

हे सुप्रकाश और अनन्न तेज वाले प्रभो ! आप तेजस्वरूप हैं अपनी कृपा से हम में भी तेज धारण करो। हमें तेजस्वी बनाओ हम अपने आपको कभी भी दीन, हीन और क्षीण न समझें। किसी और के आगे हाथ न फैलायें। हे अनन्तवीर्य परमात्मन् ! आप वीर्यवान हो। वही सर्वोत्तम बल हम में भी स्थिर कीजिए। हम भी पराक्रमी, शक्तिशाली और वीर बनें। आप दुष्टों पर क्रोध करने वाले हैं उनको ताड़ना करने वाले और पापियों को नापने वाले हैं, हमें भी उन पर क्रोध धारण कराओ। हे सहनशील परमदेव ! आप मित्र शत्रु सज्जन और दुष्ट स्वभाव जनों की प्रत्येक प्रकार की बुरी चेष्टाओं को सहन करते हैं। हमें भी आप सहन करने की सामर्थ्य दें। हे पिता ! हम पुत्रों को भी तेजस्वी, वर्चस्वी, ओजस्वी, पराक्रमी, बलवान, वीर्यवान और सहनशील बनाईये। हमारी यही कामना है। इसको पूर्ण करो। पूर्ण करो !! पूर्ण करो !!! ओ३म् शान्ति ! शान्ति!! शान्ति !!!

प्रार्थना ५

ओं स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपादनो भव । सचस्वा न स्वस्तये ।। (यजु० ३ मं० २४)

जिस मन में प्रभु प्रेम है श्रद्धा भक्ति अपार।
निश्चय ऐसे भक्त को आप प्रभु लें सार ।।
सोने से चलना भला कुछ मार्ग कट जाए।
साथी जो देखा करे निष्फल काम बिताए।।
सोये न चलता रहे प्रभु प्रेम मन लाए ।
क्या जाने करुणानिधि साथी दे मिलाए ।।
दुर्गम मार्ग जान कर जो कायर डर जाए ।
बैठा देखे साथ को आखिर को पछिताए ।।

हे जगदीश पिता करुणानिधान ! आप हमारे पूज्य पिता हैं। आप परम पालक और जगत के पैदा करने वाले हैं आप सब की रक्षा करते और सब प्रकार के सुख देते हैं। आप सारे चराचर जगत को जानते हैं। आप सर्वत्र व्यापक हैं। आप सूर्यादि लोक लोकान्तोंर को नियम में चलाने वाले और प्राणीमात्र का पालन पोषण करने वाले हैं। आप ही सकल संसार के शासक हैं। आप ही प्रजापति, प्रजापक और सबके स्वामी हैं। हे दातार ! हम पर अनुग्रह करो कि हम अपने जीवन की देखभाल कर सकें। इस अमोलक मनुष्य जन्म को मीठा, रसमय और मधुमय बनावें। और उसके चार फलों धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होवें। अपने तन, मन, धन और आत्मा को आपके अर्पण करें। प्रभो ! हम आपके होकर रहें। आपके बन कर जियें। आपका यश गान करें तथा आपकी आराधना करें। आपकी भक्ति करें। आपकी वन्दना का रस पान करें। प्यारे पिता ! वरदान दो कि हमारा कल्याण हो, हमें सुख और शान्ति प्राप्त हो। आप हमारे परम मित्र हो, हम को सर्वदा सुख देने वाले हो। हम को दुष्टों के अत्याचार से बचाये रखें

आप हमको स्थिर रहने वाला सुख प्रदान करें। हमको उत्तम बुद्धि और पराक्रम प्रदान करें।

महान् प्रभो ! सदा एक रस रहने वाले परमात्मन् । आप सब का पालन पोषण करने वाले हैं। आपकी परम कृपा से जो जीवन हमें प्राप्त हुआ है हमें सुमति प्रदान करो कि हम इस अमूल्य जीवन को विषय विकारों और पापों से नष्ट न करें। यह धन सम्पत्ति, नाना प्रकार के सुख हमारे बल और बुद्धि के कारण नहीं बल्कि यह सब आपकी कृपा का फल है, आप हमें कृपा का पात्र बनायें। आपके दिये धन परिवार, सन्तान और सुख-भोगों को पाकर हम आपको भूल न जायें बल्कि आपकी याद सदैव हमारे मन में रहे और हम सदा आप का धन्यवाद गाते रहें। हम अपने सब कर्मों को आपके चरणों में समर्पण कर दें। हमारा जीवन यज्ञरूप हो। हमारी इन्द्रियाँ निर्दोष हों। प्राणिमात्र का कल्याण हमारे जीवन का उद्देश्य हो। निष्पाप होकर हम इस जीवन यात्रा को समाप्त करें।

महाराज ! हम बलहीन हैं। आपकी सहायता के बिना आगे नहीं बढ़ सकते। आप हमारी स्नेहमयी माता हैं। परम हितकारी हैं। इसलिए हमें धर्म मार्ग पर चलना सिखलायें। यह मार्ग विषयों की चमक से चकाचौंध हो रहा है और धर्म का स्वरूप कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता। हमारी ज्ञान की आंखें चुंधिया गई हैं। जब हम कुछ आगे बढ़ने का यत्न करते हैं यह काम, क्रोध आदि विषय कई प्रकार के रूप बनाकर हमें फंसा लेते हैं और हम पाप के गढ़े में पड़ कर दुःख और क्लेश उठाते हैं। हे दीनबन्धो ! ऐसी कृपा करो कि हम यही वर आपसे मांगते रहें। प्रभो ! कृपा करो। दया करो। ओ3म् शान्ति !

प्रार्थना ६

ओं अग्ने व्रतपते व्रतं चरिस्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्
हृदयहमनृतात् सत्यमुपैमि ॥ (यजु० १ मं० ५)

ज्ञान तू ही और गुरु तू ही मुक्ति आनन्द।
जर्रे जर्रे में रम रहा पूर्ण परमा नन्द ॥
दीनबन्धु करुणानिधे भक्तन के प्रतिपाल।
नाथ वेग सुध लीजिये कृपा सिन्धु कृपाल ॥
हृदय मन्दिर में ध्रुव ज्योति ज्ञान जगाये।
प्रेम धूप तप अग्नि से सत्य ज्ञान दिखलाये ॥

ज्ञान स्वरूप ! व्रतों के स्वामी। दयानिधे कर्तार ! आप ज्ञान स्वरूप हैं। सच्चिदानन्द हैं। आपका प्रकाश सूर्य, चन्द्र, विजली और अग्नि आदि में चमक रहा है। हे प्रकाश के स्रोत ! हमारे हृदय मन्दिर में आपकी ज्योति का प्रकाश है। सत्य, ज्ञान और वेद ज्ञान का दीपक हमारे मन मन्दिर में प्रकाशवान हो, जिसके प्रकाश में हम ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ व संन्यास आदि व्रतों का पालन भली प्रकार कर सकें। आप हमको इन सच्चे व्रतों की ओर आचरण करने की शक्ति प्रदान कीजिए। हे प्रकाशमय प्रेम के भण्डार। मैं आज व्रत लेता हूं कि असत्य को ग्रहण करूगा: अविद्या अहंकार कों मिटाकर प्रकाश की ओर पग वढ़ाऊंगा। पाप को त्याग कर शुभ कर्मों से जीवन व्यतीत करूगा, अभिमान को छोड़कर नम्रतापूर्वक संसार की सेवा का प्रण धारण करूंगा। मैं आज से सत्यमानी, सत्यकारी और सत्यवादी वनने का यत्न करूंगा। मैं सर्वदा सत्य वोलूंगा और प्यारा सत्य बोलूंगा। कृपा करो। मेरा यह व्रत सफलता को प्राप्त हो। हम कुमार्ग को छोड़ कर सत्य मार्ग के यात्री बनें। मृत्यु से भय के वचें और अमर पद को प्राप्त हों।

प्यारे पिता ! आप अमर हैं, हमें भी मृत्यु के पंगे से छुड़ाकर अमर बनाओ। प्रभो ! सचमुच मैं आपका अमृत पुत्र कहलाने का अधिकारी बनूं।

हे अग्ने ! ज्ञान सागर ! हम आपकी ही उपासना करें, आप को ही नमस्कार करें। आपका ही चिन्तन और आपका ही कीर्तन करें प्रतिदिन दोनों सन्ध्याओं में आपके दरबार में ही उपस्थित हों। आपके सिवा किसी को पूज्य न मानें। किसी दूसरे की उपासना न करें। कोई देवी देवता हो या पैगम्बर, गुरु हो या अवतार, आपके स्थान पर किसी की पूजा न करें। हे परम गुरु ! हमें ऐसा उपदेश गुरुमंत्र सिखाओ। ऐसी शिक्षा दो कि हम जड़ पदार्थों और साकार मनुष्यों की भक्ति से हटकर आपके प्रकाश स्वरूप और आनन्द स्वरूप का संग करें। हे धर्म, ज्ञान और बलों के अखण्ड भण्डार ! यह तीनों पदार्थ हमें प्रदान कीजिये। धर्म हमारी आत्मा के लिए शान्तिदायक हो। ज्ञान धर्म के मार्ग को स्पष्ट रूप से दिखलाने वाला हो और कर्त्तव्य मार्ग प्रकाश करें।

प्रभो ! आपने वेदों में बताया है कि इन्द्रियों को वश में में रखना, पुण्य कर्म करना, दान देना, प्राणिमात्र को मित्र की दृष्टि से देखना तथा सबका हितचिंतक करना धर्म कहलाता है। आप हमें इस धर्म को धारण करने का बल प्रदान करें। हमें अपना अमृत पुत्र और धर्म पुत्र होने का अधिकार प्रदान करें। धर्म को जानने के लिए पवित्र सच्चे निर्मल ज्ञान की आवश्यकता है और वह ज्ञान वेदादि सत्शास्त्रों से ही प्राप्त हो सकता है, इसलिए हे पिता ! आप हमारी रुचि सद्ग्रन्थों के पाठ में बढ़ायें। आज से हमारे स्वाध्याय में कोई बुरा ग्रन्थ, सृष्टि नियम के विरुद्ध पुस्तक, आचार को विगाड़ने वाले किस्से कहानियाँ और मनुष्यों में वैर विरोध फैलाने वाले मतों के ग्रन्थ न हों अपितु जीवन को पवित्र करने वाले और प्राणिमात्र का उपकार चाहने वाले ग्रन्थ हों जिनको पढ़ने का व्रत धारण करके हम अपने जीवन को सफल बना सकें। यही आपसे याचना है और यहीं प्रार्थना है। ओं शांति।

प्रार्थना ७

ओ३म् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान । युयोध्यस्यज्जुहूराणमेनो भूयिष्ठांते नम उक्ति विधेम ॥ (यजु० ४० मं० १६)

एक ओ३म् कर्त्ता पुरुष सत नाम कर्त्तार ।
अचल अखण्ड आदि गुरु किया ज्ञान विस्तार ॥

दयासिन्धु करुणानिधि हर घट वास निवास ।
नस नाड़ी बन्दन नहीं निर्मल शुद्ध प्रकाश ॥

तात तू ही पितु मात तू ही, हो सखा तुम एक ।
फिर भय काहे का मुझे तुम रक्षक की टेक ॥

देखूं तुझको हर जगत जहाँ दृष्टि जाय ।
दूजा नहीं है बिन प्रभु जिनके लागूं पाय ॥

अग्ने स्वरूप परमेश्वर ! आपने संसार को बनाकर मनुष्यों को सन्मार्ग दिखलाने के लिए वेदों का प्रकाश किया । वेद आपका सुन्दर काव्य है वह मानों आपका जीवन चरित्र है, आपके गुणों का प्रकाश है। इसलिए हम मनुष्यों के जीवन चरित्र को छोड़ कर आपके जीवन चरित्र वेद का नित्य स्वाध्याय करें । इस जीवनदायक अमृत का प्रतिदिन पूर्ण प्रीति और श्रद्धा से सेवन करते रहें । स्वाध्याय के बिना आपकी उपासना अधूरी है, स्वाध्याय से ही ज्ञान चक्षु खुलते हैं । इसी से आत्मा का अन्धकार नष्ट होता है और स्वाध्याय से ही पाप और पुण्य का यथार्थ ज्ञान मिलता है । स्वाध्याय ही परम तप है ।

प्रभो ! बल दो कि हम इस परम तप का आदर सम्मान करें । वेद का पढ़ना, पढ़ाना और सुनना सुनाना अपना परम धर्म समझें । अन्धेर रात्रि में प्रकाश की आवश्यकता होती है नहीं तो यात्रा में ठोकर खानी पड़ती हैं । गढ़ों

में गिरना पड़ता है, और अंगों के चकनाचूर होने का भय रहता है। धर्म का मार्ग तेज खण्ड की धार, अति सूक्ष्म और कठिन है यदि इसके साथ अज्ञान का अंधेरा भी सम्मिलित हो तो इस पर निर्विघ्न चलना कठिन ही नहीं, असम्भव भी है। इस मार्ग में तो ऋषि दयानन्द जैसे तपस्वी का ही निर्विघ्न पग चल सकता है जो कि आपके वेद रूपी ज्ञान का सच्चा भक्त हो। प्रभो ! हममें भी वेदों के लिए सच्ची भक्ति प्रदान कीजिए, हमारे मन में तो धर्म ग्रन्थों के पाठ की रुचि ही नहीं और यही हमारे पतन का कारण है तथा यही दुर्बलता का हेतु है।

हे ज्ञान पिता ! हमारे ज्ञान नेत्र खोल दीजिए जिससे आपके प्रेममय स्वरूप को देखकर हृदय प्रसन्न हो जाए, आपकी भक्ति का रसपान करके तृप्त हो जायें। हे सर्वान्तर्यामी ! आप हमारे पापों को, बुरी कामनाओं और दुष्ट संकल्पों को जानते हैं। आप हमारे हृदय की मैल को, इन्द्रियों की निर्बलताओं और त्रुटियों को जानते हैं परन्तु इतना जानते हुए भी, हे पतित पावन ! आप हमारा परित्याग नहीं करते। पूर्ववत् भोग पदार्थ दिए जाते हैं। धन्य-धन्य हो दयामय भगवान ! तुम धन्य हो।

हे दयासिन्धो ! हम आपकी पवित्र शरण में आ गये हैं। हमें पाप के राक्षस्ल से बचाओ पुण्य का मार्ग बतलाओ। हमें पुण्यात्मा बनाओ, बलवान हृदय और निर्मल चरित्र बनाओ। दुःखी हृदय को शान्त करो। हमारा जीवन मिठास भरा हो। मन पापों की मैल से साफ हो। शुद्ध और निर्मल हो। हमारे हृदय में आपका सिंहासन हो इसमें आपकी ज्योति का प्रकाश हो। हम आप के मंगल स्वरूप को देखकर अपना जीवन सफल करें। विषय विकारों को त्याग कर आपके सच्चे भक्त और दास बनें। आपके अपार प्यार और कृपा के भागी बनें। यही आज आपकी सेवा में प्रार्थना करते हैं। आशा है, आप इस को स्वीकार करेंगे। ओ३म् शांतिः।

प्रार्थना ८

ओं येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीत मृतन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्त होता तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तुः ।
(यजु० ३४ मः ४)

दूर नहीं यह परम पद जो मन निर्मल होय ।
काम क्रोध और लोभ तज देख सके सब कोय ।।

ऐ मन अब मत कीजिए दुष्ट जनों का संग ।
पग पग आतम दूर हो पड़े रंग में भंग ।।

हृदय मन्दिर में रहो तुम परमात्म देव ।
मेरे मन को शुद्ध करो करूं तुम्हारी सेव ।

मन वाणी और कर्म हो सभी देवानुकूल ।
अन्याय से दूर रहूं ईश्वर जाए ना भूल ।।

दयामय दातार ! हमारे मन अति मलीन हैं । इसलिए हमारे कर्म भी दोषों से भरे हुए हैं । हमारा हृदय प्रेम से खाली हैं । मन की मलीनता और हृदय की दुर्बलता से अच्छे कर्म हो नहीं सकते । हे प्रभो ! कृपापूर्वक हमारे मनों को शुद्ध और हृदय को बलवान बनाइये । हमें शुभ कर्म करने का बल और बुद्धि प्रदान कीजिए । हमें ऐसा ज्ञान दीजिए जो हमारी बुद्धि और मन को बलवान बनाएं । हमारे कर्मों का सदा उत्तम फल हो । हम प्रत्येक अवस्था में आपका धन्यवाद करें और यही अनुभव करें कि हमारे शुभ कर्मों में आपकी कृपा का हाथ काम कर रहा है । हमारी प्रत्येक अवस्था और प्रत्येक कर्म आपके प्रेम को प्रकट करता रहे ताकि हम शुभ कर्म करते हुए पापों से रहित रहें । हम कोई काम किसी लोभ के वश में होकर न करें अपितु वे सबके सब आपके अर्पण हों हम अपने आपको आपका अमृतपुत्र समझने का यत्न करें और अपने कर्तव्य कर्मों को धर्मपूर्वक पूरा करने का यत्न करें । हमारा आप पर अटल विश्वास हो ।

हे विश्वपति व्यापक प्रभो ! हम सब आपको नमस्कार करते हैं। हम प्रेमपूर्वक प्रेम भक्ति द्वारा बड़ी श्रद्धा से आपकी वन्दना करते हैं हम इस पवित्र वेला में सिर झुकाकर सच्चे हृदय से आपको प्रणाम करते हैं। आपने हमें इस जीवन यात्रा करने के लिए शरीर रूपी रथ प्रदान किया है ! आपने हमको संसार के सब कामों को समझने के लिए ज्ञानेन्द्रियां और कर्म करने के लिए कर्मेन्द्रियां दे रखी हैं। इनसे उचित काम लेने वाला इनका राजा मन को बनाया है। हे महान दाता जगदीश ! यह हमारा मन जो जगते समय और सोते समय दूर-दूर चला जाता है, जो ज्योतियों की एक ज्योति है, जो विचित्र और अनोखी शक्ति वाला और शीघ्रगामी है। हे प्रभु ! यह हमारा मन शुभ विचारों वाला हो। जिस मन में सब लोग नेक भलाई के कामों में रणक्षेत्रों और दूसरे कठिन कामों में सफलता प्राप्त करते हैं। जो बड़ा शक्ति वाला है। यह हमारा मन शुभ विचारों और शुभ व्यवहारों वाला हो।

हे शुद्ध स्वरूप परमात्मा ! जिस मन के बिना संसार का कोई भी काम नहीं किया जा सकता, जिस मन ने ज्ञान और कर्मेन्द्रियों का यज्ञ रचा रखा है उस मन में सदा शुभ कामनाएं और कल्याणकारक विचार उत्पन्न हों। कृपा करो कि हमारा मन हमारे वश में हो; वह शुद्ध बुद्धि के अधीन रहे। आत्मा का शासन मानने वाला हो। वह हमें अभीष्ट स्थान पर पहुंचा देवे। हमारा जीवन सफल हो। उद्देश्य पूर्ण हों, सच्चा आनन्द प्राप्त हो। हे दीन बन्धु ! हमारी यही हार्दिक अभिलाषा है। आशा है आप इसको स्वीकार करेंगे। ओ३म शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

प्रार्थना ९

ओ३म तच्चक्षु देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं, शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीना स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥

(यजु ३६ मं: २४)

हो आंखों की आंख पिताजी,
देवों के महादेव पिताजी।
महिमा देखें सौ वर्ष तक,
सुनें कीर्तन सौ बरस तक।
सुख से जीवें सौ बरस तक,
ध्यावें ईश्वर सौ बरस तक।
प्रेम लीन हों सौ वर्ष तक,
स्वाधीन हों सौ वर्ष तक।
सौ वर्ष से ज्यादा जीवें,
ओ३म् नाम रस अमृत पीवें।

जगत के रचने वाले परमपिता ! यह जीवन, यह मनुष्य जन्म हमें यूं ही नहीं मिल गया अपितु यह किसी विशेष उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए मिला है। पिछले जन्मों के शुभ कर्मों के फलस्वरूप ही हम मनुष्य जीवन के अधिकारी बने हैं और यह शुभ कर्म ही हमें मरण के दुःख से छुड़ाकर मुक्ति पद तक पहुंचा देंगे। आप ही हमारे अन्तरात्मा में विराजमान होकर हमें शुभ कर्मों की ओर प्रेरित करते हो। शुभ कर्मों का ज्ञान और उनको कमाने का बल भी आपके द्वारा ही मिलता है। आपने वेद द्वारा यह उपदेश दे रखा है कि हे मनुष्यो ! शुभ कर्मों को करते हुए और अपने पड़ोसियों से शान्तिपूर्वक व्यवहार करते हुए सौ वर्ष तक जीवित रहने का पुरुषार्थ करो। पराये अधिकार को अन्याय से लेने की इच्छा भी न करो। आपकी यह पवित्र आज्ञा

अवश्य सफल होगी। आपका नाम लेने से पाप कोसों दूर भाग जाते हैं। मन अन्तर्मुख होकर आत्मा को बल प्रदान करता, और बलवान आत्मा ही शुभ कर्मों में प्रवृत्त हो सकती है।

हे सफल आनन्ददायक सकल दुःख विनाशक प्रभो ! आप सर्वत्र विराजमान सब कुछ जगह देखने वाले हैं। विद्वानों के हितचिन्तक और कल्याणकारी हैं। आप सृष्टि के पूर्व भी विद्यमान रहते हैं। आप बलस्वरूप और शुद्धस्वरूप हैं। आप सर्वव्यापक और प्रलय के पीछे भी रहने वाले हैं। कृपासागर ! आपकी अति पवित्र कृपा से हम सौ वर्ष तक आंखों से देखते रहें। सौ वर्ष तक जीते रहें। सौ वर्ष तक आपका यशगान करते रहें। आपके प्रेम में आयु भर मग्न और लीन रहें। सौ वर्ष तक स्वतन्त्र होकर जीवन व्यतीत करें। हमारी आत्मा, इन्द्रियाँ और मन का दास न हो। हम सौ वर्ष से भी अधिक काल तक जीते रहें और अपनी आयु का एक एक क्षण आपकी याद में गुजार दें !

दयालु पिता ! यही हमारी हार्दिक इच्छा है, यही कामना है और यही आपकी पवित्र सेवा में नम्र प्रार्थना है। हे प्रभो ! आप सर्व बलों के भण्डार, सब शक्तियों के पुञ्ज और सब वरों के दाता हैं। जो भी सच्चे दिल से आपके द्वार पर आया और आपके आदेश अनुसार जिसने, जीवन बनाया उसका जीवन सफल हो गया। वह निहाल हो गया। हम भी आपकी शरण में शुद्ध भक्ति पूर्ण भावों को लेकर आये हैं। प्रभो ! हमारी इच्छा पूर्ण करें, कामना सिद्ध करें और हमारी नम्र प्रार्थना को स्वीकार करें ! स्वीकार करें !! स्वीकार करें !!!

ओ३म शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

भजनावली

भजन नं० १

मेरे देवता मुझको देना सहारा
कहीं छूट जाए ना दामन तुम्हारा ॥

तेरे रास्ते से हटाती है दुनियां
इशारे से मुझ को बुलाती है दुनियां
मैं देखूं न जग का झूठा इशारा ॥कहीं॥

बिना तेरे मन में समाए न कोई
लगन का यह दीपक बुझाए न कोई ॥
तूही मेरी नैया तू ही है किनारा,
कहीं छूट जाए न दामन तुम्हारा ।

तुम्हारे सदा गीत गाते रहें हम,
प्रभु जो तुम्ही को रिझाते रहें हम ।
तेरा नाम हमको प्राणों से प्यारा ॥कहीं॥

भजन नं० २ (आरती)

जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।
भक्त जनों के संकट, क्षण में दूर करे ॥१॥

जो ध्यावे फल पावे, दुःख विनसे मन का ।
सुख सम्पत्ति घर आवे, कष्ट मिटे तन का ॥२॥

मात पिता तुम मेरे, शरण गहूं मैं किस की ।
तुम बिन और न दूजा, आस करूं मैं जिसकी ॥३॥

तुम पूर्ण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी ।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सब के स्वामी ॥४॥

तुम करुणा के सागर, तुम पालनकर्त्ता।
मैं सेवक तुम स्वामी, कृपा करो भर्त्ता।।५।।
तुम हो एक अगोचर सबं के प्राणपति।
किस विध मिलूं दयामय, तुमको मैं कुमति।।६।।
दीनबन्धु दुःखहर्त्ता, तुम रक्षक मेरे।
अपने हाथ से उठाओ, द्वार पड़ा तेरे।।७।।
विषय-विकार मिटाओ, पाप हरो देवा।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा।।८।।

भजन नं० ३

हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिये।
दूर करके हर बुराई को, भलाई दीजिए।।१।।
ऐसी कृपा और अनुग्रह, हम पै हो परमात्मा।
हों सभासद इस सभा के, सब के सब धर्मात्मा।।२।।
हो उजाला सबके मन में, ज्ञान के प्रकाश से।
और अन्धेरा दूर सारा, हो अविद्या नाश से।।३।।
खोटे कर्मों से बचें और तेरे गुण गावें सभी।
छूट जावें दुःख सारे, सुख सदा पावें सभी।।४।।
सारी विद्याओं को सीखें, ज्ञान से भरपूर हों।
शुभ कर्म में होवें तत्पर, दुष्ट गुण सब दूर हों।।५।।
यज्ञ हवन से हो सुगन्धित, अपना भारतवर्षं देश।
वायु जल सुखदाई होवें, जाएँ मिट सारे क्लेश।।६।।
वेद के प्रचार में, होवें सभी पुरुषार्थी।
होवें आपस में प्रीति, और बनें परमार्थी।।७।।
लोभी और कामी क्रोधी, कोई भी हम में न हो।
सब व्यसनों से बचें, और छोड़ देवें मोह को।।८।।

अच्छी संगत में रहें, और वेद मार्ग पर चलें।
तेरे ही होवें उपासक, और कुकर्मों से बचें ॥९॥
कीजिए हम सबका हृदय, शुद्ध अपने ज्ञान से।
मान भक्तों में बढ़ाओ, सबका भक्त दान से ॥१०॥

भजन नं० ४

पितु मातु सहायक स्वामी सखा तुम ही इकनाथ हमारे हो।
जिनके कछु और आधार नहीं, तिनके तुम हीं रखवारे हो ॥
सब भाँति सदा सुखदायक हो, दुःखदुर्गुण नासन हारे हो।
प्रतिपाल करो सगरे जग को, अतिशय करुणा उरधारे हो ॥
भूले हैं हम ही तुमको, तुम तो हमरी सुधि नाहिं बिसारे हो।
उपकारन को कछु अन्त नहीं छिन ही छिन जो विस्तारे हो ॥
महाराज महा महिमा तुम्हरी, समुझें विरले बुद्धि वारे हो।
शुभ शान्ति-निकेतन प्रेम निधे मन मन्दिर के उजियारे हो ॥
इस जीवन के तुम जीवन हो, इन प्रानन के तुम प्यारे हो।
तुम सो प्रभु पाय प्रताप हरी, किहिं के अब और सहारे हो ॥

भजन नं० ५

जय जय पिता परम आनन्द दाता।
जगदादि कारण मुक्ति प्रदाता ॥१॥
अनन्त और अनादि विशेषण हैं तेरे।
सृष्टि का स्रष्टा तू धर्त्ता संहर्त्ता ॥२॥
सूक्ष्म से सूक्ष्म तू है स्थूल इतना।
कि जिसमें ब्रह्माण्ड सारा समाता ॥३॥
मैं लालित व पालित हूं पितृस्नेह का।
यह प्राकृत सम्बन्ध है तुझसे त्राता ॥४॥

करो शुद्ध निर्मल मेरी आत्मा को।
करूँ मैं विनय नित्य सायं व प्रातः ॥५॥

मिटाओ मेरे भय आवागमन के।
फिरूँ न जन्म पाता और बिलबिलाता ॥६॥

बिना तेरे है कौन दीनन का बन्धु।
कि जिसको मैं अपनी अवस्था सुनाता ॥७॥

अ,मी' रस पिलाओ कृपा करके मुझको।
रहूं सर्वदा तेरी कीर्ति को गाता ॥८॥

भजन नं० ६

सुखी बसे संसार सब, दुखिया रहे न कोय,
यह अभिलाषा हम सबकी, भगवन पूरी होय।
विद्या बुद्धि तेज बल सबके भीतर होय,
दूध पूत धन धान्य से वंचित रहे न कोय।
आपकी भक्ति प्रेम से मन होवे भरपूर,
राग द्वेष से चित मेरा कोसों भागे दूर।
मिले भरोसा नाम का हमें सदा जगदीश,
आशा तेरे धाम की बनी रहे मम ईश।
पाप से हमें बचाइये करके दया दयाल,
अपना भक्त बनाय कर, सबको करो निहाल।
दिल में दया उदारता, मन में प्रेम अरू प्यार,
हृदय में धैर्य्य वीरता सबको दो करतार।
नारायण तुम आप हो, पाप के मोचन हार,
क्षमा करो अपराध सब कर दो भव से पार।
हाथ जोड़ विनती करें सुनिये कृपा निधान्,
साध-संगत सुख दीजिये, दया नम्रता दान।

भजन नं० ७

आज मिल सब गीत गाओ, उस प्रभु के धन्यवाद ।
जिसका यश नित गाते हैं गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद ॥१॥
मन्दिरों में कन्दरों में पर्वतों के शिखर पर ।
देते हैं लगातार सौ सौ, बार मुनिवर धन्यवाद ॥२॥
करते हैं जंगल में मंगल पक्षिगण हर शाख पर ।
पाते हैं आनन्द मिल गाते हैं, स्वर भर धन्यवाद ॥३॥
कुए में तालाब में, सागर की गहरी धार में ।
प्रेम रस में तृप्त हो, करते हैं जलचर धन्यवाद ॥४॥
शादियों में कीर्तनों में, यज्ञ और उत्सव के आदि ।
मीठे स्वर से चाहिए, करें नारी-नर सब धन्यवाद ॥५॥
गान कर अमींचन्द, भजनानन्द ईश्वर की स्तुति ।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोते कान धर-धर धन्यवाद ॥६॥

भजन नं० ८

मुझे वेद धर्म से है पिता,
सदा इस तरह का प्यार दे ।
कि न मोड़ूं मुंह कभी उससे मैं,
कोई चाहे सिर भी उतार दे ॥१॥
वह कलेजा राम को जो दिया,
वह जिगर जो बुद्ध को अदा किया ।
वह फराख दिल दयानन्द का,
घड़ी भर मुझे भी उधार दे ॥२॥
न दुश्मनों से मुझे गिला,
करूँ मैं बदी की जगह भला ।
मेरे दिल से निकले सदा दुआ,
कोई चाहे कष्ट हजार दे ॥३॥

न हो मुझको ख्वाहिशे मर्तबा,
न हो मालो जर की हविस मुझे।
मेरी उमर खिदमते खल्क में,
परमात्मा ! तू गुजार दे ॥४॥
मुझे प्राणिमात्र के वास्ते,
करो शोजे दिल वह अदा पिता।
जलूं उनके गम में मैं इस तरह,
कि न खाक तक भी गुबार दे ॥ ॥
मेरी ऐसी जिन्दगी हो बसर,
कि हूं सुर्खरू तेरे सामने।
न कहीं मुझे मेरा आतमा ही,
यह शर्म लैलो निहार दे ॥६॥
न किसी का मर्तबा देखकर,
जले दिल में नारे हसद कभी।
जहाँ पर रहूं, रहुं मस्त मैं,
मुझे ऐसा सब्रो करार दे ॥७॥
लगे जख्म दिल पै अगर किसी के,
तो मेरे दिल में तड़प उठे।
मुझे ऐसा दे दिले दर्द रस,
मुझे ऐसा सीना फिगार दे ॥८॥
है 'प्रेम' की यही कामना,
यही एक उसकी है आरजू।
कि वह चन्द रोजा हयात को,
तेरी याद में ही गुजार दे ॥९॥

भजन नं० ९

प्रभु मेरे शरण तेरी मैं आया।
भजन बाजों जन्म विरथा गवाया।

प्याला प्रेम का हमको पिलाओ।
पिता पुत्रम हमें सच्चा बनाओ।
हुक्म सारे बजा लावें तुम्हारा।
सफल जीवन तभी होवे हमारा।
बिना तेरे नहीं कोई हमारा।
करो कृपा मैं लड़ फड़या तुम्हारा।

भजन नं० १०

हे जगत पिता ! हे जगत प्रभु !
मुझे अपना प्रेम और प्यार दे।
तेरी भक्ति में लगे मन मेरा,
विषय कामना को विसार दे।
मुझे ज्ञान और विवेक दे,
मुझे वेद प्रेम दे हे पिता।
मुझे मेधा दे मुझे विद्या दे,
मुझे प्रज्ञा और विचार दे।
मुझे यश दे और मुझे तेज दे,
मुझे बल दे और आरोग्यता।
मुझे आयु दे मुझे पुष्टि दे,
मुझे शोभा लोक मंझार दे।
मुझे धर्म कर्म से प्रेम हो,
तजूं सत्य को न कभी भी मैं।
कोई चाहे सुख दे घना मुझे,
कोई चाहे कष्ट हजार दे।
कभी दीन हूं न जगत में मैं,
मुझे दीजे सच्ची स्वतन्त्रता।
मेरे फन्द पाप के काट दे,
मुझे दुःख से पार उतार दे।

रहूं मैं अभय न हो मुझको भय.
किसी मित्र और अमित्र का।
तेरी रक्षा पर मुझे निश्चय हो,
मेरे भीरूपन को तू टार दे।
मुझे दुश्चरित से परे हटा,
सुचरित का भागी बना मुझे।
मेरे तन को वाणी को शुद्ध कर,
मेरे सकल कर्म सुधार दे।
मेरे हृदय लोभ से रहित हो,
मिले मुझको शान्ति हर जगह।
मेरे शत्रुगण सुमति गहें,
कुमति को उनकी निवार दे।
तेरी आज्ञा में रहू मैं सदा,
तेरी इच्छा में रहे सर झुका।
कभी दबे 'शाद' अधीरता,
मैं तो इसको तू ही उभार दे।

भजन नं० ११

विनम्र-विनय

तुम हो प्रभु चाँद मैं हूं चकोरा।
तुम हो कमल फूल मैं रस भौंरा ।।१।।
ज्योति तुम्हारी का मैं हूं पतंगा।
आनन्द घन तुम हो मैं वन का मोरा ।।२।।
जैसे है चुम्बक की लोहे से प्रीति।
आकर्षण करे मोहि लगातार तोरा ।।३ ।।
पानी बिना जैसे हो मीन व्याकुल।
ऐसा ही लड़पाऐ तेरा बिछोड़ा ।।४।।
इक बूंद जल का मैं प्यासा हूं चातक।
अमृत की करो वर्षा हरो ताप मोरा ।।५।।

।। ऋग्वेद का अन्तिम

सं समिद्य् वसे वृषन्नग्ने वि
इडस्पदे समिध्यसे स नो वसून्

हे प्रभो तुम शक्तिशाली हो बना
वेद सब गाते तुम्हें हैं कीजिए ध

संगच्छध्वं सवदध्वं सं वो मनांसि
देवा भागं यथा पूर्वे सं जा ना

प्रेम से मिलकर चलो बोलो सभी
पूर्वजों की भांति तुम कर्त्तव्य के

समानो मंत्रः समितिः समानो, समानं म
समानं मंत्रमभि मंत्रये वो समानेन

हों विचार समान सबके चित्त मन
ज्ञान देता हूं बराबर भोग्य पा

समानी व आकूतिः समाना हृद
समानमस्तु वो मनो यथा वः सु

हों सभी के दिल तथा संकल्प अ
मन भरे हों प्रेम से जिससे बढ़ें सु

शान्ति पाठ

ओं द्यौ शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पथिवी शा
शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्ति
शान्ति शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्ति

समाज के नियम

र जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका
: है।

स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी,
अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार,
क, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य,
र्त्ता है, उसी की उपासना करने योग्य है।

ओं की पुस्तक है, वेद का पढ़ना-पढ़ाना और
आर्यों का परम धर्म है।

रने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना

ार अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करना

कार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात्
मक और सामाजिक उन्नति करना।

र्मानुसार यथायोग्य व्यवहार करना चाहिये।

और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

ी उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिये, किंतु
में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र
और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र